बृहद

ज्यौतिषसार

भाषा-टीका सम्पूर्ण



बृहद ज्यौतिषसार

सामुद्रिकादि-वैशिष्ट्यसहितः

बृहज्ज्यौतिषसारः

हिन्दी अनुवाद सहित



संपादक

मिथिलादेशस्य-चौगमानिवासिना
सिसईस्थ-सन्ततुलसीदासविद्यालयाध्यापकेन
ज्यौतिषाचार्यपण्डितश्रीसीतारामझाशर्मात्मजेन

ज्यौ. आ. श्रीरूपनारायणशर्मणा



प्रकाशक

सावित्री ठाकुर प्रकाशन

रथयात्रा चौराहा, वाराणसी-२२१०१०
ब्रान्च – के. ६७/८२, नाटीइमली, वाराणसी
दूरभाष – *रथयात्रा* : ३२५७३०९, *नाटीइमली* : ३२५७६०९

मूल्य : ७०/- रुपये

सन् २०१०

मुद्रक : सावित्री प्रिन्टिंग प्रेस, वाराणसी।

प्राक्कथन

सिद्धान्त-संहिताहोरारूपस्कन्धत्रयात्मकम्।
वेदस्य निर्मलं चक्षुर्ज्योतिःशास्त्रमकल्मषम्।।
विनैतदखिलं श्रौतं स्मार्तं कर्म न सिद्ध्यति।
तस्माज्जगद्धितायेदं ब्रह्मणा निर्मितं पुरा।।
सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग् भवेत्।।

संसार में सब प्राणि सुखी रहें, सब निरोग रहें, सब अपना कल्याण देखें, कोई भी दुःखी न हो इसी कामना के महर्षियों ने शास्त्र पुराणादिकों की रचना की। उन समस्त शास्त्रों में ज्यौतिषशास्त्र सर्वश्रेष्ठ वेदों का निर्मल नेत्र माना गया है। क्योंकि इसी शास्त्र से देश, दिशा और काल का ज्ञान होता है। बिना इन तीनों के ज्ञान से संसार में सामाजिक, राजनैतिक या धार्मिक कार्यों की सिद्धि ही नहीं हो सकती है। इस शास्त्र के दो विभाग हैं, एक सिद्धान्त (गणित) और दूसरा फलित।

स्वभावतः लोगों को समय का शुभाशुभत्व तथा अपने जीवन की भविष्य घटना जानने की इच्छा हुआ करती है, किन्तु बिना त्रिस्कन्ध ज्यौतिष (सिद्धान्त, संहिता, होरा) के सम्यक ज्ञान का होना अशक्य है। क्योंकि संहिता और जातक के अनेक ग्रन्थ हैं। एक-एक ग्रन्थ भी विस्तृत है। जिससे थोड़े समय में उनका अध्ययन (ज्ञान) असम्भव है। इसी वैषम्य को देखकर मैंने यथासम्भव यथाबुद्धि मानव-समाज में सदा व्यवहार में आने योग्य विषयों का संकलन करके भाषार्थ सहित इस ग्रन्थ का सम्पादन किया है। इसमें क्या-क्या विषय हैं—वे विषय-सूची देखने से ही ज्ञात होंगे। इसलिये उसका उल्लेख 'पिष्टपेषण' समझकर यहाँ नहीं करना ही उचित समझा।

अन्त में, मानव धर्मवश या दृष्टिदोष एवं मुद्रण यन्त्रादि दोष से जो कुछ त्रुटि रह गई हो या हुई हो उसको पाठकवृन्द स्वयं सुधार करके क्षमा करें तथा मुझे सूचित करने की कृपा करें ताकि पुनः अग्रिम संस्करण में सुधार हो सके।

"स्खलनं गच्छतः क्वापि भवत्येव प्रमादतः।
हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति सज्जनः।।इति।।"

विनीत—श्रीरूपनारायण झा।

विषय-सूची

प्रकीर्ण प्रकरण

कृषि प्रकरण

यात्रा प्रकरण

यथा-लग्नविवेक

भावफल प्रकरण

स्त्रीराजयोग

विशेष प्रकरण

वर्षप्रवेश प्रकरण

अद्भुत प्रकरण

पञ्चांगोपयोगी विषय

सोदाहरण विंशोत्तरी दशानन

।।इति।।

अथ बृहज्ज्योतिषसारः।

❁ मङ्गलाचरण ❁

नारायणं नमस्कृत्य रूपनारायणो नवम्।
बृहज्ज्योतिषसाराख्यं ग्रन्थं कुर्वे सतां मुदे।।१।।

ज्यौतिषशास्त्र प्रशंसा-

सिद्धान्त-संहिता होरारूपं स्कन्धत्रयात्मकम्।
वेदस्य निर्मलं चक्षुर्ज्योतिश्शास्त्रमकल्मषम्।।२।।
विनैतदखिलं श्रौतं स्मार्तं कर्म न सिद्ध्यति।
तस्माज्जगद्धितायेदं ब्रह्मणा निर्मितं पुरा।।३।।

सिद्धान्त, संहिता और होरा नामक ३ स्कन्धों से युक्त ज्यौतिषशास्त्र वेद का निर्मल नेत्र कहा गया है। ज्यौतिषशास्त्र के बिना संसार में श्रौत (यज्ञादि) स्मार्त (उपनयन विवाहादि) कोई भी कार्य सिद्ध नहीं. हो सकता है, इसलिये जगत् के कल्याणार्थ ब्रह्मा ने इस शास्त्र को बनाया।।२-३।।

विवरण— (१) जिसमें व्यक्त और अव्यक्त गणित की परिपाटी तथा जिससे खगोल, भगोल और भूगोल एवं समस्त ग्रह, नक्षत्रादि की स्थिति का ज्ञान होता है वह सिद्धान्त स्कन्ध कहलाता है।

(२) जिससे काल के शुभत्व और अशुभत्व (सुभिक्ष, दुर्भिक्ष आदि) का ज्ञान होता है वह संहिता स्कन्ध कहलाता है।

(३) जिससे प्रत्येक प्राणी के अपने-अपने जन्मकालिक लग्न से जीवन भर के शुभ या अशुभ फलों का ज्ञान होता है वह होरा स्कन्ध कहलाता है।

कालमान—

ज्यौतिषशास्त्रप्रणेता आचार्यगण काल को ही विश्व का उत्पादक, पालक और संहारक मानते हैं। स्वयं सूर्य भगवान् ने कहा है—

लोकानामन्तकृत् कालः कालोऽन्यः कलनात्मकः।
स द्विधा स्थूलसूक्ष्मत्वान्मूर्तश्चामूर्त उच्यते।।४।।

विश्व के उत्पादक और प्रलयकारक काल के दो भेद हैं। एक तो समस्त लोक (चर-अचर) को संहार करके स्वयं अव्यय अनन्त रूप रहने वाला महाकाल है। दूसरा काल सावयव कलनात्मक व्यवहारार्थ गणना करने योग्य है। वह (कलनात्मक) काल स्थूल और सूक्ष्म भेद से मूर्त (प्रत्यक्ष) और अमूर्त (अप्रत्यक्ष) रूप दो प्रकार का है।।४।।

कलनात्मक काल के भेद—

प्राणादिः कथितो मूर्तस्त्रुट्याद्योऽमूर्तसंज्ञकः।

उस कलनात्मक काल के प्राण आदि (पल-घटी-दिन आदि) मूर्त (व्यवहार में लाने योग्य) और त्रुटि आदि प्राणपर्यंत अमूर्त (व्यवहार में नहीं आने योग्य) हैं।

त्रुटि आदि काल—

सूच्या भिन्ने पद्मपत्रे त्रुटिरित्यभिधीयते।।
तत्षष्ट्या च भवेद्रेणू रेणुषष्ट्या लवः स्मृतः।
तत्षष्ट्या लीक्षकः प्रोक्तस्तत्षष्ट्या प्राण उच्यते।।६।।

तीक्ष्ण सूई से कमलपत्र को छेदने में जितना काल लगता है उसको त्रुटि कहा गया है। ६० त्रुटि का १ रेणु , ६० रेणु का १ लव, ६० लव का १ लीक्षक और ६० लीक्षक का १ प्राण होता है।।५-६।।

षड्भिः प्राणैः पलं ज्ञेयं तत्षष्ट्या दण्ड उच्यते।
दण्डषष्ट्या च नाक्षत्रमहोरात्रं प्रकीर्तितम्।।७।।

६ प्राण (स्वास) का एक पल, ६० पल एक दण्ड, ६० दण्ड का एक नाक्षत्र अहोरात्र होता है।।७।।

सौरं सूर्यांशभोगेन तिथ्या चान्द्रदिन स्मृतम्।
सूर्योदयाद्द्यान्तस्थं कीर्त्यते सावनं दिनम्।।८।।

सूर्य के एक अंश भोग करने से १ सौर दिन तथा एक तिथि का १ चाच्द्र दिन और सूर्योदय से सूर्योदय पर्यन्त १ सावन दिन कहलाता है।।८।।

युगादि मान—

त्रिंशत्सौरदिनैर्मासो वर्ष द्वादशभिश्च तैः।
तद्देवानामहोरात्रमसुराणां तथैव च।।९।।
सुरासुराणामन्योन्यमहोरात्रं विपर्ययात्।
ततूषष्टिः षड्गुणा वर्ष दिव्यमासुरमेव च।।१०।।
अयुतघ्नैर्द्वित्रिवेदैः सौरवर्षैश्चै तैः समम्।
संध्यासंध्यांश सहितं विज्ञेयं तच्चतुर्युगम्।।११।।

३० सौर दिन का १ मास, १२ मास का १ वर्ष होता है। १ सौर वर्ष का देवता और दैत्य का अहोरात्र होता है। जिस समय देवों का दिन उस समय दैत्यों की रात्रि होती है और जिस समय दैत्यों (दक्षिण-ध्रुववासियों) का दिन उस समय देवों (उत्तर ध्रुववासियों) की रात्रि होती है। ४३२०००० सौर वर्ष का एक चतुर्युग (या महायुग) संध्या संध्यांश सहित होता है।।९-११।।

युगानां सप्ततिः सैका मन्वन्तरामिहोच्यते।। ।।
कृताब्दसंख्यस्तस्यांते संधिः प्रोक्तो जलप्लवः।।१२।।

७१ चतुर्युग का १ मनु (मन्वन्तर) प्रत्येक मन्वन्तर के अन्त में कृतयुग वर्षसंख्यातुल्य उसकी जलमय संधि होती है।।।१२।।

ससंधयस्ते मनवः कल्पे ज्ञेयाश्चतुर्दशः।। ।।
कृतप्रमाणः कल्पादौ संधिः पञ्चदशः स्मृतः।।१३।।

एवं संधिसहित १४ मनु का १ कल्प होता है। तथा कल्पके आरंभ में कृतयुग वर्षतुल्य १५ वीं संधि होती है।।१३।।

ब्राह्म मान—

इत्थं युगसहस्रेण भूतसंहारकारकः।। ।।
कल्पो ब्राह्ममहः प्रोक्तं शर्वरी तस्य तावती।।१४।।

इस प्रकार १ हजार चतुर्युग का १ कल्प होता है। जो ब्रह्मा का १ दिन होता है। उसमें सब प्राणियों का लय हो जाता है। तथा १ कल्प तक ब्रह्मा की रात्रि होती है।।१४।।

परमायुः शतं तस्य तयाहोरात्रसंख्यया।। ।।
आयुषोऽर्धमितं तस्य शेषकल्पोऽयमादिमः।।१५।।

एवं २ कल्प का १ अहोरात्र और उस अहोरात्र के हिसाब से (३० अहोरात्र का १ मास, १२ मास का एक वर्ष) १०० वर्ष ब्रह्मा की आयु होती है। वर्तमान ब्रह्मा की आयु आधा (५० वर्ष) बीत चुकी है। ५१वाँ वर्ष का यह प्रथम अहोरात्र बीत रहा है।।१५।।

कल्पादस्माच्च मनवः षड् व्यतीताः ससंधयः।। ।।
वैवस्वतस्य च मनोर्युगानां त्रिघनो गतः।।१६।।

वर्तमान कल्प के ६ मनु वीत चुके हैं। ७वें वैवस्वत मनु के भी २७ युग व्यतीत हो चुके हैं।।१६।।

तथा च (भास्कर)

याताः षण्मनवो युगानि भमितान्यन्यद्युगांध्रित्रयं
नन्दाद्रीन्दुगुणास्तथा शकनृपस्यान्ते कलेर्वत्सराः।
गोद्रीन्द्वद्रिकृताङ्कदस्रनगगोचन्द्राः, शकाब्दान्विताः।
सर्वे संकलिताः पितामहदिनेस्युर्वर्तमाने गताः।।१७।।

वर्तमान कल्प में ६ मनु बीत चुके। वर्तमान मनु में कृत, त्रेता और द्वापर से युगांध्रि भी बीत चुके हैं। तथा शकनृप के अन्त (शाक वर्ष की प्रवृत्ति समय) में कलियुग के ३१७९ वर्ष बीत चुके थे। एवं शाक के आरम्भ में कल्पादि से १९७२९४७१७९ सौर वर्ष व्यतीत हो चुके थे। इसलिये इस संख्या में अभीष्ट शाके की संख्या जोड़ने से कल्पादि से अभीष्ट शाकारम्भ तक की संख्या हो जायेगी।।१७।।

जैसे— शाके १८८० के आरम्भ में कल्पादि से गत वर्ष १९७२९४७१७९+१८८० = १९७२९४९०५९ की संख्या हुई।

पितृ मान—

अहोरात्रं पितृणां तु विधुपृष्ठनिवासिनाम्।
त्रिंशत्तिथ्यात्मकं प्रोक्तं चान्द्रमाससमं बुधैः।।१८।।

३० तिथि (एक चान्द्र मास) तुल्य चन्द्रलोकवासी पितरों का अहोरात्र होता है।।१८।।

बार्हस्पत्य मान—

मध्यगत्या भभोगेन गुरोर्गौरववत्सरः।
आश्विनादिकसंज्ञाश्च ज्ञेया मेषादिराशिषु।।१९।।

मध्यम गति से एक-एक राशि का भोग बार्हस्पत्य वर्ष कहलाता है। मेषादि १२ राशियों में आश्विन, कार्तिक इत्यादि मासवत् १२ संज्ञायें होती हैं।।१९।।

नवधाकाल मान—

ब्राह्मं दैवं मनोर्मानं पैत्र्यं सौरं च सावनम्।
नाक्षत्रं च तथा चान्द्रं जैवं मानानि वै नव।।२०।।

इस प्रकार ब्राह्म, दैव, मानव, पैत्र्य, सौर, सावन, नाक्षत्र, चान्द्र और बार्हस्पत्य ये ९ प्रकार के काल कहे गये हैं।।२०।।

इनमें व्यवहार में आने योग्य—

पञ्चभिर्व्यवहारः स्यात् सौरचान्द्रार्क्षसावनैः।
बार्हस्पत्येन मर्त्यानां नान्यमानेन सर्वदा।।२१।।

इन मानों में से केवल सौर, चान्द्र, नाक्षत्र, सावन और बार्हस्पत्य मान से ही मनुष्य का व्यवहार होता है।।२१।।

सौरं यज्ञविवाहादौ सूतकादौ च सावनम्।
घट्यादिमापनाद्यार्क्षं चान्द्रं च पितृकर्मणि।।२२।।
प्रगवाद्यब्दमाने तु बार्हस्पत्यं प्रकीर्तितम्।
एतच्छुद्धिं विलोक्यैव बुधः कर्म समारभेत्।।२३।।

यज्ञ और विवाहादि शुभ कार्य में सौरमान, सूतकादि में अहोरात्र गणनार्थ सावन, घटी आदिकालज्ञानार्थ नाक्षत्र, पितृकर्म में चान्द्र और प्रभवादि संवत्सर में बार्हस्पत्य मान ग्रहण करना चाहिये। इन कालों की शुद्धि देखकर ही कर्म का आरम्भ करना चाहिए।।२२-२३।।

संवत्सर—

स्फुटेज्येऽजादिगे यो यो वत्सरः परिपूर्यते।
सृष्टितो विजयाद्यास्तेऽथवा चाश्विनपूर्वकाः।।२४।।

मेषादि राशि में स्पष्ट गुरु के रहने पर जो-जो संवत्सर पूर्ण होता है वे ही सृष्ट्यादि से विजय आदि ६०, अथवा आश्विन आदिक १२ संवत्सर होते हैं, जिनके फल पञ्चांग में लिखे जाते हैं।।२४।।

देशभेद से वर्षमान—

नर्मदोत्तरभागे तु बार्हस्पत्येन वत्सरः।
तस्यास्तु दक्षिणे भागे सौरमानेन वर्तते।।२५।।

नर्मदा के उत्तर भाग के देश में बार्हस्पत्य (प्रभवादि) संवत्सर और दक्षिणा भाग में सौर (मेषसंक्रान्ति तक) संवत्सर फलादि में ग्रहण किया जाता है।।२५।।

शुद्धसंवत्सर—

यत्रैकराशिसञ्चारो भवेन्मार्गगतेर्गुरोः।
शुद्धः संवत्सरः स स्यात्सर्वेषां च शुभप्रदः।।२६।।

जिस बार्ईस्पत्य संवत्सर में स्पष्ट गुरु का मार्गगत्या एक राशि में सञ्चार हो वह शुद्ध वर्ष सबके लिये शुभप्रद है।।२६।।

अतिचार और लुप्तवर्ष—

यत्र वर्षे द्विचारः स्यादतिचारः स उच्यते।
तदा कर्म शुभं त्याज्यमष्टाविंशतिवासरान्।।२७।।

जिस संवत्सर में मार्गगति गुरु का दो राशि में सञ्चार हो वह अतिचार कहलता है। उसमें २८ दिन पर्यंत शुभ कर्म का त्याग करना चाहिये।।२७।।

अतिचारी गुरुर्वक्रो भूत्वाऽऽगच्छति पूर्वभम्।
तदा लघ्वतिचारः स्यादन्यथा लुप्तवत्सरः।।२८।।
यस्मिन्राशौ स्फुटेज्यस्य वत्सरान्तो न जायते।
तद्राशिवत्सरस्यैव नाम्नो लोपः प्रजायते।।२९।।

अतिचार होने पर भी स्पष्ट गुरु यदि वक्री होकर फिर पूर्वराशि में आवे तो लघ्वतिचार होता है। अन्यथा (अर्थात् यदि पूर्वराशि में न आवे तो) लुप्तवत्सर होता हैं।।२८,२९।

महातिचारसंज्ञं तं लुप्तं संवत्सरं त्यजेत्।
वत्सरारम्भतः पञ्चचत्वारिंशद्दिनादि वा।।३०।।

लुप्तसंवत्सर का ही नाम महातिचार भी है। उस वर्ष को शुभ कर्म में त्याग देना चाहिये। अथवा आवश्यक में आदि से ४५ दिन त्यागकर शेष में कर्म करना चाहिये।।३०।।

दाक्षिणात्यो के मत से लुप्त वर्ष—

यत्र जीवाब्दयुगमस्य सौराब्देविरतिर्भवेत्।
लुप्तवर्ष तदा तत्र ज्ञेयं ज्योतिषवेदिभिः।।३१।।

जिस सौरवर्ष में दो बार्हस्पत्य संवत्सर का अन्त हो वह दक्षिणदेश में लुप्त वर्ष समझा जाता है।।३१।।

कुत्रचिच्चान्द्रमानेन वत्सरः परिगृह्यते।
एवमेव च तत्रापि विज्ञेयो लुप्तवत्सरः।।३२।।

कहीं-कहीं चान्द्र मान (चैत्रान्त) से वर्ष ग्रहण किया जाता है। वहाँ भी इसी प्रकार (वर्ष के भीतर दो बार्हस्पत्य वर्ष के अंत होने से) लुप्त वर्ष समझना।।३२।।

वार्हस्पत्य वर्षों के नाम—

विजय	विश्वावसु	पिंगल	शुक्ल	वृष	मेष
जय	पराभव	कालयुक्त	प्रमोद	चित्रभानु	वृष
मन्मथ	प्लवंग	सिद्धार्थी	प्रजापति	सुभानु	मिथुन
दुर्मुख	कीलक	रौद्र	अंगिरा	तारण	कर्क
हेमलम्ब	सौम्य	दुर्मति	श्रीमुख	पार्थिव	सिंह
विलम्ब	साधारण	दुन्दुभी	भाव	व्यय	कन्या
विकारी	विरोधकृत्	रुधिरोद्गारी	युवा	सर्वजित	तुला
शर्वरी	परिधावी	रक्ताक्ष	धाता	सर्वधारी	वृश्चिक
प्लव	प्रमादी	क्रोधन	ईश्वर	विरोधी	धनु
शुभकृत्	आनन्द	क्षय	बहुधान्य	विकृत	मकर
शोभकृत्	राक्षस	प्रभव	प्रमाथी	खर	कुम्भ
क्रोधी	नल	विभव	विक्रम	नन्दन	मीन

।।संवत्सरों के फल।।

प्रभव—

कृषीणामीतयश्चाग्निकोपश्च व्याधयो भुवि।
प्रभवाब्दे मन्दवृष्टिस्तथापि सुखिनो जनाः।।१।।

प्रभव नाम के संवत्सर में खेती को सूखा, राजाओं का दण्ड और टिड्डीदल आदिके द्वारा बाधा पहुँचती है। आग ज्यादा लगती है बीमारी भी फैलती है। वर्षा कम होती है फिर भी लोग सुखी रहते हैं।।१।।

विभव—

दंडनीतिपरा भूपा बहुसस्यार्घवृष्टयः।
विभवाब्देऽखिला लोकाः सुखिनःस्युर्विवैरिणः।।२।।

विभव नाम के संवत्सर में राजा प्रजा के साथ दण्डनीति का विशेष प्रयोग करते हैं। अन्न खूब होता है और वृष्टि भी अच्छी होती है। इस वर्ष में सभी लोग सुखी और शत्रुरहित रहते हैं।।२।।

शुक्ल—

शुक्लाब्दे निखिला लोकाः सुखिनः स्वजनैः सह।
राजानो युद्धनिरताः परस्परजयैषिणः।।३।।

शुक्ल नाम के संवत्सर में सब लोग अपने कुटुम्बियों के साथ-साथ सुखी रहते हैं। राजा लोग एक-दूसरे को जीतने की इच्छा से लड़ाई-झगड़े में लगे रहते हैं।।३।।

प्रमोद—

प्रमोदाब्दे प्रमोदन्ते राजानो निखिला जनाः।
वीतरोगा वीतभया जायन्ते नात्र संशयः।।४।।

प्रमोद नाम के संवत्सर में राजा-प्रजा सभी आनन्द से रहते हैं। न किसी को किसी प्रकार का रोग सताता है और न किसी को किसी प्रकार का भय ही रहता है।।४।।

प्रजापति—

न चलन्ति चला लोकाः स्वस्वमार्गात्कथञ्चन।
अब्दे प्रजापतौ नूनं बहुसस्यार्घवृष्टयः।।५।।

प्रजापति नाम के संवत्सर में सब लोग अपने-अपने मार्ग से चलते रहते हैं, कोई किसी तरह विचलित नहीं होता। इस वर्ष में पानी अच्छा बरसता है और अन्न भी पर्याप्त होता है।।५।।

अङ्गिरा—

अन्नाद्यं भुज्यते शश्वज्जनैरतिथिभिः सह।
अङ्गिराब्देऽखिला लोका भूपाश्च कलहोत्सुकाः।।६।।

अङ्गिरा नाम के संवत्सर में लोग स्वयं मजे से खाते-पीते हैं और अतिथियों का भी सत्कार होता है। इस वर्ष में सभी राजे कलह के लिये उत्सुक रहते हैं।।६।।

श्रीमुख—

श्रीमुखाब्देऽखिला धात्री बहुसस्यार्घसंयुता।
अध्वरे निरता विप्रा वीतरागा विवैरिणः।।७।।

श्रीमुख नाम के संवत्सर में सारे भूमण्डल में अन्न खूब होता है। ब्राह्मण यज्ञ में लगे रहते हैं और लोगों के हृदय से द्वेषभाव दूर हो जाता है, जिससे कोई किसी का शत्रु नहीं रह जाता है।।७।।

भाव—

भावाब्दे प्रचुरा रोगा मध्यसस्यार्घवृष्टयः।
राजानो युद्धनिरतास्तथापि सुखिनो जनाः।।८।।

भाव नाम के संवत्सर में रोग विशेष फैलता है। अन्न साधारण भाव का रहता है, उसी तरह पानी भी कम बरसता है। राजा लोग लड़ाई में लगे रहते हैं। फिर भी प्रजा सुखी रहती है।।८।।

युवा—

प्रभूतपयसो गावः सुखिनः सर्वजन्तवः।
सर्वकामक्रियायुक्तो युवाब्दे युवतीजनः।।९।।

युवा नाम के संवत्सर में गौयें दूध विशेष देती हैं, सब जीव सुखी रहते हैं। इस वर्ष स्त्रियों में जागृति होती है और वे अपने धर्मानुसार अच्छे-अच्छे काम करती हैं।।९।।

धाता—

धातृवर्षेऽखिला भूपाः सदा युद्धपरायणाः।
सम्पूर्णा धरणी भाति बहुसस्यार्घवृष्टिभिः।।१०।।

धाता नाम के संवत्सर में सभी राजे लड़ने जाते हैं और पूरे साल तक लड़ते ही रहते हैं। लेकिन पृथ्वी पर बहुत अन्न होता है और वृष्टि भी अच्छी ही होती है।।१०।।

ईश्वर—

ईश्वराब्देऽखिलाञ्जीवान् पृथ्वी धात्रीव सर्वदा।
पोषयत्यतुलैरन्नैः फलतोयैश्च ब्रीहिभिः।।११।।

ईश्वर नाम के संवत्सर में पृथ्वी माता की तरह प्रजा को अन्न, फल और जल से सदा संतुष्ट करती है।।११।।

बहुधान्य—

अनीतिरतुला वृष्टिर्बहुधान्याख्यवत्सरे।
विविधान्नचयः क्षेत्रे सुखपूर्णाखिला धरा।।१२।।

बहुधान्य नाम के संवत्सर में अनीति विशेष होती है और विविध प्रकार के अन्नों से पूर्ण सारी पृथ्वी सुखी रहती है।।१२।।

प्रमाथी—

न मुञ्चति पयोवाहः कुत्रचित्कुत्रचिज्जलम्।
मध्यमा वृष्टिरर्घश्च अन्नमब्दे प्रमाथिनि।।१३।।

प्रमाथी नाम के संवत्सर पें मेघ ठीकसे नहीं बरसते। कहीं वृष्टि होती है कहीं नहीं। इस तरह बहुत हल्की वृष्टि होती है। अन्न महँगा हो जाता है।।१३।।

विक्रम—

विक्रमाब्दे धराधीश-विक्रमाक्रान्तभूमयः।
सर्वत्र सर्वदा मेघा मुञ्चन्ति प्रचुरं जलम्।।१४।।

विक्रम नाम के संवत्सर में राजाओं के बल से सारी पृथ्वी त्रस्त रहती है। और मेघ हमेशा बहुत ज्यादा जल बरसाता है। इस कारण इस वर्ष में बाढ़ आने का भय रहना स्वाभाविक है।।१४।।

वृष—

वृषाब्दे निखिलाः क्ष्मेशा युद्ध्यन्ति वृषभा इव।
विद्याप्रसक्ता विप्रेन्द्राः पूज्यन्ते सततं भुवि।।१५।।

वृष नाम के संवत्सर में सब राजे साँड़ की तरह आपस में कटते-मरते हैं। ब्राह्मण विद्याध्ययन में लगे रहते हैं और सारी पृथ्वी में वे पूजे जाते हैं।।१५।।

चित्रभानु—

वित्तार्धवृष्टिसस्याद्यैर्विचित्रा निखिला धरा।
निराकुलाखिला लोकाश्चित्रमान्वाख्यवत्सरे।।१६।।

चित्रभानु नाम के संवत्सर में धन, अन्न और अच्छी वृष्टि होने के कारण सारी पृथ्वी विचित्र मालूम पड़ती है और इस वर्ष लोगों में किसी प्रकार का आतङ्क नहीं रहता।।१६।।

सुभानु—

सुभानुवत्सरे भूमौ भूमिपानां विग्रहः।
भाति भूर्भूरिसस्याढ्या भयं क्वापि भुजङ्गमैः।।१७।।

सुभानु नाम के संवत्सर में राजे लड़ते हैं। पृथ्वी पर अन्न खूब होता है। इस वर्ष में साँपों का उपद्रव विशेष रहता है।।१७।।

तारण—

कुचश्चिन्निखिला लोकाः सरन्ति प्रतिपन्नताम्।
नृपाहवे क्षताद्रोगाद् भैषज्यं तारणाब्दके।।१८।।

तारण संवत्सर में लोग किसी तरह अपना गुजर-बसर कर लेते हैं। इस वर्ष राजा का भी प्रजा पर कोप रहता है। रोग भी ज्यादा उभड़ते हैं। लोगों को साल भर दवाई ही करते बीतता है।।१८।।

पार्थिव—

पार्थिवाब्दे तु राजानः सुखिनः सुप्रजा भृशम्।
बहुभिः फलपुष्पाढ्यैर्विविधैश्च पयोधरैः।।१९।।

पार्थिव नाम के संवत्सर में राजे और प्रजा सब सन्तुष्ट रहते हैं। इस साल में फल पुष्प विशेष होते हैं और वर्षा भी मजे की होती है।।

व्यय—

व्ययाब्दे निखिला लोका बहुव्ययपरा भृशम्।
विरमन्तीह तुरगै रथैर्भूतानि सर्वदा।।२०।।

व्यय नाम के संवत्सर में सब लोगों का खर्च बढ़ जाता है। इस साल में खर्च के बोझ से दबे रहने के कारण लोग रथ और घोड़े आदि सवारियों का आनन्द लेने से बाज आते हैं।।२०।।

सर्वजित्—

सर्वजिद्वत्सरे सर्वे जनास्त्रिदशरात्रिकाः।
राजानो विलयं यान्ति भीमसंग्रामभूमयः।।२१।।

सर्वजित् नाम के संवत्सर में सभी लोग त्रस्त रहते हैं। दिन कठिनाई से कटता है। एक-एक रात्रि देवताओं की रात्रि की तरह लंबी मालूम पड़ती है दुनिया में युद्ध जोरों से होता है, जिससे कितने ही राजे चौपट हो जाते हैं।।२१।।

सर्वधारी—

सर्वधार्यब्दके भूपाः प्रजापालनतत्पराः।
प्रशान्तवैराः सर्वत्र बहुसस्यार्घवृष्टयः।।२२।।

सर्वधारी नाम के संवत्सर में राजे धर्मपूर्वक प्रजा का पालन करते हैं। लोगों के हृदय से वैरभाव दूर हो जाता है और अन्न खूब होता है। वृष्टि भी अच्छी ही होती है।।२२।।

विरोधी—

विरोधिवत्सरे भूपाः परस्परविरोधिनः।
भूरिभूतियुता भूमिर्भूरिवारिसमाकुला।।२३।।

विरोधी नाम के संवत्सर में सब राजे आपस में विरुद्ध रहते है। अन्न अच्छी तरह होता है और पानी भी खूब बरसता है।।२३।।

विकृति—

प्रकृतिर्विकृतिं याति विकृतिः प्रकृतिंतथा।
तथापि सुखिनो लोकाश्चास्मिन्विकृतिवत्सरे।।२४।।

विकृति नाम का संवत् जिस साल पड़े, उस वर्ष प्रकृति भी विकृत रूप धारण कर लेती है और बहुतेरे विकृत भाव भी प्रकृति अवस्था को प्राप्त हो जाते हैं। फिर भी संसार के लोग सुखी रहती हैं।।२४।।

खर—

खराब्दे निःस्वना लोका अन्योऽन्यसमरोत्सुकाः।
मध्यमा वृष्टिरत्युग्रै रोगैर्भूयात्प्रकम्पनम्।।२५।।

जिस वर्ष खर नाम का संवत् पड़ जाय तो उस वर्ष में सब देश के राजे किसी की न सुनकर लड़ने पर उतारू हो जाते हैं। वृष्टि मध्यम होती है और बड़े-बड़े भयानक रोगों से दुनियाँ थर्रा उठती है।।२५।।

नन्दन—

नन्दनाब्दे सदा पृथ्वी बहुसस्यार्घवृष्टयः।
नन्दनाख्ये खलानां च जन्तूनां समहीभुजाम्।।२६।।

जिस वर्ष नन्दन नाम का संवत् पड़ता है तो पृथ्वी में अनाज विशेष उत्पन्न होता है। उस वर्ष सब राजे और खल प्राणी तक सुखी रहते हैं। किसी को कोई कष्ट नहीं होता।।२६।।

विजय—

विजयाब्दे तु राजानः सदा विजयकांक्षिणः।
सुखिनो जन्तवः सर्वे बहुसस्यार्घवृष्टयः।।२७।।

जिस वर्ष विजय संवत् पड़ता है तो सभी राजे विजय की अभिलाषा करने लगते हैं। उस वर्ष में पृथ्वीतल के जीव सुखी रहते हैं। वृष्टि अच्छी तरह होती है ओर अन्न खूब होता है।।२७।।

जय—

जयमङ्गलघोषाद्यैर्धरणी भाति सर्वदा।
जयाब्दे धरणीनाथाः संग्रामजयकांक्षिणः।।२८।।

जय नाम संवत् जिस वर्ष पड़ता है उस साल समस्त पृथ्वीमण्डल जयघोष की ध्वनि से गुञ्जित हो उठता है और सभी राजे युद्ध के इच्छुक हो जाते हैं।।२८।।

मन्मथ—

मन्मथाब्दे जनाः सर्वे तास्कर्य यान्ति लोलुपाः।
शालीक्षुयवगोधूमैर्नयेनाभिनवा धरा।।२९।।

जब मन्मथ संवत् पड़ता है तो उस वर्ष में सब लोग चोर तथा लालची विशेष हो जाते हैं। धान, ईख, जौ और गेहूँ से भरी पूरी पृथ्वी देखने में बड़ी ही सुन्दर मालूम होती है।।२९।।

दुर्मुख—

दुर्मुखाब्दे महावृष्टिरीतिचौराकुला धरा।
महावैरा महीनाथा वीरवारणवाजिभिः।।३०।।

जिस वर्ष दुर्मुख संवत् पड़ता है तो महावृष्टि होती है। टिड्डीदल और चोरों से पृथ्वी के सभी मनुष्य व्याकुल हो जाते हैं और राजाजन परस्पर शत्रुता करते हैं।।३०।।

हेमलम्बी—

हेमलम्बे त्वीतिभीतिर्मध्यसस्यार्घवृष्टयः।
भाति भूर्भूपतिक्षोभात्खड्गविद्युल्लतादिभिः।।३१।।

हेमलम्बी नाम का संवत् जिस वर्ष पड़ता है उस साल सूखा और दुर्भिक्षादि तरह-तरह के उपद्रव होते हैं। राजाओं के द्वन्द्व से तलवारें चमक उठती हैं, कहीं कहीं बिजली गिरती है और रक्तपात भी होता है।।३१।।

विलम्बी—

विलम्बवत्सरे भूपाः परस्परविरोधिनः।
प्रजापीडा त्वनर्घत्वं तथापि सुखिनो जनाः।।३२।।

जिस वर्ष विलम्बी नाम का संवत् पड़ता है तो राजाओं में परस्पर विरोध बढ़ जाता है। प्रजा को तकलीफ विशेष होती है। सब चीजें महँगी हो जाती हैं, फिर भी लोग सुखी ही रहते हैं।।३२।।

विकारी—

विकार्यब्देऽखिला लोकाः सरोगा वृष्टिपीडिताः।
पूर्णसस्यफलं स्वल्पं बहुलं चापरं फलम्।।३३।।

जिस वर्ष विकारी नाम का संवत् पड़ता है तो उस साल सभी लोग रोगी विशेष हो जाते हैं। अति वृष्टि से भी कष्ट होता है। अन्न कम पैदा होता है, लेकिन और-और कामों में लोगों को अच्छा लाभ होता है।।३३।।

शर्वरी—

शर्वरीवत्सरे पूर्णा धरा सस्यार्घवृष्टिभिः।
जनाश्च सुखिनः सर्वे राजानः स्युर्विवैरिणः।।३४।।

जिस साल शर्वरी नाम का संवत् पड़ता है तो पृथ्वी धान्य से भरी-पूरी रहती है, आर्थिक अवस्था सुधरी होती है, वृष्टि भी अधिक होती है, साधारण लोग सुखी रहते हैं और राजाओं का तो कोई शत्रु होता ही नहीं।।३४।।

प्लव—

प्लवाब्दे निखिला धात्री वृष्टिभिः परिपूरिता।
प्रभवन्ति तथा रोगव्याकुला त्वीतिभीतिभिः।।३५।।

जिस वर्ष प्लव नाम का संवत् पडता है उस साल सारी पृथ्वी जलमयी हो जाती है। तरह-तरह के रोग होते हैं और भूमि दुर्भिक्ष तथा भय से व्याकुल रहती है।।३५।।

शुभकृत्—

शुभकृद्वत्सरे पृथ्वी राजते विविधोत्सवैः।
आतङ्कचौराभयदा राजानः समरोत्सुकाः।।३६।।

जिस साल शुभकृत् संवत्सर पड़ता है, उस समय पृथ्वी विविध प्रकार के उत्सवों से सुशोभित होती है। न किसी को किसी तरह का आतंक रहता है और न चोर ही सताते हैं। हाँ, राजे लड़ाई के लिए उत्सुक रहते हैं।।३६।।

शोभन—

शोभने वत्सरे धात्री प्रजानां रोगशोकदा।
तथापि सुखिनो लोका बहुसस्यार्घवृष्टयः।।३७।।

शोभन नाम के संवत्सर में पृथ्वी भर में रोग-शोक विशेष दिखाई देता है। फिर भी वर्षा अच्छी होने और अन्न विशेष होने से लोग सुखी ही रहते हैं।।३७।।

क्रोधी—

क्रोध्यब्दे त्वखिला लोकाः क्रोधलोभपरायणाः।
ईतिदोषेण सततं मध्यसस्यार्घवृष्टयः।।३८।।

क्रोधी नाम के संवत्सर में संसार के सब लोग क्रोध और लोभ के आश्रित हो जाते हैं। टिड्डी आदि दोष से इस साल अन्न कम उत्पन्न होता है और वृष्टि भी मामूली ही होती है।।३८।।

विश्वावसु—

अब्दे विश्वावसोः शश्वद्घोररोगा धरासु च।
सस्यार्घवृष्टयो मध्या भूपाला नातिभूतयः।।३९।।

विश्वावसु संवत् में पूरे वर्ष भर भयानक रोगों का आक्रमण होता है। अन्न कम होता है, वृष्टि भी कम ही होती है, यहाँ तक कि राजे भी धन के लिए दुःखी रहते हैं।।३९।।

पराभव—

पराभवाब्दे राजनो युद्ध्यन्ते सह शत्रुभिः।
आमयाः क्षुद्रसस्यानि प्रभूतान्यल्पवृष्टयः।।४०।।

पराभव नामके संवत्सर में राजे अपने—अपने शत्रुओं से लड़ते है, रोग भी थोड़ा बहुत फैल जाता है। तुच्छ अन्न ज्यादा होता है।वृष्टि कम होती है।।४०।।

प्लवंग—

प्लवङ्गाब्दे मध्यवृष्टी रोगचौराकुला धरा।
अन्योन्यसमरे भूपाः शत्रुभिर्हृतभूतयः।।४१।।

प्लवंग नामके संवत्सर में साधारण वृष्टि होती है। पृथ्वी रोग और चोरों से व्याकुल रहती है, राजे आपस में लड़कर कंगाल हो जाते हैं।।

कीलक—

कीलकाब्दे त्वीतिभीतिः प्रजाक्षोभः नृपाय भीः।
तथापि वद्र्धते लोका समा धान्यर्घवृष्टयः।।४२।।

कीलक नाम के सम्वत्सर में अकाल का भय रहता है। प्रजा में राजा की तरफ से और राजा को प्रजा से भय तथा क्षोभ दोनों होते हैं। फिर भी साधारण तौर से वृष्टि अच्छी होने और अन्न सस्ता रहने कारण लोग उन्नति करते हैं।।४२।।

सौम्य—

सौम्याब्दे त्वखिला लोका बहुसस्यार्धवृष्टिभिः।
विवैरिणो धराधीशा विप्राश्चान्धपरम्पराः।।४३।।

सौम्य नाम के संवत् में सब लोग अन्न अधिक होने, सस्तीका समय रहने और वृष्टि अच्छी होने के कारण प्रसन्न रहते हैं। राजाओं के वैर नहीं रह जाते और ब्राह्मण अंधपरम्परा के अनुसार चलते रहते हैं।।४३।।

साधारण—

साधारणाब्दे वृष्ट्यर्द्धं भयं च मरणं सतः।
मध्यसम्पद्धराधीशाः प्रजाः स्युः स्वस्थचेतसः।।४४।।

साधारण नाम के संवत्सर में वृष्टि आधी होती है। साधु लोगों में किसी न किसी तरह का आतंक छाया रहता है। धनियों को मामूली आमदनी होती है और प्रजा प्रसन्न रहती है।।४४।।

विरोधकृत्—

विरोधकृद्वत्सरे तु परस्परविरोधिनः।
सर्वे जना नृपाश्चैव मध्यसस्यार्घवृष्टयः।।४५।।

विरोधकृत् नामके संवत्सर में परस्पर विरोध बढ़ जाता है। दुनियाँ के साधारण आदमियों से लेकर राजाओं तक में मनमुटाव पैदा हो जाता है। अन्न का मूल्य मध्यम रहता है और वृष्टि भी मध्यम ही होती है।।४५।।

परिधावी—

भूपाहवो महारोगो मध्यसस्यार्घवृष्टयः।
दुःखिनो जन्तवः सर्वे वत्सरे परिधाविनि।।४६।।

परिधावी नाम के सम्वत्सर में राजाओं में युद्ध होता है। रोग फैलता है। अन्न का भाव मध्यम रहता है। वृष्टि भी साधारण होती है और सभी लोग दुखी रहा करते हैं।।४६।।

प्रमाथी—

प्रमाथिवत्सरे तत्र मध्यसस्यार्धवृष्टयः।
प्रजानां जीवदुःखं स्यात् समात्सर्याः क्षितीश्वराः।।४७।।

प्रमाथी नाम के सम्वत्सर में अन्न का भाव मध्यम होता है और वृष्टि भी मध्यम होती है। लोग दुःखी रहते हैं और राजाओं में ईर्ष्या बढ़ जाती है।।४७।।

आनन्द—

आनन्दाब्देऽखिला लोकाः सर्वदानन्दचेतसः।
राजानः सुखिनः सर्वे बहुसस्यार्धवृष्टिभिः।।४८।।

आनन्द नाम के सम्वत्सर में सभी लोग सुखी रहते हैं। राजे भी सुखी रहते हैं। अन्न खूब होता है। वृष्टि भी अच्छी होती है।।४८।।

राक्षस—

स्वस्वकार्ये रताः सर्वे मध्यसस्यार्घवृष्टयः।
राक्षसाब्देऽखिला लोका राक्षसा इव निष्क्रियाः।।४९।।

राक्षस नाम के सम्वत्सर में सब लोग अपने—अपने काम में लगे रहते हैं। अन्न का भाव मध्यम रहता है और वृष्टि भी मध्यम होती है और इस वर्ष में सब लोग राक्षसों के समान आलसी होकर कोई सराहनीय कार्य नहीं कर पाते।।४९।।

नल—

नलाब्दे मध्यसस्यार्धवृष्टिभिः प्रवरा धरा।
नृपसंक्षोभसंजाता भूरितस्करभीतयः।।५०।।

नल नाम के सम्वत्सर में साधारण वृष्टि होने और साधारण तौर से अन्न होने से पृथ्वीतल के सब लोग मजे में रहते हैं। राजाओं में क्षोभ बढ़ जाता है और चोरों का भय रहा करता है।।५०।।

पिंगल—

पिंगलाब्दे त्वीतिभीतिर्मध्यसस्यार्घवृष्ट्यः।
राजानो विक्रमाक्रान्ता भुञ्जते शत्रवो धराम् ।।५१।।

पिंगल नाम के सम्वत् में अकाल का भय बना रहता है। अन्न और वृष्टि मध्यम होती है। राजाओं में लड़ाई होती है और शत्रुगण पृथ्वी पर राज्य करते हैं।।५१।।

काल—

वत्सरे कालयुक्ताख्ये सुखिनः सर्वजन्तवः।
सन्त्यथापि च सस्यानि प्रचुराणि तथा गदाः।।५२।।

काल नाम के सम्वत्सर में सदा जीव सुखी रहते हैं। अन्न खूब होता है। साथ ही बीमारियाँ भी विशेष होती हैं।।५२।।

सिद्धार्थ—

सिद्धार्थवत्सरे भूपा ज्ञानवैराग्यभागिनः।
सम्पूर्णा वसुधा भाति बहुसस्यार्घवृष्टिभिः।।५३।।

सिद्धार्थ नाम के सम्वत्सर में राजा तथा प्रजा इन दोनों में ज्ञान वैराग्य का प्रकाश दिखाई देता है। सारी पृथ्वी विशेष अन्न से पूर्ण होने के कारण सुन्दर दीखती है।।५३।।

रौद्र—

रौद्राब्दे नृपसंभूत–संक्षोभक्लेश–भागिनः।
सततं त्वखिला लोका भूपा मध्यसस्यार्घवृष्टयः।।५४।।

रौद्र नाम के सम्वत्सर में प्रजा को राजा की तरफ से क्षोभ तथा क्लेश ज्यादा मिलता है। अन्न मध्यम उत्पन्न होता है और मध्यम ही वृष्टि भी होती है।।५४।।

दुर्मति—

दुर्मत्यब्देऽखिला लोका भूपा दुर्मतयः सदा।
तथापि सुखिनः सर्वे संग्रामाः सन्ति चेदपि।।५५।।

दुर्मति नामके संवत्सर में राजा और प्रजा की बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है। यद्यपि इस वर्ष लड़ाइयाँ ज्यादा होती हैं, फिर भी लोग सुखी रहते हैं।।५५।।

दुन्दुभी—

सर्वसस्ययुता धात्री पालिता धरणीधरैः।
पूर्वदेशविनाशः स्यादस्मिन् दुन्दुभिवत्सरे।।५६।।

दुन्दुभी नाम के संवत्सर में पृथ्वी सब प्रकार के धान्य से पूर्ण रहती है और राजे शासन अच्छा करते हैं। किन्तु पूर्व देश का विनाश हो जाता है।।५६।।

रुधिरोद्गारी—

आहवे निहताः सर्वे भूपा रोगैस्तथा जनाः।
यथाकथञ्चिज्जीवन्ति रुधिरोद्गारिवत्सरे।।५७।।

रुधिरोद्गारी नाम के संवत् में सब राजे लड़ाई से ध्वस्त हो जाते हैं और प्रजा रोग से मर मिटती है। लोग किसी तरह जीवन की रक्षा कर पाते हैं।।५७।।

रक्ताक्षी—

रक्ताक्षिवत्सरे सस्यवृद्धिर्वृष्टिरनुत्तमा।
प्रेक्षते सर्वदान्योन्यं राजानो रक्तलोचनाः।।५८।।

रक्ताक्ष नाम के संवत्सर में साधारण वृष्टि होती है। इस वर्ष भर में हमेशा राजे आँख लाल किये एक दूसरे को देखते हैं।।५८।।

क्रोधन—

क्रोधनाब्दे मध्यवृष्टिः सर्वदेशे च वृष्टयः।
सम्पूर्णमितरे सर्वे भूपाः क्रोधपरायणाः।।५९।।

क्रोधन नाम के संवत्सर में वृष्टि तो साधारण होती है, पर होती सर्वत्र है। इस वर्ष राजा और प्रजा सभी लोग क्रोधपरायण रहते हैं।।५९।।

क्षय—

कार्पास-गन्ध-तैलेक्षु-मधु-सस्यविनाशनम्।
क्षीयमाणाश्चापि नरा जीवन्ति क्षयवत्सरे।।६०।।

क्षय नाम के संवत् में रूई, सुगन्ध की चीजें, तैल, ऊख, शहद और अन्न नष्ट हो जाता है। इस तरह विनष्ट होते हुए किसी प्रकार इस वर्ष लोग जीते हैं।।६०।।

अयन—

मकरादिकषट्भस्थे सूर्ये सौम्यायनं तथा।
कर्कादिराशिषट्कस्थे बुधैर्याम्यायनं स्मृतम्।।१।।

मकर आदि ६ राशि में सूर्य के रहने से सौम्यायन और कर्क आदि ६ राशि में याम्यायन कहलाता है।।१।।

गोलज्ञान—

मेषादिराशिषट्के च सौम्यगोलः प्रकीर्तितः।
तुलादिराशिषट्के तु याम्यगोलस्तथैव च।।२।।

मेष आदि ६ राशि सौम्य गोल और तुला आदि ६ राशि दक्षिण गोल कहलाता है।।२।।

ऋतुज्ञान—

मृगादिराशिद्वयभानुभोगात् षडर्तवः स्युः शिशिरो वसन्तः।
ग्रीष्मश्च वर्षाश्च शरच्च तद्वद्धेमन्तनामा कथितोऽपि षष्ठः।।३।।

मकर और कुम्भ में सूर्य के रहने पर शिशिर; मीन, मेष में वसन्त; वृष, मिथुन, में ग्रीष्म; कर्क, सिंह में वर्षा; कन्या, तुला में शरद; वृश्चिक, धनु में हेमन्त ऋतु होता है।।३।।

❁ अथ मासप्रकरण ❁

मासास्तु व्यवहारार्थं चतुर्धा परिकीर्तिताः।
दर्शाद्दर्शावधिश्चान्द्रः संक्रान्त्या सौर उच्यते।।१।।
नाक्षत्रो भदिनैरेवं सावनः सावनैर्दिनैः।
मेषादिस्थे रवौ यो यो मासश्चान्द्रः प्रपूर्यते।।२।।
राशीनां द्वादशत्वात्ते चैत्राद्या द्वादशैव हि।

३० दिन (अहोरात्र) का एक मास होता है। वह चार प्रकार का है- जैसे अमावस्या से अमावस्यातक ३० तिथियों का चान्द्रमास तथा संक्रान्ति से संक्रान्ति तक सौर मास। नक्षत्र दिन से ३० दिन का नाक्षत्र मास और ३० सावन दिन का सावनमास होता है। मेषादि द्वादश राशियों में सूर्य के रहने से जो-जो चान्द्रमास पूरा होता है वे ही चैत्रादि नामसे १२ मास होते हैं।।१-२।।

मासनाम—

मासश्चैत्रश्च वैशाखो ज्येष्ठश्चाषाढसंज्ञकः।।३।।
श्रावणश्चैव भाद्राख्य आश्विनः कार्तिकस्तथा।
मार्गशीर्षश्च पौषश्च माघश्च फाल्गुनस्तथा।।४।।

चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़, श्रावण, भाद्र, आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष, पौष, माघ और फाल्गुन ये बारहो महीनों की संज्ञा है।।३-४।।

अधिकमास—

यस्मिन् चान्द्रे न संक्रान्तिः सोऽधिमासो निगद्यते।
तत्र मंगलकार्याणि नैव कुर्यात् कदाचन।।५।।

जिस चान्द्रमास में सूर्य की संक्रान्ति न हो वह अधिमास कहलाता है, उसमें कदापि विवाहादि शुभ कार्य न करें।।५।।

अधिक (मल) मास पलटने के समय—

द्वात्रिंशता गतैर्मासैर्दिनैः षोडशभिस्तथा।
घटिकानां चतुष्केण पतत्येकोऽधिमासकः।।६।।

मध्यम सौरमांन से ३२ मास १६ दिन ४ घड़ी पर एक-एक अधिमास हुआ करता है।।६।।

क्षयमास—

यस्मिन् मासे द्विसंक्रान्तिः क्षयमासः स कथ्यते।
तस्मिन् शुभानि कार्याणि यत्नतः परिवर्जयेत्।।७।।

जिस चान्द्र मास में सूर्य की दो संक्रान्ति हो वह क्षयमास होता है, उसमें शुभ कार्य वर्जित है।।७।।

विशेष—

तिथ्यर्धे प्रथमे पूर्वो द्वितीयेऽर्धे तथोत्तरः।
मासाविति बुधैर्ज्ञेयौ क्षयमासस्य मध्यगौ।।८।।

क्षयमास में तिथि के पूर्वार्ध में पूर्वमास और तिथि के उत्तरार्ध में अग्रिममास जानना चाहिये। अर्थात् क्षयमास में तिथि के पूर्वार्ध में किसी का मरणादि हो तो उसकी एकोद्दिष्टादिक क्रिया उस मांसकी उसी तिथि में और उत्तरार्ध में मरणादि हो तो अग्रिममास में उसका मरण समझा जायगा तथा अग्रिम मास ही में उसकी एकोद्दिष्टादि क्रिया होगी।।८।।

शाके में अधिमास जानने का चक्र—

शाके	अधिमास	शाके	अधिमास	शाके	अधिमास
१८८०	श्रावण	१९१०	ज्येष्ठ	१९४०	ज्येष्ठ
१८८३	ज्येष्ठ	१९१३	वैशाख	१९४२	आश्विन
१८८५	आश्विन	१९१५	भाद्रपद	१९४५	श्रावण
१८८८	श्रावण	१९१८	आषाढ़	१९४८	ज्येष्ठ
१८९१	आषाढ़	१९२१	ज्येष्ठ	१९५०	कार्तिक
१८९४	वैशाख	१९२३	आश्विन	१९५३	भाद्रपद
१८९६	भाद्रपद	१९२६	श्रावण	१९५६	आषाढ़
१८९९	आषाढ़	१९२९	ज्येष्ठ	१९५९	ज्येष्ठ
१९०२	ज्येष्ठ	१९३२	वैशाख	१९६१	आश्विन
१९०४	अश्विन	१९३४	भाद्रपद	१९६४	भाद्रपद
१९०७	श्रावण	१९३७	आषाढ़	१९६७	ज्येष्ठ

अधिमास जानने की रीति—

शाकः षड्रसभूपकैर्विरहितो नन्देन्दुभिर्भाजितः
शेषेऽग्नौ च मधुः शिवे तदपरो ज्येष्ठोऽम्बरे चाष्टके।
आषाढो नृपतौ नभश्च शरके विश्वे नभस्यस्तथा
बाहौ चाश्विनसंज्ञको मुनिवरैः प्रोक्तोऽधिमासः क्रमात्।।९।।

शाके की संख्या में १६६६ घटाकर शेष में १९ के भाग देने से ३ शेष बचे तो चैत्र, ११ शेष बचे तो वैशाख, १० या ८ शेष बचे तो ज्येष्ठ, १६ शेष, बचे तो आषाढ़, ५ शेष में श्रावण, १३ शेष में भाद्रपद, और २ शेष बचे तो आश्विन में अधिमास समझना। अन्य शेष बचे तो उस शाके में अधिमास नहीं कहना चाहिये।।९।।

उदाहरण— शाके १८८० में अधिमास देखना है तो इसमें १६६६ घटांने से २१४ बचा इसमें १९ के भाग देने से शेष ५ बचता है। अत: श्रावण में अधिमास की सम्भावना समझनी चाहिये।

पक्षे—

मासे शुक्लश्च कृष्णश्च द्वौ पक्षौ परिकीर्तितौ।
सायं दृष्टविधुः शुक्लः कृष्णः पक्षोऽपरः स्मृतः।।१०।।

एक मास में दो पक्ष होते हैं, जिसमें सायंकाल से ही चन्द्रमा दृश्य हो वह शुक्ल और दूसरा कृष्णपक्ष कहलाता है।।१०।।

❀ अथ तिथिप्रकरणम् ❀

तिथिनाम—

प्रतिपच्च द्वितीया च तृतीया तदनन्तरम्।
चतुर्थी पञ्चमी षष्ठी सप्तमी चाष्टमी तथा।।१।।
नवमी दशमी चैकादशी च द्वादशी तथा।
त्रयोदशी ततः प्रोक्ता ततो ज्ञेया चतुर्दशी।।२।।
तिथिः पञ्चदशी शुक्ले पूर्णिमा परिकीर्त्यते।
कृष्णे पञ्चदशी या च साऽमावास्या निगद्यते।।३।।

प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पंचमी, षष्ठी, सप्तमी, अष्टमी, नवमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी चतुर्दशी और पंचदशी, (शुक्लपक्ष की पञ्चदशी पूर्णिमा और कृष्णपक्ष की पञ्चदशी अमावस्या कहलाती है)।।१-३।।

तिथियों के स्वामी—

तिथीशोऽग्निर्विधिर्गौरी गणेशोऽहिर्गुहो रविः।
शिवो दुर्गान्तको विश्वे हरिः कामः शिवः शशी।।४।।

प्रतिपदा के अग्नि, २ के ब्रह्मा, ३ के गौरी, ४ के गणेश, ५ के सर्प, ६ के कार्तिकेय, ७ के सूर्य, ८ के शिव, ९ के दुर्गा, १० के यम, ११ के विश्वेदेव, १२ के विष्णु, १३ के कन्दर्प, १४ के महादेव, १५ के चन्द्रमा और अमावस्या के स्वामी पितर भी हैं।।४।।

तिथि की नन्दादिक संज्ञा—

नन्दाख्या प्रतिपत् षष्ठी तथा चैकादशी स्मृता।
भद्रासंज्ञा द्वितीया च सप्तमी द्वादशी तथा।।५।।
जयाख्या च तृतीया स्यादष्टमी च त्रयोदशी।
तथा रिक्ता चतुर्थी च नवमी च चतुर्दशी।।६।।
पूर्णा पञ्चदशी प्रोक्ता पञ्चमी दशमी तथा।
एवं पञ्चविधास्तिथ्यो नामतुल्यफलप्रदाः।।७।।

दोहा— प्रतिपद और एकादशी, षष्ठी नन्दा जान।
दूज, सप्तमी, द्वादशी, ये भद्रातिथि मान।।५।।
जया तृतीया अष्टमी, त्रयोदशी ये तीन।
नवमी चौथ चतुर्दशी, है रिक्ता फलहीन।।६।।
पंचदशी अरु पंचमी, दशमी पूर्णा नाम।
सब तिथियों के नाम सम, जानो फल परिणाम।।७।।

अथ नन्दादि तिथियों के कर्तव्य—

नन्दासु चित्रोत्सववास्तुतन्त्र क्षेत्रादि कुर्वीत तथैव नृत्यम्।
विवाहभूषाशकटाध्वयाने भद्रासु चैतान्यपि पौष्टिकानि।।८।।

नन्दातिथि में चित्रकर्म, उत्सव, वास्तु, तन्त्र, खेती, नाच-तमाशा, विवाह तथा गाड़ी आदि वाहनों पर चढ़ना शुभ हैं। भद्रातिथि में उपरोक्त कार्य शुभ है तथा पौष्टिककर्म भी करे।।८।।

जयासु संग्रामबलोपयोगिकार्याणि सिद्ध्यन्ति विनिर्मितानि।
रिक्तासु तद्वद्वधबन्धनादि विषाग्निशस्त्राणि च यान्ति सिद्धम्।।९।।

जयातिथि में संग्राम के लिये उपयोगी कार्य सब सिद्ध होते हैं तथा रिक्ता में वध, बन्धन आदि, विष अग्नि सम्बन्धी और शस्त्र बनाये हुए शुभ होते हैं।।९।।

पूर्णासु मांगल्यविवाहयात्रासपौष्टिकं शान्तिककर्म कार्यम्।
सदैव दर्शे पितृकर्म मुक्त्वा नान्यद्विदध्याच्छुभमङ्गलानि।।१०।।

पूर्णा तिथि में माङ्गल्य, विवाह, यात्रा तथा पौष्टिक सहित शांति कर्म करे। परं च अमावस्यामें केवल पितृकर्म छोड़कर और कोई कार्य न करे।

अमावस्या के भेद—

सिनीवाली-कुहूभेदादमावास्या द्विधा भवेत्।
सा दृष्टेन्दुः सिनीवाली सा नष्टेन्दुकला कुहूः।।११।।

अमावस्या के दो भेद हैं जिसमें चन्द्रमा की कला दृष्ट हो वह सिनीवाली और जिसमें चन्द्रमाकी कला नष्ट रहे वह कुहू कहलाती है।

सत् असत्तिथियाँ—

द्वादशी चैव दर्शश्च रिक्ता षष्ठी तथाऽष्टमी।
असत्तिथ्यो बुधैः प्रोक्ता शेषाः सत्तिथयः स्मृताः।।१२।।

१२, ३०, ४, ९, १४, ६, ८ ये असत्तिथियाँ हैं और बाकी (१, २, ३, ५ ७, १०, ११, १३, १५) ये सत्तिथियाँ हैं।।१२।।

तिथि की संज्ञा आदि जानने का चक्र

तिथि	१	२	३	४	५	
संज्ञा	नन्दा	भद्रा	जया	रिक्ता	पूर्णा	
स्वामी	अग्नि	ब्रह्मा	गौरी	गणेश	सर्प	
शुक्ल	अशुभ					
कृष्ण	शुभ					
तिथि	६	७	८	९	१०	
संज्ञा	नन्दा	भद्रा	जया	रिक्ता	पूर्णा	
स्वामी	कार्तिकेय	सूर्य	शिव	दुर्गा	यम	
शुक्ल	मध्यम					
कृष्ण	मध्यम					
तिथि	११	१२	१३	१४	१५	३०
संज्ञा	नन्दा	भद्रा	जया	रिक्ता	पूर्णा	पूर्णा
स्वामी	विश्वे	विष्णु	कंदर्प	शिव	चन्द्र	पितर
शुक्ल	शुभ					
कृष्ण	अशुभ					

पर्वदिन—

अमावास्याष्टमी चैव पूर्णिमा च चतुर्दशी।
एतानि पञ्च पर्वाणि रविसंक्रान्तिगं दिनम्।।१३।।

अमावस्या, अष्टमी, पूर्णिमा, चतुर्दशी, रविसंक्रान्ति का दिन ये ५ पर्व दिन हैं।।१३।।

अथ सिद्धियोग—

शुक्रे नदा बुधे भद्रा शनौ रिक्ता कुजे जया।
गुरौ पूर्णा दैवज्ञैः सिद्धियोगाः प्रकीर्तिताः।।१४।।

शुक्र में नन्दा, बुध में भद्रा, मङ्गल में जया, शनि में रिक्ता और गुरुवार में पूर्णा होने से सिद्धि योग होता है।।१४।।

अथ अमृतयोग—

रवौ सोमे तथा पूर्णा कुजे भद्रा गुरौ जया।
तथा बुधे शनौ नन्दा शुके रिक्तामृताऽह्वया।।१५।।

रवि और सोम में पूर्णा, मङ्गल में भद्रा, बृहस्पति में जया, शुक्र में रिक्ता तथा बुध और शनि में नन्दा ये अमृत योग हैं।।१५।।

अथ अमृत और मतान्तर से मृत्यु योग—

नन्दा रवौ कुजे चैव भद्रा भार्गवसोमयोः।
बुधे जया गुरौ रिक्ता शनौ पूर्णा च मृत्युदा।।१६।।

रवि और मङ्गलमें नंदा, शुक्र और सोम में भद्रा, बुधमें जया, बृहस्पति मे रिक्ता, शनिवार में पूर्णा ये अमृत तथा मतान्तर से मृत्युयोग हैं।।१६।।

तिथियों में वर्ज्य—

तैलं विवर्जयेत् षष्ठ्यामष्टम्यां मांसमेव च।
क्षौरक्रिया चतुर्दश्यां दर्शे स्त्रीसेवनं तथा।।१७।।

षष्ठी में तैल, अष्टमी में मांस, चतुर्दशी में क्षौर, अमावस्या में स्त्री प्रसंग न करे।।१७।।

दोष परिहार—

शनौ षष्ठयां स्मृतं तैलं महाष्टम्यां पलाशनम्।
क्षौरं शुक्लचतुर्दश्यां दीपमाल्यां च मैथुनम्।।१८।।

शनिवार में षष्ठी हो तो तैल लगाने में, अश्विन शुक्ल महाष्टमी में मांस खाने में, शुक्लपक्षकी चतुर्दशी में क्षौर कराने में और दीपमालिका की अमावस्या में स्त्री संभोग करने में दोष नहीं है।।१८।।

अथ दग्ध तिथि

मीने चापे द्वितीया च चतुर्थी बृषकुम्भयोः।
मेषमर्कटयोः षष्ठी कन्यायां मिथुनेऽष्टमी।।१९।।
दशमी वृश्चिके सिंहे द्वादशी मकरे तुले।
एताश्च तिथियो दग्धाः शुभे कर्मणि वर्जिताः।।२०।।

मीन और धनुराशि में सूर्य रहें तो द्वितींया, वृष कुम्भ में ४, मेष कर्क में ६, कन्या मिथुन में ८, वृश्चिक सिंह में १० मकर तुला में १२ ये दग्ध तिथियाँ शुभ कार्य में वर्जित हैं।।१९—२०।।

इति तिथिप्रकरणम्।

❀ अथ नक्षत्र प्रकरण ❀

नक्षत्रों के नाम—

अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुण्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, (अभिजित्)* श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रापदा, उत्तराभाद्रपदा, रेवती।

अश्विन्यादि नक्षत्रों के स्वामी

दस्रो यमोऽनलो ब्रह्मा शशी रुद्रोऽदितिर्गुरुः।
सर्पश्च पितरश्चैव भगश्चाथोऽर्यमा रविः।।१।।

* टिप्पणी—ताराविचार, राशि विचार आदि में अभिजित् की गणना नहीं होती है इसलिये नक्षत्र की संख्या २७ ही प्रसिद्ध है कहा भी है "उत्तराषाढ़तुर्यांशुः श्रुतिपञ्चदशांशकः। कथितः चाभिजिन्मानं पुराणगणकोत्तमैः" अर्थात् उत्तराषाढ़ के अंतिम चतुर्थांश श्रवण के पंचदशांश अभिजित् का मान है।

त्वष्टा वायुश्च शक्राग्नी मित्रः शक्रश्च राक्षसः।
जलं विश्वे विधिश्चैव विष्णुश्च वसुरम्बुजः।।२।।
अजपादस्त्वहिर्बुध्न्यः पूषा चैते यथाक्रमम्।
अश्विन्यादिकभानां हि स्वामिनः परिकीर्तिताः।।३।।

अश्विनी के स्वामी दस्र (अश्विनी कुमार), भरणी के यम, कृत्तिका के अग्नि, रोहिणी के ब्रह्मा, मृगशिरा के चन्द्रमा, आर्द्रा के शिव, पुनर्वसु के अदिति, पुष्य के गुरु, श्लेषाके सर्प, मघाके पितर, पूर्वाफाल्गुनीके भग (सूर्य विशेष), उत्तराफाल्गुनीके अर्यमा (सूर्य विशेष), हस्तके रवि, चित्राके त्वष्टा, स्वाती के वायु, विशाखा के इन्द्र और अग्नि दोनों, अनुराधाके मित्र, ज्येष्ठा के इन्द्र, मूल के राक्षस, पूर्वाषाढ़ाके जल, उत्तराषाढ़ा के विश्वेदेव, आभिजित् के विधि, श्रवणके विष्णु, धनिष्ठा के वसु, शतभिषाके वरुण, पूर्वाभाद्रपदा के अजपाद, उत्तराभाद्रपदा के अहिर्बुध्न्य, रेवतीके स्वामी पूषा हैं।।१—३।।

अथ नक्षत्रों की ध्रुवादि संज्ञा

उत्तरात्रयरोहिण्यो भास्करश्च ध्रुवं स्थिरम्।
तत्र स्थिरं बीजगेहशान्त्यारामादिसिद्धये।।४।।

तीनों उत्तरा, रोहिणी और रविवार ये ध्रुव और स्थिर संक्षक हैं, इनमें स्थिर कार्य बीजवपन, शान्ति, बगीचा लगाना और आदि शब्द से मृदुसंज्ञक नक्षत्रोक्त कर्म सिद्ध होता है।।४।।

स्वात्यादित्ये श्रुतेस्त्रीणि चन्द्रश्चापि परं चलम्।
तस्मिन् गजादिकारोहो वाटिका गमनादिकम्।।५।।

स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, घनिष्ठा, शतभिषा और सोमवार ये चर और चल संज्ञक है, इनमें हाथी आदि पर चढ़ना, वाटिका लगाना, यात्रा करना, आदि शब्दों से लघुसंज्ञक नक्षत्र में कहा हुआ कर्म भी शुभ है।।५।।

पूर्वात्रयं याम्यमघे उग्रं क्रूरं कुजस्तथा।
तस्मिन् घाताग्निशाठ्यानि विषशस्त्रादि सिद्ध्यति।।६।।

तीनों पूर्वा (पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़, पूर्वाभाद्र) भरणी, मघा और मगंलवार ये उग्र, क्रूरसंज्ञक हैं। इनमें घात कर्म, अग्निदाह, शठता, विष सम्बन्धित कर्म, शस्त्र, आदि शब्द से दारुण नक्षत्रोक्त कर्म शुभ हैं।।६।।

विशाखाग्नेयभे सौम्यो मिश्रं साधारणं स्मृतम्।
तत्राग्निकार्यं मिश्रञ्च वृषोत्सर्गादि सिद्धये।।७।।

विशाखा, कृत्तिका और बुधवार ये मिश्र और साधारण संज्ञक हैं। इनमें अग्नि सम्बन्धी कर्म मिश्रित कार्य, वृषोत्सर्ग, आदि शब्द से उग्र नक्षत्रोक्त कर्म शुभ हैं।।७।।

हस्ताश्विपुष्याभिजितः क्षिप्रं लघु गुरुस्तथा।
तस्मिन् पण्यरतिज्ञानं भूषाशिल्पकलादिकम्।।८।।

हस्त, अश्विनी, पुण्य, अभिजित् और गुरुवार ये क्षिप्र और लघुसंज्ञक हैं। इनमें दुकान, रति, ज्ञान, शिल्प (चित्रकारी) कला कर्म आदि और चर नक्षत्रोक्त कर्म शुभ हैं।।८।।

मृगान्त्यचित्रा मित्रर्क्षं मृदु मैत्रं मृदुस्तथा।
तत्र गीताम्बरक्रीडामित्रकार्यं विभूषणम्।।९।।

मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा और शुक्रवार ये मृदु और मैत्रनामक हैं। इनमें गीत वस्त्र, क्रीड़ा, मित्रके कार्य, भूषण धारण करना शुभ है।।९।।

मूलेन्द्रार्द्राहिभं सौरिस्तीक्ष्णं दारुणसंज्ञकम।
तत्राभिचारघातोग्रभेदाः पशुदमादिकम्।।१०।।

मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, श्लेषा, और शनिवार, ये तीक्ष्ण और दारुण संज्ञक हैं। इनमें अभिचार, घात, पापकर्म, चुगलपन, पशुओं को शिक्षा आदि शब्द से बंधन आदि शुभ होते हैं।।१०।।

नक्षत्रों की अन्धादि संज्ञा

अन्धाक्षं वसुपुष्यधातृजलमद्वीशार्यमान्त्याभिधं
मंदाक्षं रविविश्वमित्रजलपाश्लेषाश्वि चान्द्रं भवेत्।
मन्दाक्षं शिवपित्रजैकचरणत्वाष्ट्रेन्द्रविध्यन्तकं
स्वक्षं स्वात्यदितिश्रवोदहनभाहिर्बुध्न्यरक्षोभगम्।।११।।

धनिष्ठा, पुष्य, रोहिणी, पूर्वाषाढा, विशाखा, उत्तराफाल्गुनी, रेवती ये अन्धसंज्ञ हैं। हस्त, उत्तराषाढा, अनुराधा, शतभिषा ऽश्लेषा, अश्विनी, मृगशिरा ये मन्दाक्ष हैं। आर्द्रा, मघा, पूर्वभाद्र, चित्रा, ज्येष्ठा, अभिंजित्, भरणी ये मध्यनेत्र हैं। स्वाती, श्रवण, कृत्तिका, उत्तरभाद्र, मूल, पूर्वाफाल्गुनी ये सुलोचन संज्ञक हैं।।११।।

प्रयोजन नष्ट लाभ ज्ञान—

विनष्टार्थस्य लाभोऽन्धे शीघ्रं मन्दे प्रयत्नतः।
स्याद् दूरे श्रवणं मध्ये श्रु त्याप्ती न सुलोचने।।१२।।

अन्ध नक्षत्रमें नष्ट हुई चीज शीघ्र मिलती है, मन्दनक्षत्रों में यत्न करने से, मध्य नक्षत्र में नष्ट वस्तु की खबर मात्र हो प्राप्ति नहीं हो, और सुलोचन नक्षत्रोंमें नष्ट हुई चीजों की खबर और प्राप्ति कुछ भी नहीं होती है।।१२।।

अथ पञ्चक (भदवा)

पञ्च भानि धनिष्ठातः पञ्चकं परिकीर्त्यते।
गृहार्थं तृणकाष्ठानां संग्रहं तत्र वर्जयेत्।।१३।।

धनिष्ठादि पाँच नक्षत्र पञ्चक कहलाता है, इन नक्षत्रों में गृह बनाने के लिये तृण काष्ठ का संग्रह आदि न करे।।१३।।

पञ्चक में मतान्तर—

न गच्छेद्दक्षिणामाशां षट्के च श्रवणादिके।
गृहार्थ तृणकाष्ठादेः शय्यादेः संग्रहं त्यजेत्।।१४।।

श्रवण आदि ६ नक्षत्रों में दक्षिण दिशा की यात्रा, गृह के लिये तृण काष्ठ का संग्रह और शय्या आदि बनवाना त्याग करे ।।१४।।

अथ परिहार—

वस्वादौ शतभे मध्ये पूर्वादौ चोत्तरान्तके।
पञ्च घटीः प्राज्ञो रेवतीं सकलां त्यजेत्।।१५।।

धनिष्ठा के आदि की, शतभिषा के मध्य की, पूर्वभाद्रपद के आदि की, उत्तरभाद्रपद के अन्त की पाँच—पाँच घटी त्याज्य हैं और रेवती सम्पूर्ण त्याज्य है।।१५।।

अथ वारनक्षत्रभव अमृतयोग—

हस्तः सूर्ये मृगश्चन्द्रे रेवती कुजवासरे।
अनुराधा बुधे पुष्यो गुरुवारे तथैव च।।१६।।
अश्विनी भृगुवारे च रोहिणी शनिवासरे।
योगश्चामृतसंज्ञोऽयं प्राचीनैः परिकीर्तितः।।१७।।

रविवार में हस्त, सोम में मृगशिरा, मंगल में रेवती, बुध में अनुराधा, गुरुवार में पुष्य, शुक्र में अश्विनी, शनि में रोहिणी ये अमृतयोग हैं।।१६-१७।।

अथ शुभयोग—

मूलं रवौ पुष्यकरोत्तराणि वेधा मृगाङ्कः श्रवणश्च सोमे।
कृशानुपुष्योत्तरभानि भौमे बुधेऽनुराधा वरुणः कृशानुः।।१८।।

बृहस्पतौ पुष्यपुनर्वसू च भगोऽश्विनी च श्रवणश्च शुक्रे।
शनैश्चरे स्वातिपितामहौ च योगाः किलैते शुभदायिनःस्युः।।१९।।

रवि में मूल, पुष्य, तीनों उत्तरा, सोम में रोहिणी मृगशिरा और श्रवण, तथा मंगल में कृत्तिका पुष्य, तीनों उत्तरा, बुध में अनुराधा, शतभिषा कृत्तिका, बृहस्पति में पुष्य, पुनर्वसु, शुक्र में पूर्वाफल्गुनी, अश्विनी श्रवण, शनैश्चर में स्वाती, रोहिणी ये शुभ योग हैं।।१८-१९।।

अथ सर्वार्थसिद्धियोग—

सूर्येऽर्कमूलोत्तरपुष्यदास्रं चन्द्रे श्रु तिब्राह्मशशीज्यमैत्रम्।
भौमेऽश्व्यहिर्बुध्न्यकृशानुसार्पं ज्ञ ब्रह्ममैत्रार्ककृशानुचान्द्रम्।।२०।।
जीवेऽन्त्यमैत्राश्व्यदितीज्यधिष्ण्यं शुक्रेन्त्यमैत्राश्व्यदितिश्रवोमम्।
शनौ श्रु तिब्राह्मसमीरमानि सर्वार्थसिद्ध्यै कथितानि पूर्वैः।।२१।।

रविवार में हस्त मूल तीनों उत्तरा पुष्य अश्विनी, सोम में श्रवण रोहिणी, मृगशिरा और अनुराधा, मंगलवार में अश्विनी उत्तराभाद्र कृत्तिका आश्लेषा, बुधवार में रोहिणी अनुराधा कृत्तिका हस्त मृगशिरा, बृहस्पति में रेवती अनुराधा अश्विनी पुनर्वसु पुष्य, शुक्र में रेवती अनुराधा अश्विनी पुनर्वसु श्रवण, शनि में रोहिणी स्वाती श्रवण ये प्राचीनाचार्यों ने सर्वार्थसिद्धियोग कहे हैं।।२०-२१।।

अथ भवारोत्थ मृत्युयोग—

त्याज्यंरविमनुराधेवैश्वदेवेच सोमं शतभिषजिचभौमं चंद्रजंचापि दस्रे।
मृगशिरसि सुरेज्यं सर्पदेवेचशुक्रं रविसुतमपिहस्तेमृत्युयोगाभिधानम्।।

रविवार में अनुराधा, सोम में उत्तराषाढ़, मंगल में शतभिषा, बुध में अश्विनी, बृहस्पति में मृगशिरा, शुक्र में आश्लेषा, शनि में हस्त ये मृत्युयोग हैं। इसलिए इनका त्याग करना चाहिये।।२२।।

अथ यमघंटयोग—

स्वाती मघा रवौ चन्द्रे पुष्यः श्लेषा तथैव च।
मंगले भरणी मैत्रं बुधे चार्द्रा तथार्यमा।।२३।।
गुरौ च रेवती मूलं शुक्रे स्वाती च रोहिणी।
यमघण्टो बुधैः प्रोक्तः शतभं श्रवणः शनौ।।२४।।

रवि में, स्वाती, मघा, सोममें पुष्य, श्लेषा, मंगलमें भरणी अनुराधा, बुध में आर्द्रा, उत्तराफाल्गुनी, बृहस्पति में रेवती, मूल, शुक्र में स्वाती रोहिणी, शनि में शतभिषा, श्रवण ये यमघण्ट हैं।।२३-२४।।

अथ अशुभयोग परिहार—

यमघण्टे त्यजेदष्टौ मृत्यौ द्वादशनाडिकाः।
अन्येषु पापयोगेषु मध्याह्नात्परतः शुभम्।।२५।।

यमघंट में आरम्भ ८ घड़ी, मृत्युयोग में १२ घड़ी त्याग करे और दूसरे पापयोगों में मध्याह्न से पश्चात् शुभ होता है।।२५।।

आनन्दादि अष्टविंशतियोग जानने का प्रकार—

दास्राादर्के मृगादिन्दौ सार्पाद्भौमे करादूबुधे।
मैत्राद्गुरौ भृगौ वैश्वाद्गण्या मन्दे च वारुणात्।।२६।।

रविवार में अश्विनी आदिक अभिजित् सहित २८ नक्षत्र आनन्द आदि २८ योग होते हैं, सोमवार में मृगशिरा से, मंगल में आश्लेषा से, बुध में हस्त से, गुरुवार में अनुराधा से, शुक्रवार में उत्तराषाढ़ा से, और शनिवार में शतभिषा से गणना करनी चाहिये।।२६।।

अथ आनन्दादि योगों के नाम—

आनन्दाख्यः कालदण्डश्च धूम्रो धाता सौम्यो ध्वांक्षकेतू क्रमेण।
श्रीवत्साख्यो वज्रकं मुद्गरश्च छत्रं मित्रं मानसं पद्मलुम्बौ।।२७।
उत्पातमृत्यू किल काणसिद्धिः शुभोऽमृताख्यो मुसलं गदश्च।
मातङ्गरक्षश्चरसुस्थिराख्यप्रवर्धमानाः फलदा; स्वनाम्ना।।२८।

आनन्द कालदण्ड, धूम्र, धाता, सौम्य, ध्वांक्ष, केतु, श्रीवत्स, वज्र, मुद्गर, छत्र, मित्र, मानस, पद्म, लुम्ब, उत्पात, मृत्यु, काण,सिद्धि, शुभ, अमृत, मुसल, गद, मातङ्ग, रक्ष, चर, सुस्थिर, प्रवर्धमान ये २८ योग अपने नाम के तुल्य फल देनेबाले हैं।।२७- २८।।

आनन्दादि योगों का फल—

सिद्धिर्मृत्युर्भयं सौख्य शुभं चारिष्टमेव च।
सिद्धिः शुभं कलिर्घातो मनोवाञ्छितजं फलम्।।२९।।
सौख्यं धनं शुभं कर्महानिर्विघ्नं मृतिस्तथा।
धनक्षतिर्धनप्राप्तिः सर्वसौख्यं तथैव च।।३०।।

शुभं मानक्षयो रोगो वाहनं चाशुभं तथा।
चालनं तोषणं वृद्धिरानन्दादिफलं क्रमात्।।३१।।

ये क्रम से नन्दादि योगों के फल हैं।।२९-३१।।

जैसे—सोमवार में पुष्य नक्षत्र है तो आनन्दादि योगों में कौनसा योग होगा तो यहाँ 'मृगादिन्दौ' इस उपरोक्त नियमके अनुसार मृगशिरा से पुष्य तक गिननेसे चार हुआ तो आनन्दादि से चौथा धाता कामक योग हुआ। इसका फल सौख्य है, इसलिये सोमवार का पुष्य नक्षत्र शुभ हुआ। इसी प्रकार सब वारों में समझना।

इति नक्षत्र प्रकरण।

—: ० :—

योग जानने का उदाहरण—

।। अथ योगप्रकरण ।।

योग जानने की रीति

यस्मिन्नृक्षे स्थितो भानुर्यत्र तिष्ठति चन्द्रमाः।
एकीकृत्य त्यजेदेकं योगा विष्कम्भकादयः।।१।।

जिस नक्षत्र में सूर्य हो और जिस नक्षत्र में चन्द्रमा हो दोनों की नक्षत्र संख्या के जोड़में एक घटाकर विष्कम्भादिक योग होते हैं, संख्या यदि २७ से अधिक हो तो २७ घटाकर शेष विष्कम्भादि योग समझना।।१।।

विष्कम्भ योगों के नाम—

विष्कम्भः प्रीतिरायुष्मान्सौभाग्यः शोभनस्तथा।
अतिगण्डः सुकर्माख्यो धृतिः शूलस्तथैव च।।२।।
गण्डो वृद्धिर्ध्रुवश्चैव व्याघातो हर्षणस्तथा।
वज्रः सिद्धिर्व्यतीपातो वरीयान्परिघः शिवः।।३।।
सिद्धिः साध्यः शुभः शुक्लो ब्रह्मैन्द्रो वैधृतिस्तथा।
सप्तविंशतियोगास्ते स्वनामफलदाः स्मृताः।।४।।

विष्कम्भ, प्रीति, आयुष्मान, सौभाग्य, शोभन, अतिगण्ड, सुकर्मा, धृति, शूल, गण्ड, वृद्धि, ध्रुव, व्याघात, हर्षण, वज्र, सिद्धि, व्यतीपात, वरीयान् परिघ, शिव, सिद्ध, साध्य, शुभ, शुक्ल, ब्रह्म, ऐन्द्र, वैधृति, ये २७ योग अपने-अपने नाम के सदृश फलदायक हैं।।२-४।।

अशुभ योग परिहार—

विरुद्धयोगेषु सदाद्यपादः शुभेषु कार्येषु विवर्जनीयः।
सवैधृतिस्तु व्यतिपातयोगः सर्वोऽप्यनिष्टः परिघस्य चार्धम्।।५।।
तिस्रस्तु विष्कम्भकवज्रयोश्च व्याघातसंज्ञे नव पञ्च शूले।
गण्डातिगण्डे च षडेव नाडयः शुभेषु कार्येषु विवर्जनीयाः।।६।।

शुभकार्य में अशुभ योग का प्रथम चरण त्याग करना चाहिये, वैधृति और व्यतीपात समस्त वर्जनीय है। परिघ योग का पूर्वार्ध, तथा विष्कम्भ और वज्रयोग के आदि की तीन-तीन घड़ी; व्याघात में ९ घड़ी, शूल में ५ घड़ी , गण्ड अतिगण्ड में ६ घड़ी त्याग करना चाहिये।।५-६।।

इति योग प्रकरण।

—: ० :—

❁ अथ करणप्रकरण ❁

चलकरणानयन—

गततिथ्यो द्विनिघ्न्यश्च सप्तभक्ताश्च शेषकम्।
बवाद्यं करणं पूर्वे भागे सैकं तथोत्तरे।।१।।

शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से गिनकर गत तिथि को २ गुना करके सात का भाग देने से जो शेष बचे वे बवादिक करण वर्तमान तिथि के पूर्वार्ध में होते हैं और १ जोड़ने से उत्तरार्ध में करण होता है।।१।।

अथ करण नाम—

बवाह्वयं बालवकौलवाख्ये ततो भवेत्तैतिलनामधेयम्।
गराभिधानं वणिजं च विष्टिरित्याहुरार्याः करणानि सप्त।।२।।

बव, बालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज और विष्टि ये सात चल करण है।।२।।

अथ स्थिर करण—

स्थिराणि शकुनिर्नागे तृतीयं तु चतुष्पदम्।
किंस्तुघ्नं तु चतुर्दश्याः कृष्णायाश्चापरार्धतः।।३।।

कृष्णपक्ष की चतुर्दशी के उत्तरार्ध में शकुनि, अमावस्या के पूर्वार्ध में नाग, उत्तरार्ध में चतुष्पद और शुक्लपक्ष की प्रतिपदा के पूर्वार्ध में किंस्तुघ्न नामक करण होता है, ये चार स्थिर करण हैं।।३।।

बवादीनि ततः सप्त चराख्यकरणानि च।
तिथ्यर्धभोगं सर्वेषां करणानां प्रकल्पयेत्।।४।।

शुक्लपक्ष की प्रतिपदा के उत्तरार्ध से कृष्णपक्ष की चतुर्दशी के पूर्वार्ध पर्यन्त बवादिक सातों चल करण महीने में आठ आवृत्ति करके भोग करते हैं। और तिथि के आधे सब करणों का मान है।।४।।

स्पष्टार्थ के लिये नीचे चक्र देखिये—

कृष्णपक्ष तिथि करण ज्ञान चक्र—

कृष्णपक्ष तिथि		१	२	३	४	५	६	७
पूर्वार्ध—		बाल	तैति	वणि	बव	कौल	गर	विष्टि
उत्तरार्ध—		कौल	गर	विष्टि	बाल	तैति	वणि	बव
कृष्णपक्ष तिथि	८	९	१०	११	१२	१३	१४	३०
पूर्वार्ध—	बाल	तैति	वणि	बव	कौल	गर	विष्टि	चतु
उत्तरार्ध—	कौल	गर	विष्टि	बाल	तैति	वणि	शकु	नाग

शुक्लपक्ष तिथि करण—

शुक्लपक्ष तिथि	१	२	३	४	५	६	७	८
पूर्वार्ध—	किंतु	बाल	तैति	वणि	बव	कौल	गर	विष्टि
उत्तरार्ध—	बव	कौल	गर	विष्टि	बाल	तैति	वणि	बव
शुक्लपक्ष तिथि		९	१०	११	१२	१३	१४	१५
पूर्वार्ध—		बाल	तैति	वणि	बव	कौल	गर	विष्टि
उत्तरार्ध—		कौल	गर	विष्टि	बाल	तैति	वणि	बव

इन करणों में विष्टि (भद्रा) सर्वथा त्याज्य है, जैसे-बृहस्पति का वचन—

विष्टिस्तु सर्वथा त्याज्या क्रमेणैवागता तु या।
अक्रमेणागता भद्रा सर्वकार्येषु शोभना।।५।।

क्रम से आई हुई भद्रा (अर्थात् पूर्वार्ध की भद्रा दिन में और परार्ध की भद्रा रात्रि में) सब शुभ कार्यों में त्याज्य है तथा अक्रम से आई हुई (अर्थात् पूर्वार्ध की भद्रा रात्रि में और उत्तरार्ध की भद्रा दिन में) सब कार्यों में शुभ होती है।।५।।

भद्राज्ञान—

शुक्ले पूर्वार्धेष्टमीपञ्चदश्योर्भद्रैकादश्यां चतुर्थ्यां परार्द्धे।
कृष्णेऽन्त्यार्धेस्यात्तृतीयादशम्योः पूर्वेभागे सप्तमीशम्भुतिथ्योः।।६।।

शुक्लपक्ष की अष्टमी और पूर्णिमा के पूर्वार्ध में और एकादशी चतुर्थी के उत्तरार्ध में भद्रा रहतो है। तथा कृष्णपक्ष की तृतीया दशमी के उत्तरार्ध में और सप्तमी चतुर्दशी के पूर्वार्ध में भद्रा रहती है।।६।।

विष्टिपुच्छ प्रशंसा—

पृथिव्यां यानि कर्माणि शुभान्यप्यशुभानि वा।
तानि सर्वाणि सिद्धयन्ति विष्टिपुच्छे न संशयः।।७।।

पृथिवीस्थित मानव समाज के जितने कार्य (शुभ या अशुभ) हैं वे सब विष्टि (भद्रा) के पुच्छ समय में करने से सिद्ध होते हैं।।७।।

भद्रा के मुख और पुच्छ समय का ज्ञान—

पञ्चद्वयद्रिकृताष्टरामारस-भूयामादिघट्यः शराः।
विष्टेरास्यमसद्गजेन्दुरसारामाद्र्यश्विबाणाब्धिषु।।८।।
यामेष्वन्त्यघटीत्रयं शुभकरं पुच्छं तथा वासरे।
विष्टिस्तिथ्यपरार्धजा शुभकरी रात्रौ च पूर्वार्धजा।।९।।

शुक्लपक्ष की ४, ८, ११ और पूर्णिमा १५ इन चार तिथियों में और कृष्णपक्ष की ३, ७, १० और चतुर्दशी इन चार तिथियों में एवं मास में आठ तिथियों में जो भद्रा कही गई है— उनमें क्रम से ५, २, ७, ४, ८, ६, १ इन प्रहरों के आरम्भ की ५ घटी मात्र भद्रा का मुख होता है जो सब शुभ कार्यों में अशुभप्रद हैं तथा उन्हीं आठ तिथियों में क्रम से ८, १, ६, ३, ७, २, ५, ४, प्रहरों के अन्तिम ३ घटी विष्टि की पुच्छ होती है जो सब कार्यों में शुभप्रद कही गयी है। इस तिथि के उत्तरार्ध की भद्रा, दिन में और पूर्वार्ध की भद्रा रात्रि में हो तो सब कार्यों में शुभप्रद कही गई है।।८-९।।

स्पष्ट ज्ञानार्थ चक्र—

	शुक्ल				कृष्ण				
तिथि	४	८	११	१५	३	७	१०	१४	
प्रहर	५	२	७	४	८	३	६	१	
आदि मुख घटी	५	५	५	५	५	५	५	५	मुख घटी अशुभ
प्रहर	८	१	६	३	७	२	५	४	
घटी	३	३	३	३	३	३	३	३	अन्त पुच्छ घटी शुभ

भद्रा में अवश्य वर्जनीय—

"भद्रायां द्वे न कर्तव्ये, श्रावणी फाल्गुनी तथा।
श्रावणी नृपतिं हन्ति ग्रामं दहति फाल्गुनी।।१०।।"

भद्रा में श्रावणी (रक्षाबन्धन आदि) और फाल्गुनी (होलिकादाहादि) न करे। क्योंकि भद्रा में श्रावणी करने से राजाओं का नाश और फाल्गुनी करने से ग्राम में अग्निभय होता है।।१०।।

परिहार—

"कुम्भकर्कद्वये मर्त्ये स्वर्गेऽब्जेऽजात् त्रयेऽलिगे।
स्त्रीधनुर्जूकनक्रेऽधो भद्रा तत्रैव तत्फलम्।।११।।

कुम्भ, मीन, कर्क, सिंह इन राशियों के चन्द्रमा में मृत्युलोकमें और मेष, वृष, मिथुन और वृश्चिक के चन्द्रमा में स्वर्ग में तथा कन्या, धन, तुला और मकर के चन्द्रमा में पाताल में भद्रा रहती है। जहाँ रहती है वहाँ ही फल देती है।।११।।

इति करण प्रकरण।



❀ वार प्रकरण ❀

वारों के नाम—

वाराः सप्त रविः सोमो मंगलश्च बुधस्तथा।
बृहस्पतिश्च शुक्रश्च शनिश्चैव यथाक्रमम्।।१।।

सावन [illegible] हैं— [illegible] रवि, सोम, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि ये यथाक्रम से होते हैं।।१।।

रविवार में कृत्य—

राज्याभिषेकोत्सवयान-सेवा-गोवह्निमन्त्रौषधिशस्त्रकर्म।
सुवर्णताम्रौर्णिकचर्मकाष्ठसंग्रामपण्यादि रवौ विदध्यात्।।२।।

राज्याभिषेक, उत्सव, [illegible] नौकरी, गोक्रय-विक्रय, अग्नि सम्बन्धी कार्य, मन्त्र, औषध-निर्माण, औषध-भक्षण [illegible] सम्बन्धी कार्य, सोना तावाँ, ऊन, काष्ठ सम्बन्धी कार्य, युद्ध और व्यापार सम्बन्धी [illegible] कार्य रविवार में करना चाहिये।।२।।

सोमवार में कृत्य—

शंखाब्जमुक्तारजतेक्षुभोज्य-स्त्रीवृक्ष-कृष्यम्बु-विभूषणानि।
गीतक्रतुक्षीरविकारशृंगी पुष्पाक्षरारम्भणमिन्दुवारे।।३।।

शंख आदि जलोत्पन्न वस्तु, मुक्ता, चाँदी, ऊख रस से उत्पन्न गुड़, चीनी आदि भोज्यपदार्थ, स्त्री, वृक्षरोपणादि, कृषि, जल सम्बन्धी आभूषण, गीत-नृत्य, यज्ञ, दूध-दही घृत-संबन्धी, पशु-संबन्धी, फूल, तथा अक्षरारंभ ये कार्य सोमवार में करना चाहिय।।३।।

भौमवार में कृत्य—

भेदानृतस्तेय-विषाग्निशस्त्र-बन्धानि-घाताहवशाठ्यदम्भान्।
सेनानिवेशाकरधातुहेम प्रवालकार्यादि कुजेऽह्नि कुर्यात्।।४।।

चुगुलखोरी, असत्य, चोरी [illegible] संबन्धी, अग्नि संबन्धी, शस्त्रबन्धन, घात, संग्राम, शठता, दंभ पाखण्ड, सेना-संबन्ध [illegible] खान, धातु, सोना तथा मूँगा आदि संबन्धी कार्य मंगलवार में करना चाहिये।।४।।

बुधवार में कृत्य—

नैपुण्य-पण्याऽध्ययनं कलाश्च शिल्पादि सेवालिपिलेखनानि।
धातुक्रिया काञ्चनयुक्तिसन्धि-व्यायामवादाश्च बुधे विधेयाः।।५।।

ट्रेनिंग, व्यापार, अध्ययन, कला, शिल्प, खेल, चित्रकारी, धातु संबन्धी, सोना, काँसा, सन्धि, व्यायाम और विवादादि कार्य बुधवार में करना चाहिये।।५।।

गुरुवार में कृत्य—

धर्मक्रिया पौष्टिक कर्म यज्ञ-मांगल्यहेमाम्बरवेश्मयात्राः।
रथाश्वभैषज्यविभूषणाद्यं कार्य विदध्यात् सुरमन्त्रिणोऽह्नि ।।६।।

धर्मानुष्ठानादि कार्य, पौष्टिक, यज्ञ, विद्या, मांगल्य सोना संबन्धी, गृहकर्म, वस्त्र, यात्रा रथ आदि सवारी, घोड़ा-संबन्धी, औषध, आभूषण, आदि का कार्य गुरुवार में करना चाहिये ।।६।।

शुक्रवार में कृत्य—

स्त्रीगीतशय्यामणिरत्नगन्धं वस्त्रोत्सवालंकरणादि कर्म।
भूपण्यगोकोश-कृषिक्रियाश्च सिद्ध्यन्ति शुक्रस्य दिने समस्तम्।।७।।

स्त्री संबन्धी, शय्या, मणि, रत्न, सुगन्ध, वस्त्र, उत्सव, आभूषण, भूमि, व्यापार, गोसंबन्धी, कृषिकर्म आदि कार्य शुक्रवार में करने से सिद्ध होते हैं।।७।।

शनिवार के कृत्य—

लोहाश्मसीसत्रपुरस्त्रदास्य - पापानृतस्तेयविषासवाद्यम्।
गृहप्रवेशो द्विपबन्ध-दीक्षा-स्थिरं च कर्मार्कसुतेऽह्नि कुर्यात्।।८।।

लोहा, पत्थर, सीसा, राँगा—संबन्धी, अस्त्र-शस्त्र, नौकरी, पापकर्म, चोरी, मिथ्या, विषसंबन्धी आसव, गृहप्रवेश, हाथी को बझाना, दीक्षा (मन्त्र-ग्रहण) आदि स्थिर कर्म शनिवार में करना चाहिये।।८।।

रवि आदि की स्थिरादि संज्ञा—

रविः स्थिरः शीतकरश्चरश्च महीज उग्रः श्वशिजश्च मिश्रः।
लघुः सुरेज्यो भृगुजो मृदुश्च शनिश्च तीक्ष्णः कथितो मुनीन्द्रैः।।९।।

रवि स्थिर, चन्द्र (सोम) चर, मंगल उग्र, बुध मिश्र, गुरु लघु, शुक्र मृदु और शनि तीक्ष्ण हैं।।९।।

विशेष—ग्रहों के नामानुसार कार्य ग्रहों के बारमें करने से सिद्ध होता है।

शुभ और अशुभ वार—

सोमशुक्रगुरुसौम्यवासरा: सर्वकर्मसु भवन्ति सिद्धिदा:।
भानु-भौम-शनिवासरेषु तु प्रोक्तमेव खलु कर्म सिद्धध्यति।।१०।।

सोम, शुक्र, गुरु और बुध ये वार सभी कार्यों में सिद्धिप्रद होते हैं। रवि, मंगल और शनि ये वार-उपरोक्त कार्य में ही प्रशस्त हैं; सब कार्यों में विशेष कर विवाहादि शुभकायों में नहीं।।१०।।

विशिष्ट वारादि कथन—

वारे प्रोक्तं कालहोरासु तस्य धिष्ण्ये प्रोक्तं स्वामितिथ्यंशकेऽस्य।
कुर्याद्दिक्शूलादि चिन्त्यं क्षणेषु नैवोल्लंघ्य: परिघश्चापि दण्ड:।।११।

इससे पूर्व और आगे-वार में जो कार्यविधि या निषेध कहा गया है उस कार्यको उसकी (होराक्षण) वार में करना चाहिये। तथा जिस नक्षत्र में जो कर्म विधि अथवा निषेध कहा गया है वह उसके स्वामी के मुहूर्त में करना चाहिये। दिक्शूल आदि का विचार क्षणवारादि में करना एवं आगे कहे हुए परिघ दण्ड का उल्लंघन क्षण-नक्षत्र (मुहूर्त) में नहीं करना चाहिये।।११।।

तिथ्यां प्रोक्तं कर्म तिथ्यंशकेषु योगो वा योगांशकेष्वेवमेव।
स्थूलात् प्राबल्यं सदा सूक्ष्मकस्य प्रोक्तं तस्मात् सूक्ष्ममेवप्रधानम्।।१२।

इसी प्रकार तिथियों में जो कार्य कहे हैं वे उस तिथि के तिथ्यंश में ही समझना और करना, एवं योगों में कहे हुए कार्य योग के-योगांश (२७वें भाग) में ही करना चाहिये। क्योंकि मुनियों ने स्थूल से सूक्ष्म को ही प्रबल होने के कारण प्रधान माना जाता है।।१२।।

यथा सूक्ष्म (क्षण) वार—

वारप्रवृत्तेर्धघटिका द्विनिघ्ना: कालाख्यहोरापतय: शराप्ता:।
दिनाधिपाद्या रवि-शुक्र-सौम्य-शशांकसौरेज्यकुजा: क्रमेण।।१३।।

किस दिन किस समय में किसकी होरा (क्षणवार) है-- यह जानना हो तो वारप्रवेशकाल से जितनी गतेष्टघटी हो उसको दूना करके गुणनफल में ५ के भाग देने से लब्धि-दिन पति के क्रम से कालहोरापति (क्षणवारेश) होता है। यहाँ होरेश की गणना में रवि, शुक्र, बुध, सोम, शनि, बृहस्पति, मंगल इस प्रकार क्रम है।।३।।

जैसे रविवार में—रवि, शुक्र, बुध, इत्यादि। सोमवार में सोम, शनि, गुरु इत्यादि इस प्रकार समझना चाहिये।

इसी विषय को स्पष्ट रूप से कहते हैं—

यस्मिन् वारे क्षणेवार इष्टस्तद्वासराधिपः।
आद्यः षष्ठो द्वितीयोऽस्मात् तस्मात् षष्ठस्तृतीयमः।।१४।।
षष्ठः षष्ठस्तथान्येषां कालहोराधिपाः स्मृताः।
सार्धनाडीद्वयेनैव दिवारात्रं यथाक्रमात्।।१५।।

जिस वार में--क्षणवार (होरा) जानना हो उस वार में वारप्रवेश काल से प्रथम होरा (क्षणवार—२।। अढ़ाई घड़ी प्रमित) उसी वारेश की होती है। दूसरी होरा, उससे छठेंकी, तृतीय होरा फिर उससे छठेंकी एवं अहोरात्र में २४ होरा के स्वामियों का ज्ञान करना चाहिये। १ होरा—अढ़ाई घड़ी की होती है उसको क्षणवार भी कहते हैं।

इसका प्रयोजन—

यस्य ग्रहस्य वारे यत् कर्म किञ्चित् प्रकीर्तितम्।
तत् तस्य क्षणवारेषु कर्तव्यं सर्वदा बुधैः।।१६।।

जिस ग्रह के वार में जो कर्म विहित कहा गया है वह उस ग्रह के क्षणवार में करना चाहिये ।।१६।।

कारण यह है— कि बहुत से कार्य ऐसे हैं जो प्रत्येक दिन में आवश्यक होते हैं। जैसे यात्रा कृषि आदि। यथा किसी को रविवार में पश्चिम जाने की आवश्यकता हुई तो रविवार में दिशाशूल कहा गया है। इसलिये उसको रविवार में यात्रा नहीं करने से कार्य की क्षति होगी, इसलिये स्थूल रविवार रहने पर भी शनि या सोम का क्षणवार हो उस में स्थूल रविवार रहने पर भी जब शनि या सोमवार होने के कारण पश्चिम जाने में दिशाशूल का दोष नहीं होकर कार्य की सिद्धि होगी। ऐसे ही तिथि नक्षत्रादि में भी समझना।

क्षण नक्षत्र—

प्रत्येक दिन सूर्योदय से अहोरात्र भर में २, २ घड़ी के ३० नक्षत्र बीतते हैं जो क्षण नक्षत्र कहलाते हैं यथा— १ आर्द्रा, २ श्लेषा, ३ अनुराधा, ४ मघा, ५ धनिष्ठा, ६ पूर्वाषाढ़, ७ उत्तराषाढ़, ८ अभिजित्, ९ रोहिणी, १० ज्येष्ठा, ११ विशाखा, १२ मूल, १३ शतभिषा, १४ उत्तराफागुनी, १५ पूर्वफागुनी, १६ आर्द्रा, १७ पूर्वभाद्र, १८ उत्तराभाद्र, १९ रेवती, २० अश्विनी, २१ भरणी, २२ कृत्तिका, २३ रोहिणी, २४ मृगशिरा, २५ पुनर्वसु, २६ पुष्य, २७ श्रवण, २८ हस्त, २९ चित्रा, ३० स्वाती। इस प्रकार सूक्ष्म नक्षत्रों का प्रतिदिन ज्ञान करके नक्षत्रों के कर्म करना चाहिये।

क्षणवार जानने का चक्र

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५
मि २६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६
घ ६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	०	१	२	३	४	५	६
रविवार	शु.	बु.	चं.	श.	बृ.	मं.	सू.	शु.	बु	चं.	श.	बृ.	मं.	सू.	शु.	बु.	च.	श.	बृ.	मं	सू	शु.	बु.	च.
चन्द्रवार	श	बृ.	मं	सू.	शु	बु.	चं	श.	बृ.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं	श.	बृ.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	शं.	बृ.	मं
मंगलवार	सू	शु	बु	चं	श.	बृ.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं	श,	बृ.	मं.	सू	शु.	बु.	चं	श	बृ.	मं.	सू.	शु.	बु.
बुधवार	चं.	श.	गृ.	मं	रू.	शु.	बु.	चं.	श.	बृ.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	बृ.	मं	सू.	शु.	बु.	च	श.	चं.
गुरुवार	म	सू	शु.	बु	च.	श	बृ.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	बृ.	मं.	सू.	शु.	बु.	च	श	बृ.	मं.	सू.	शु.
शुक्रवार	बु.	चं.	श	बृ.	मं	सू.	शु	बु	चं	श.	बृ.	मं.	सू	शु.	बु.	चं.	श.	बृ.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.
शनिवार	बृ.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	बृ.	मं.	सू.	शु	बु.	चं	श	बृ.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	बृ.	मं.	सू.

भारत में स्टैंडर्ड घड़ी के अनुसार ६ बजकर २६ मिनट पर ही सर्वत्र वारप्रवेश हो जाता है। वार प्रवृत्ति समय से आरम्भ कर एक-एक घंटा (। घड़ी) का एक-एक क्षणवार अर्थात् १ स्थूलवार में २४ सूक्ष्मवार बीतते हैं। महर्षियोंने सूक्ष्मवारको ही प्रधान कहा है—

यस्य ग्रहस्य वारे यत् कर्म कश्चित् प्रकीर्तितम्।
तत् तस्य कालहोरायां सर्वमेव विचिन्तयेत्।।

क्षण तिथि

तिथेः पञ्चदशो भागः क्रमात् प्रतिपादितः।
क्षणसंज्ञा तिथिः प्रोक्ता शुभाशुभफलप्रदाः।।१७।।

प्रत्येक तिथि में उसी तिथि से प्रारम्भ करके १५ तिथियों के अन्तर भोग होते हैं। वे क्षण तिथि (सूक्ष्म तिथियाँ) कहलाती है। उनका प्रमाण तिथि भोगघटी के पञ्चदशांश तुल्य होता है।।१७।।

उदाहरण यथा— प्रतिपदा का पूर्णभोगमान ६० घटी है तो उसका पञ्चदशांश ४ घटी एक-एक क्षणतिथि का मान होगा। इसलिये प्रतिपदा के आरम्भ से ४ घड़ी तक प्रतिपदा, उसके बाद ४ घड़ी द्वितीया, उसके बाद ४ घड़ी तृतीया एवं आगे सब तिथियों के भोगमान समझना। तिथियों में कहे हुए कर्म उसी क्षण तिथियों में करना चाहिये।।

क्षण योग

योगस्य सप्तविंशांशे सूक्ष्मयोगो भवेदिति।
एकस्मिन्ऽपि योगो च सर्वे योगा भवन्ति हि।।१८।।

एक—एक विष्कंमादि योग में—उसी—उसी योग से प्रारम्भ करके २७ योगों के भोग होते हैं जो सूक्ष्मयोग कहलाते हैं। स्थूल योग के पूर्णमान का २७ वाँ भाग एक—एक सूक्ष्म योग का मान होता है।।१८।।

वार, तिथि, नक्षत्र और योग दो प्रकार के होते हैं। एक स्थूल दूसरे, सूक्ष्म। यदि स्थूल और सूक्ष्म दोनों ही विहित प्राप्त हो तो उस समय में कार्यका आरम्भ अत्युत्तम कहा गया है। यदि आवश्यक हो तो स्थूल वारादि के निषिद्ध होने पर भी विहित सूक्ष्मवारादि में कार्य करना श्रेष्ठ माना गया है।

रविवार में वर्जनीय

तैलस्त्रीमद्यमांसानि यः करोति रवेर्दिने।
सप्तजन्मसु रोगी स दरिद्रश्चैव जायते।।१९।।

रविवार में जो कोई तैल, स्त्री, मद्य, मांस का सेवन करता है वह सात जन्म तक रोगी और दरिद्र होता है।

इति तिथ्यादि पञ्चांग निरूपण।



❀ अथ अवकहडा चक्रोद्धार ❀

शतपदचक्रानुसार नक्षत्र चरण—

चू चे चो ला, पदा दास्रे ली लू ले लो, तु याम्यभे।
अ ई ऊ ऐ कृत्तिकायां, ओ वा वी वू च धातृभे।।
वे वो का की मृगे प्रोक्ताः कू घ ङ. छ च रुद्रभे।
के को हा ही तथादित्ये, हू हे हो डा तु पुष्यभे।।
डी डू डे डो तथा सार्पे, मा मी मू मे तु पित्र्यभे।
मो टा टी टू पदा भाग्ये, टेटो पाप्यर्यमर्क्षके।।
पू ष ण ठ तथा हस्ते, पे पो रा री तु त्वाष्ट्रभे।
रू रे रो ता पदा स्वातौ ती तू ते तो द्विदैवते।।
ना नी नू ने पदा मैत्रे नो या यी यू तथैन्द्रभे।
ये यो भा भी पदा मूले, भू धा फा ढा जलर्क्षके।।
भे भो जा जी तु वैश्वर्क्षे जू जे जो खाऽभिजित्पदा।
खी खू खे खो श्रुतौ ज्ञेया गा गी गू गे तु वासवे।।
गो सा सी सू जलेशर्क्षे से सो दाद्यजपादभे।
दु थ झ ञोत्तराभाद्रे दे दो चा ची तथाऽन्त्यभे।।

चू चे चो ला अश्विनी, ली लू ले लो भरणी, अ ई उ ए कृत्तिका, ओ वा वि वू रोहिणी, वे वो का की मृगशिरा, कू घ ङ. छ आर्द्रा, के को हा ही पुनर्वसु, हू हे हो डा पुष्य, डी डू डे डो आश्लेषा, मा मी मू मे मघा, मो टा टी टू पूर्वाफाल्गुनी, टे टो पा पी उत्तराफाल्गुनी, पू ष ण ठ हस्त, पे पो रा री चित्रा, रु रे रो ता स्वाती, ती तू ते तो विशाखा, ना नी नू ने अनुराधा, नो या यी यू ज्येष्ठा, ये यो भा भी मूल, भू धा फा ढा पूर्वाषाढा, भे भो जा जी उत्तराषाढा, जू जे जो खा अभिजित् खी खू खे खो श्रवणं, गा गी गू गे धनिष्ठा, गो सा सी सू शतभिषा, से सो दा दी पूर्वाभाद्रपदा, दू थ झ ञ उत्तराभाद्रपदा, दे दो चा ची रेवती। इस प्रकार एक नक्षत्र में चार चार चरण हैं।

जिस नक्षत्र के जिस चरण में जन्म हो उस चरण में जो वर्ण पठित है वही अक्षर नाम के आदि में रखना चाहिये, जैसे—मृगशिरा नक्षत्र के तृतीय चरण में किसी का जन्म हुआ तो मृगशिरा के तृतीय चरण में ककार है इसलिये ककारादि नाम रखना चाहिये, जैसे—'कमलकान्त', 'कालीदत्त' 'कन्तलाल' इत्यादि। ऐसे सब नक्षत्र में समझना।

कोई कोई कहते हैं कि - 'आर्द्रा के तृतीय चरण, हस्त के तृतीय चरण और उत्तराभाद्रपदा के चतुर्थ चरण में किसीका जन्म हो तो क्रमसे ङकार, णकार तथा ञकार नाम के आदि अक्षर में पड़ेंगे, परञ्च ऐसा नाम कोई नहीं मिलता है। इसलिये ङकार के स्थान में गकार और ञकार के स्थान में जकार और णकार के स्थान में डकार ग्रहण करना चाहिये अर्थात् आर्द्रा के तृतीय चरण में जन्म-वाले का गकाराद्यक्षर (गजानन, गणपति इत्यादि) नाम रखना चाहिये' किन्तु उन लोगों का ऐसा कहना भ्रम है क्योंकि ऐसा करने से आर्द्रा के तृतीय चरण में जन्मवीलों का धनिष्ठा के प्रथम चरण का सन्देह होगा। इसलिये आर्द्रा तृतीय चरण वाले का ङकारादि, हस्त तृतीय चरण वाले का णकाराद्यक्षर ही जन्म नाम समझना तथा उत्तराभाद्र चतुर्थ चरण वाले का ञकाराद्यक्षर ही जन्म नाम समझना चाहिये, पुकारने के लिये दूसरा नाम रख लेना चाहिये।

उतरोक्त भ्रम का मूल—

नरपतिजयवर्या आदि स्वरग्रंथ में नाम के आद्यन्ताक्षर से वर्ण स्वर मात्रा स्वर आदिका विचार किया जाता है, वहाँ 'ङ., ञ, ण', इन तीनों वर्णों का ग्रहण नहीं किया गया है, क्योंकि ये पुकार नाम आदि में नहीं देखे जाते हैं इसलिये लिखा है—

न प्रोक्ता ङ ञ णा वर्णा नामादौ सन्ति तेन हि।
चेद्भवन्ति तदा ज्ञेया गजडास्ते यथाक्रमम्।।१।।

वर्ण स्वर में "ङ ञ ण"य "वर्ण नहीं कहे गये हैं क्योंकि ये तीनों वर्ण नाम के आदि में नहीं पाये जाते हैं—अगर किसी नाम के आदि में हो तो वहाँ ङकार के जगह गकार, ञकार के स्थान में जकार तथा णकार के स्थान में डकार समझना चाहिये। यह स्वरविचार में कहे हैं।।१।।

किन्तु इसका अर्थ जितने अनभिज्ञ उलटा समझ कर शतपद चक्रानुसार नामकरण में लगाते हैं, वह मानने योग्य नहीं हैं।

नाम के आदि अक्षर से नक्षत्र का ज्ञान—

यन्नामाद्यक्षरं यस्य नक्षत्रस्य पदे भवेत्।
तदेव तस्य नक्षत्रं विज्ञेयं गणकोत्तमैः।।२।।

नाम का प्रथम नक्षत्र जिस नक्षत्र के चरण में हो वही उसका नक्षत्र समझना चाहिये।।२।।

उदाहरण— जैसे "गजानन" का नक्षत्र कौन है? यहाँ नाम के आदि में 'ग' कार है जो धनिष्ठा के प्रथम चरण में है, इसलिये 'गजानन' नाम का धनिष्ठा नक्षत्र हुआ।

यदि नाम्नि भवेद्वर्णः संयुक्ताक्षरलक्षणः।
ग्राह्यस्तदादिमो वर्ण इत्युक्तं ब्रह्मयामले।।३।।

यदि नाम के आदि में संयुक्ताक्षर हो तो उनमें प्रथम वर्ण का ग्रहण करना चाहिये।।३।।

उदाहरण— जैसे- 'श्रीपति' नाम के आदि में संयुक्ताक्षर वर्ण 'श्र' के प्रथम वर्ण 'श' कार है। वह शतभिषा के द्वितीय चरण में है इसलिये श्रीपति का नक्षत्र शतभिषा हुआ।

सनुक्तत्वाद्दकारस्य रेफो ग्राह्यो विचक्षणैः।
ऋद्धिनाथस्य नक्षत्रं यथा चित्राख्यमेव हि।।४।।

शतपद चक्र में ऋकार नहीं कहा गया है, इसलिये ऋकार के स्थान में रेफ (र) ग्रहण करना चाहिये।।४।।

जैसे— 'ऋद्धिनाथ' नाम के आदि अक्षर 'ऋ'कार के स्थान में 'र' ग्रहण करने से चित्रा नक्षत्र का तृतीय चरण सिद्ध हुआ।

तथा च—

अ आ, इ ई, उ ऊ, ए ऐ, ओ औ, द्वौ द्वौ मिथःसमौ।
ब बौ, श सौ तथैवात्र ज्ञेयो दैवविदा सदा।।५।।

— शतपदचक्र में अकार और आकार, इकार और ईकार, उकार और ऊकार, एकार और ऐकार, एवं ओकार और औकार परस्पर तुल्य समझे जाते हैं तथा बकार और वकार, शकार और सकार ये दो दो अक्षर तुल्य समझना चहिये। जैसे 'अमरनाथ' और आदित्य प्रसाद दोनों का एकही (कृत्तिका) नक्षत्र का प्रथम चरण हुआ। ऐसे ही 'शक्तिनाथ' और सन्तलाल का शतभिषा नक्षत्र का द्वितीय चरण हुआ। ऐसे ही और समझना।।५।।

अथ राशिपरिभाषा—

कला स्याद्विकलाषष्ठया तत्षष्ठ्या चांश उच्यते।
त्रिंशदंशैर्भवद्राशिर्भगणो द्वादशैव ते।।६।।

६० विकला की १ कला, ६० कला का १ अंश, ३० अंश की १ राशि और १२ राशियों का १ भगण होता है।।६।।

राशि नाम—

मेषो बृषोऽथ मिथुनं कर्कः सिंहश्च कन्यका।
तुला च वृश्चिकश्चैव धनुश्च मकरस्तथा।।७।।
कुम्भो मीनस्तथा ज्ञेया राशिसंज्ञा यथाक्रमम्।

मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ, मीन ये क्रम से बारहों राशि के नाम हैं।।७।।

नक्षत्र से राशि जानने का प्रकार—

एकैकस्मिंस्तथा राशौ नक्षत्रचरणा नव।।८।।

एक-एक राशि में नौ-नौ चरण होते हैं।।८।।

यथा—

मेषोऽश्विनी च भरणी कृत्तिकैकपदन्तथा।
कृत्तिकाङ्घ्रित्रयं ब्राह्मं मृगार्धं वृष उच्यते।।९।।
मिथुनं मृगार्धमार्द्रा च पुनर्वसुपदत्रयम्।
पुनर्वसुपदैकं तु पुष्यः श्लेषा च कर्कटः।।१०।।
सिंहो मघा च पूर्वा स्यादुत्तरैकपदं तथा।
उत्तराङ्घ्रित्रयं हस्तश्चित्रार्धं चैव कन्यका।।११।।
तुला चित्रादलं स्वाती विशाखा चरणत्रयम्।
विशाखैकपदं मैत्रं ज्येष्ठा सर्वा च वृश्चिकः।।१२।।
मूलं पूर्वोत्तराषाढपदमेकं धनुस्तथा।
उत्तराङ्घ्रित्रयं कर्णो धनिष्ठार्धं मृगस्तथा।।१३।।
धनिष्ठार्थ शतभिषा पूर्वापादत्रयं घटः।
मीनः पूर्वापदैकं स्यादुत्तरा रेवती तथा।।१४।।

असुनी भरणी पद निःशेप ❁ कृत्तिका एक चरण है मेष।
कृत्तिका तीन रोहिणी चार ❁ दो पद मृगशिर वृषभ उचार।।९।।
मृगशिर दोपद आर्द्रा चार ❁ तीन पुनर्वसु मिथुन विचार।
एक पुनर्वसु पुष्यश्लेष ❁ जानो कर्कट राशि विशेष।।१०।।
मघा पूर्व उत्तर पद एक ❁ सिंह राशि का करो विवेक।
उत्तर तीन सकल पद हस्त ❁ दो चित्रा कन्या परशस्त।।११।।
दो चित्रा स्वाती सम तूल ❁ तीन विशाखा पद है तूल।
एक विशाखा पद अनुराध ❁ ज्येष्ठा है वृश्चिक निर्बाध।।१२।।
मूल पूर्वा उत्तर पद एक ❁ धनुष राशि पर करो विवेक।
उत्तर तीन श्रवण पद वेद ❁ दोय धनिष्ठा मकर विभेद।।१३।।

दोय धनिष्ठा शतभिष चार ❁ पूभा तीन कुम्भ निर्धार।

पूभा एक उत्तरपद चार ❁ सकल रेवती मीन विचार।।१४।।

उदाहरण— जैसे विचार करना है कि "अनिरुद्ध चौधरी" की कौन राशि है तो यहाँ नाम के आदि का अक्षर अकार है तथा अकार कृत्तिका के प्रथम चरण में है, उपरोक्त पद्यानुसार कृत्तिका के प्रथम चरण की मेष राशि है इसलिये "अनिरुद्ध चौधरी" की मेष राशि हुई, इसी प्रकार सर्वत्र समझना, शेष स्पष्ट जानने के लिये नीचे चक्र देखकर समझ लेना।

राशि को पुं-स्त्री आदि संज्ञा—

पुंस्त्री क्रूराक्रूरौ चरस्थिर-द्विस्वभावसंज्ञाः स्युः।
क्षत्रिय-वैश्यक-शूद्र-ब्रह्मवर्णाः क्रमादजायास्तो।।१५।।

मेषादिक बारहों राशियाँ क्रम से पुरुष, स्त्री अशुभ—शुभ तथा चर, स्थिर द्विस्भाव, और क्षत्रिय वैश्य, शूद्र, ब्राह्मण वर्ण हैं।।१५।।

नाम के आदि अक्षर से राशि जानने का चक्र—

अक्षर	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
	चू	इ	क	हि	मा	टो	रा	तो	ये	भो	गु	दी
	चे	उ	कि	हु	मि	प	रि	न	यो	जजी	गे	दू
	चो	ए	कु	हे	मू	पि	रू	नि	भ	जूजे	गो	थ
	ल	ओ	घ	हो	मे	पु	रे	नू	भी	जोख	सा	झ
	लि	वा	ङ	डा	मो	ष	रो	ने	भु	खि	सिं	ञ
	लू	वि	छ	डि	टा	ण	ता	नो	धा	खु	सू	दे
	ले	वू	के	डू	टि	ठ	ति	या	फा	खे	से	दो
	लो	वे	को	डे	टू	पे	तू	यि	ढा	खोग	सो	चा
	अ	वो	ह	डो	टे	पो	ते	यू	भे	गि	दा	ची

शुभाशुभ	पुँ० स्त्री	चरादिसंज्ञा	स्वामी	राशि
अशुभ	पुरुष	चर	मंगल	मेष
शुभ	स्त्री	स्थिर	शुक्र	वृष
अशुभ	पुरुष	द्विस्वभाव	बुध	मिथुन
शुभ	स्त्री	चर	चन्द्र	कर्क
अशुभ	पुरुष	स्थिर	रवि	सिंह
शुभ	स्त्री	द्विस्भाव	बुध	कन्या
अशुभ	पुरुष	चर	शुक्र	तुला
शुभ	स्त्री	स्थिर	मंगल	वृश्चिक
अशुभ	पुरुष	द्विस्भाव	वृहस्पति	धन
शुभ	स्त्री	चर	शनि	मकर
अशुभ	पुरुष	स्थिर	शनि	कुम्भ
शुभ	स्त्री	द्विस्वभाव	वृहस्पति	मीन

विशेष— राशि-विचार में अभिजित् की गणना नहीं की जाती है क्यों कि अभिजित् का भोग उत्तराषाढ़ और श्रवण के अन्तर्गत है। इसलिए अभिजित् के 'जू जे जो' ये तीनों चरण उत्तराषाढ़ा में. और चौथा चरण (ख) श्रवण में मानकर मकर राशि मानी जाती है।

अथ राशि स्वामी—

सिंहस्याधिपतिः सूर्यः कर्कस्याधिपतिः शशी।
मेषवृश्चिकयोभौमः कन्यामिथुनयोर्बुधः।।१६।।
जीवो मीनधनुःस्वामी शुक्रो वृषतुलाधिपः।
मृगकुम्भपतिः सौरिः कथितो गणकोत्तमैः।।१७।।

सिंह के स्वामी सूर्य, कर्क के चन्द्रमा, मेष, वृश्चिक के मंगल, मिथुन, कन्या के बुध, धनु, मीन के बृहस्पति, वृष, तुला के शुक्र और मकर, कुम्भ के स्वामी शनि हैं।।१६- १७।।

शंका— यहाँ शंका है कि ग्रहों में सूर्य और चन्द्रमा प्रधान होकर एक-एक राशि के स्वामी और कुजादि पाँचों ग्रह दो-दो राशियों के स्वामी क्यों हुए?

इसके उत्तर में प्राचीन वचन हैं—

सिंहादिषट्कस्य पतिर्दिनेशः कर्कादिषट्कस्य पतिर्निशेशः।
ताभ्यां प्रदत्तं च कुजादिकेभ्य एकैकमस्माद् द्विगृहाधिपास्ते।।१८।।

सिंह से (आगे को) ६ राशियों के स्वामी सूर्य, कर्क से लेकर (पीछे की) ६ राशियों के स्वामी चन्द्रमा थे। ये दोनों मंगलादिक पाँच ग्रहों को एक एक राशि दे दिये। इसलिये सूर्य और चन्द्रमा की एक एक राशि बची और मंगलादिक को दो दो राशियाँ हुई ।।१८।।

अथ ताराविचार—

जन्मभाद्दिनभं यावत् सङ्ख्यैव नवतष्टिता।
तारा तत्राद्यपञ्चाद्वित्रिसंख्या न शुभप्रदाः।।१९।।

जन्म नक्षत्र से दिन नक्षत्र पर्यन्त गिनकर जो संख्या हो उसमें नौ का भाग देने से जो शेष बचे वही तारा होती है। उसमें १, ३, ५, ७वी तारायें शुभ नहीं होतीं अर्थात् २, ४, ६, ८, ९वीं तारायें शुभ हैं।।१९।।

उदाहरण- जैसे बाबू ''शिवशंकर'' चौधरी को पुनर्वसु नक्षत्र में पश्चिम दिशा की यात्रा करनी है तो-यहाँ नाम आद्य अक्षर (शि) के अनुसार जन्मनक्षत्र शतभिषा हुआ, इसलिये शतभिषा से दिन के नक्षत्र (पुनर्वसु) तक गिनने से ११ हुए, इनमें ९ का भाग देने से २ बचा अर्थात् दूसरी तारा हुई, दूसरी शुभ है। इसी प्रकार और समझना।

यथा तारानाम—

जन्माख्यसम्पद्विपदः क्षेमप्रत्यरिसाधकाः।
वधमैत्राख्यास्तारा नामसदृक्फलः।।२०।।

जन्म, सम्पत् विपत, क्षेम, प्रत्यरि, साधक, वध, मैत्र, अतिमैत्र, ये तारायें अपने २ नाम तुल्य फल देती हैं।।२०।।

विशेष—

प्रथमे च द्वितीये च पर्यये प्रत्यरिः शुभः।
जन्मतारा विवाहादौ माङ्गल्ये च शुभा स्मृता।।२१।।

प्रथम और द्वितीय आवृत्ति की प्रत्यरि ५वीं तारा शुभ है, और जन्म की तारा तीनों आवृत्ति की विवाहादि शुभ कार्य में शुभ है।।२१।।

दुष्ट तारा की शान्ति—

प्रत्यरौ लवणं दद्यात् शाकं दद्यात् त्रिजन्मसु।
गुडं विपत्तितारायां वधे च तिलकाञ्चनम्।।२२।।

(आवश्यक कार्य में) प्रत्यरि (५) तारा में लवणदान करे। जन्म तिल और सुवर्ण दान करे तो शुभ हो जाती है।।२२।।

चन्द्र विचार—

जन्मराशिं समारभ्य या सङ्ख्या चन्द्रभावधि।
चन्द्रस्तत्सङ्ख्यको ज्ञेयस्तथा च तत्फलं वदेत्।।२३।।

जन्मराशि से इष्ट दिन की चन्द्र राशि पर्यन्त गिनने से जो संख्या हो तत्संख्यक चन्द्रमा समझना और तदनुसार फल कहना ।।२३।।

यथा चन्द्रफल—

आद्ये चन्द्रे शुभं ज्ञेयं मनस्तोषं द्वितीयके।
तृतीये धनसम्पत्तिश्चतुर्थे कलहागमः।।२४।।
पञ्चमे ज्ञानवृद्धिः स्यात्षष्ठे धान्यधनागमः।
सप्तमे राजसम्मानमष्टमे प्राणसंशयः।।२५।।
नवमे धर्मलाभः स्यात् सिद्धिस्तु दशमे भवेत् ।
एकादशे जयो नित्यं द्वादशे सर्वथा क्षतिः।।२६।।

प्रथम चन्द्र में शुभ, २ में मानस तुष्टि, ३ में धन सम्पत्ति, ४ में कलह (लड़ाई), ५ में ज्ञान की वृद्धि, ६ में धन धान्य प्राप्ति, ७ में राजा से सम्मान, ८ में प्राणसंशय, ९ में धर्मलाभ, १० में सिद्धि, ११ में जय लाभ और १२वें चन्द्रमा में सर्वथा हानि होती है।।२४-२६।।

चन्द्रमा जानने का उदाहरण— जैसें बाबू "जगन्नाथ" चौधरी को रोहिणी नक्षत्र वृषराशि के चन्द्रमा में पूर्वदिशा की यात्रा करनी है तो नामाद्यक्षर (ज) के अनुसार जन्मराशि मकर हुई। मकर से इष्ट दिन की वृष राशि पर्यन्त गिनने से ५ वाँ चन्द्रमा सिद्ध हुआ। पाँचवें चन्द्रमा का फल ज्ञान की वृद्धि हैं। इसलिये शुक्लपक्ष में पांचवाँ शुभ हुआ। ऐसे ही सर्वत्र जानना।

विशेष—

कृष्णपक्षे द्वितीयस्तु पञ्चमो नवमोऽशुभः।
कृष्णे बलवती तारा शुक्लपक्षे बली शशी ।।२७।।

कृष्ण पक्ष में २, ५, ९वें चन्द्र अशुभ हैं। कृष्ण पक्ष में तारा बलवती होती है शुक्लपक्ष में चन्द्रमा बली होता है।।२७।।

राशिवश से पूर्वादि दिशाओं में चन्द्रमा—

मेषे च सिंहे धनुषीन्द्रभागे वृषे सुतायां मकरे च याम्ये।
कुम्भे तुलायां मिथुने प्रतीच्यां कर्कालिमीनेषु तथोत्तरस्याम्।।२८।।

मेष सिंह धनु पूरब चन्द्रदक्षिण कन्या वृष मकरन्द।
घट तुल मिथुन पश्चिमाधीन उत्तर कर्कट वृश्चिक मीन ।।२८।।

चन्द्रमा का वर्ण और फल—

"अलौ मेषसिंहऽरुणो युद्धकारो सितो गोवणिक्कर्कटर्क्षेषु सिद्धिः।
धनुर्मीनयुग्मेषु पीतःशशीः श्रीर्घटस्त्रीमृगास्थेषु कृष्णोभयं च।२९।।

मेष, सिंह, वृश्चिक के चन्द्रमा अरुण (लाल) वर्ण और युद्धकारक होते हैं, वृष कर्क तुला के श्वेत वर्ण और सिद्धिदायक होते हैं, मिथुन, धन, मीन में पीत वर्ण और लाभदायक होते हैं, तथा कन्या कुम्भ मकर में कृष्ण वर्ण और भयकारक होते हैं।।२९।।

सम्मुख आदि चन्द्र का फल—

सम्मुखे चार्थलाभः स्याद् दक्षिणे सुखसम्पदः।
पृष्ठे च शोकसन्तापौ वामे चन्द्रे धनक्षतिः।।३०।।

सम्मुख चन्द्रमा में धनलाभ, दक्षिण (दाहिने) भाग में सुख और सम्पत्ति, पृष्ठ दिशा के चन्द्रमा में शोक, सन्ताप और वाम चन्द्र में धनक्षति होती है ।।३०।।

अथ घात-चन्द्र-वार-नक्षत्र—

जन्मेन्दुनन्दार्कमघाश्च मेषे वृषे शनिः पञ्चमहस्तपूर्णाः।
स्वाती च युग्मे नवचन्द्रभद्राः कर्केऽनुराधाबुधयुग्मभद्राः।।३१।।
सिंहे जया षड्रविजश्च मूलं पूर्णाशनिर्दिक् श्रवणः स्त्रियां च।
गुरुत्रिरिक्ताः शतभं तुलायां नन्दालिके रेवतिसप्तशुक्राः।।३२।।
चापे चतुःशुक्रजयाभरण्यो मृगेऽष्टमो रोहिणिभौमरिक्ताः।
कुम्भेजयार्द्रा गुरुशम्भुघातो झषे भृगुश्चान्त्यभुजङ्गपूर्णा।।३३।।

प्रथम चन्द्र, नन्दातिथि, रविवार, मघा नक्षत्र ये मेषराशि के घातक हैं। इसी प्रकार वृषराश्यादि के घात चन्द्र आदि समझना। स्पष्टार्थ नीचे चक्र देखिये।।३१-३३।।

घात चन्द्रादि चक्र—

मे.	वृ.	मिथुन	कर्क	सिं	कं.	तु.	बृ.	ध.	म.	कुम्भ	मीन	राशि
१	५	९	२	६	१	३	७	४	८	११	१२	घातचन्द्र
र.	श.	चं.	बुध.	श.	श.	बृ	शु.	शु	मं	गुरुवार	शु.	घातवार
म.	ह.	स्वा.	अनु.	मू	श्र	श	रे.	भ.	रो	आर्द्रा	श्ले.	घात नक्षत्र
१	५	२	२	३	५	४	१	३	४	३	५	घात
६	१	७	७	८	१	९	६	८	९	८	१०	
१	१	२१	१२	१	१	१	१	१	१	१३	१५	तिथि

महीनागशैलाङ्क वेदाग्नितर्कार्कराशाशिवा पाण्डवाश्चित्रभानुः।
कुरङ्गीनृदृशां घातचन्द्रस्त्वजादेर्नृ नार्योः समं घाततिथ्यादिकं च।।३४।।

मेष आदि राशिवाली स्त्री के कर्म से १, ८, ७, ९, ४, ३, ६, २, १०, ११, ५, १२ ये घात चन्द्र होते हैं।।३४।।

विशेष-

तीर्थयात्राविवाहान्नप्राशनोपनयादिषु ।
सर्वमांगल्यकार्येषु घातचन्द्रं न चिन्तयेत्।।३५।।

तीर्थयात्रा, विवाह, अन्नप्राशन, उपनयन, आदि सर्व मंगलकार्यों में घात चन्द्र का दोष नहीं होता है।।३५।।

युद्धे चैव विवादे च कुमारीपूजने तथा ।
राजसेवा प्रयाणादौ घातचन्द्रं विवर्जयेत्।।३६।।

युद्ध में, विवाद में, कुमारी पूजन में, राज सेवा में तथा यात्रादि में घात चन्द्र वर्जित है।।३६।।

अथ दुष्टचंद्रादि शांति—

चन्द्रे शंखं च तारासु लवणं तण्डुलांस्तिथौ।
धान्यं दुष्टर्क्षवारे च दद्याल्लग्ने तिलांस्तथा।।३७।।

दुष्टचंद्र में शंख, * दुष्टतारा में लवण, ** अशुभ तिथि में चावल, तथा अशुभ नक्षत्र और वार में धान्य, अनिष्ट लग्नादि में तिल दान करके आवश्यक कार्य करे।।३७।।

अथ दिशा विचार—

यत्रोदेत्यस्ततां गच्छेदर्कस्ते पूर्वपश्चिमे।
ध्रुवो यत्रोत्तरादिक् सा तद्विरुद्धा च दक्षिणा।।३८।।

जिधर सूर्यका उदय होता है वह पूर्वदिशा है। जिधर अस्त होता है वह पश्चिम दिशा है तथा जिधर ध्रुवतारा है वह उत्तर दिशा है और उससे विरुदद्ध भाग में दक्षिण दिशा है।।३८।।

स्पष्टदिक् साधन—

सायनार्कजसंक्रान्तौ काले सूर्योदये नरैः।
भास्कराभिमुखैर्ज्ञेया दिशोऽथ विदिशः स्फुटाः।।३९।।

सायन मेष संक्रान्ति में सूर्योदय काल में सूर्याभिमुख होकर स्पष्ट दिशा और विदिशाओं का ज्ञान करे।।३९।।

यथा-(जैसे)

सम्मुखे पूर्वदिग् ज्ञेया पश्चाज्ज्ञेया च पश्चिमा।
उत्तरा वामभागे या दक्षिणे सा च दक्षिणा।।४०।।

सम्मुख जो दिशा हो पूर्वा, पीछे जो दिशा पड़े वह पश्चिमा, बाये भाग में जो दिशा पड़े वह उत्तर दिशा और दाहिने भाग में दक्षिण दिशा होती है।।४०।।

विदिशा विचार—

अग्निकोणस्तथाग्नेयी पूर्वदक्षिणमध्यगा।
नैर्ऋतो निर्ऋतेः कोणो दक्षिणापरमध्यगा।।४१।।
पश्चिमोत्तरमध्यस्था वायवी वायुकोणकः।
ईशानकोण ऐशानी विदिक् पूर्वोत्तरान्तरे।।४२।।

---

* "शंखाभावे महत्स्वच्छं तण्डुलं वा नवं दधि।"

** दुष्ट तारा की शान्ति पृथक्-पृथक् पहले कही गई है, उन वस्तुओं के अभाव में लवण मात्र भी दान करना चाहिए।

पूर्व दिशा के बीच में अग्निकोण (आग्नेयी) कहलाती है तथा दक्षिण पश्चिम के मध्य में निर्ऋतिकोण (नैर्ऋती), पश्चिम उत्तर के मध्य में वायुकोण (वायवी), और उत्तर पूर्व के बीच में ईशान कोण (ऐशानी) विदिक् कहलाती है।।४१-४२।।

इस प्रकार - पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, आग्नेय, नैर्ऋत्य, वायव्य, ऐशानी, ऊर्ध्व (ऊपर), और अध: (नीचे) ये दश दिशायें हैं।।

निर्णय—

आग्नेयी पूर्वदिग्ज्ञेया दक्षिणादिक् च नैर्ऋती।
वायवी पश्चिमादिक् स्यादैशानी च तथोत्तरा।।४३।।

अग्निकोण की गणना पूर्वदिशा में, वायुकोण की उत्तर दिशा में, नैर्ऋत्यकोण की दक्षिण दिशा में, ईशानकोण की उत्तर दिशा में गणना होती है।।४३।।

अथ दिशाशूल—

नैव पूर्वदिशं गच्छेज्ज्येष्ठायां शनिसोमयोः।
तथैव दक्षिणामाशां नैवाजपदभे गुरौ।।४४।।
पश्चिमाशां व्रजेन्नैव रोहिण्यां रविशुक्रयोः।
कुजे बुधेऽर्यमर्क्षे च नो व्रजेदुत्तरां दिशम्।।४५।।

ज्येष्ठा नक्षत्र शनि और सोमवार में पूर्व दिशा न जाय, पूर्वभाद्रपदा और गुरुवार में दक्षिण दिशा न जाय, रोहिणी और रवि शुक्रवार में पश्चिम न जाय, उत्तराफाल्गुनी और मंगल बुधवार में उत्तर दिशा न जाय ।।४४-४५।।

दिक्शूलपरिहार—

रविवारे घृतं भुक्त्वा सोमवारे पयस्तथा।
गुडं मंगलवारे तु बुधवारे तिलानपि।।४६।।
बृहस्पतौ दधि प्राश्य शुक्रवारे यवांस्तथा।
माषान् भुक्त्वा शनौ गच्छेत् शूलदोषोपशान्तये।।४७।।

रविवार में धृत, सोम में दूध, मंगल में गुड़, बुध में तिल, वृहस्पति में दही, शुक्र में जव, शनिवार में माष भोजन करके यात्रा करे तो शूल का दोष नहीं होता है ।।४६-४७।।

अथ योगिनीवास—

पूर्वस्यां योगिनी ज्ञेया नवम्यां प्रतिपद्यपि।
अग्निकोणे तृतीयायामेकाद्दश्यां तथैव च।।४८।।
त्रयोदश्यां च पंचम्यां दक्षिणायां शिवा स्मृता।
द्वादश्यां च चतुर्थ्यो च नैर्ऋत्यां चैव योगिनी।।४९।।
चतुर्दश्यां च षष्ठां च पश्चिमायां च योगिनी।
सप्तम्यां पूर्णिमार्या च वायव्यां पार्वती स्मृता।।५०।।
दशम्यां च द्वितीयायामुत्तरस्यां शिवप्रिया।
ऐशान्यां च तथाऽष्टम्यां दर्शे च योगिनी स्मृता।।५१।।

प्रतिपदा और नवमी में पूर्व दिशा में, ३, ११ में अग्निकोण में, ५, १३, तिथि में दक्षिण में, १२, ४ में नैर्ऋत्यकोण में, १४, ६ में पश्चिम में, पूर्णिमा, सप्तमी में वायुकोण में, १०, २ में उत्तर में और अष्टमी अमावस्या में ईशानकोण में योगिनी रहती है।।४८-५१।।

अथ योगिनी फल—

सुखदा योगिनी वामे पृष्ठे वांछितदायिनी।
दक्षिणे धनहन्त्री च सम्मुखे मरणप्रदा।।५२।।

यात्रा में वाम भाग में योगिनी सुख देती है। पृष्ठ भाग में वांछित पदार्थ देती है। दहिने भाग में योगिनी पड़े तो धन को नाश करती है। सन्मुख भाग में पड़े तो मरण देती है।।५२।।

अथ कालवास—

शनौ शुक्रे गुरौ ज्ञे च भौमे सोमे रवौ क्रमात्।
पूर्वादिषु दिशास्वत्र कालवासो निगद्यते।।५३।।

शनि में पूर्व दिशा में, शुक्र में अग्निकोण में, बृहस्पति में दक्षिण, बुध में नैर्ऋत्यकोण, मंगल में पश्चिम, सोम में वायुकोण और रविवार में उत्तर दिशा में काल रहता है।।५३।।

अथ राहुनिवास—

धनुरलिमकरार्के राहुरास्ते च पूर्वे
सघटसफरमेषे दक्षिणे दिग्विभागे।।

वृषमिथुनकुलीरे पश्चिमस्थश्च कालो
हरिथुवतितुलायामुत्तरे सैंहिकेयः।।५४।।

वृश्चिक धनु मकर के सूर्य में पूर्व, कुम्भ मीन मेष के सूर्य में दक्षिण वृष मिथुन कर्क के सूर्य में पश्चिम तथा सिंह कन्या तुला के सूर्य में उत्तर दिशा में राहु (काल) रहता है।।५४।।

सम्मुखे दक्षिणे राहौ स्त्री यात्रां परिवर्जयेत्।
गृहारम्भप्रवेशौ च सम्मुखे चैव वर्जयेत्।।५५।।

सम्मुख और दंक्षिण राहु में स्त्री यात्रा न करे और गृहारम्भ, गृहप्रवेश में केवल सन्मुख राहु त्याग करे।।५५।।

इति अबकहडा चक्रोद्धारादि।



।। अथ वर्ज्य प्रकरण ।।

विवाहादि शुभ कार्यों में वर्ज्य—

गुर्वादित्ये व्यतीपाते वक्रातीचारगे गुरौ।
नष्टे शशिनि शुक्रे वा बाले वृद्धेऽथवा गुरौ।।१।।
पौषे चैत्रे च वर्षासु क्षये वाधिकमासके।
केतूद्‌गमे निरंशेऽर्के सिंहे नक्रेऽथवा गुरौ।।२।।
विवाहव्रतयात्रादि - पुरहर्म्य - गृहादिकम्।
क्षौरं विद्योपविद्यां च यत्नतः परिवर्जयेत्।।३।।

गुर्बादित्य (गुरु और सूर्य एक राशिस्थ), व्यतिपात (क्रान्तिसाभ्यरुप) नामतः विष्कुम्भादियोग में पठित, दुष्टयोग, गुरु के वक्र अतिचार इनमें तथा चन्द्रमा, शुक्र या बृहस्पति ये अस्त हों या बाल हों या वृद्ध हों तो उस समय में, पौष, चैत्रमास में वर्षा समय (आषाढ़ शुक्ल ११ से कार्तिक शुक्ल ११ तक चातुर्मान्य) क्षय और अधिक मास में जिस समय केतुका उदय देखने में आवे उस समय में जिस दिन सूर्य निरंश हो अर्थात् सूर्य के संक्रान्ति दिन और बृहस्पति सिंह या मकर में हो तो इन समयों में विवाह, उपनयन, यात्रा, नगर— निर्माण, गृह निर्माण, अवेश, प्रारम्भिक निर्माण, चूड़ाकरण, वेदादि विद्या या शस्त्रादि विद्या दीक्षादि कम से त्याग कर देना चाहिये।।१-३।।

सर्वस्मिन् विधुपापयुक्तनुलवावर्द्धे निशाह्नोर्घटी-
त्र्यशं वै कुनवांशकं ग्रहणतः पूर्वं दिनानां त्रयम्।
उत्पातग्रहतोऽद्र्यहानि शुभदोत्यातैश्च दुष्टं दिनं-
षण्मासंग्रहभिन्नभं त्यज शुभे योद्धं तथोत्पातभम्।।४।।

पापग्रह से युक्त राशि—लग्न और नवांश सब शुभ कार्यों में त्याज्य है। मध्य रात्रि और मध्य दिन के समय में २० पल त्याज्य हैं। पाप ग्रह की राशियों (मेष, वृश्चिक, मकर, कुम्भ, सिंह) के नवांश, सूर्यग्रहण, चन्द्रग्रहण के पूर्व के ३ दिन, कम्पादि उत्पात तथा ग्रहण के बाद ७ दिन तथा शुभप्रद उत्पात (असमय में फल—पुष्पादि होने) से दुष्ट दिन, इन सबों को सभी शुभ कार्यों में त्याग देना चाहिये। एवं ग्रह से भेदित नक्षत्र और जिसमें दो ग्रहों का युद्ध (राशिअंश कला बराबर) हो उन नक्षत्रों को सब शुभ कार्यों में ६ मास तक त्याग करना चाहिये ।।४।।

जन्मर्क्षमासतिथयो व्यतिपातभद्रा
वैधृत्यमा पितृदिनानि तिथिक्षयर्घ्री।
न्यूनाधिमास-कुलिक-प्रहरार्धपाता
विष्कुम्भवज्रघटिकात्रयमेव वर्ज्यम्।।५।।
परिघार्धं पञ्च शूले षट् च गण्डातिगण्डयोः।
व्याघाते नव नाड्यश्च वर्ज्याः सर्वेषु कर्मसु।।६।।

जन्म नक्षत्र, जन्ममास, जन्म तिथि, व्यतिपात योग, भद्रा, वैधृति योग, अमावस्या, माता, पिता के क्षय दिन, तिथिक्षय तिथिवृद्धि, क्षयमास, मलमास, कुलिक, अर्धयाम और पात (रवि चन्द्र की क्रान्ति की समता) को सब शुभकार्यों में त्याग कर देना चाहिये। परिघ योग का पूर्वार्ध, शूल योग के आरम्भ की ५ घड़ी, गण्ड अति गण्ड योग के आरम्भ की ६ घड़ी, व्याघात योग के आरम्भ की ९ घड़ी सब शुभकार्यों में त्याग देना चाहिये और जिस प्रकरण में जो त्याज्य कहे गये हैं उनका भी त्याग करके कार्यों का आरम्भ करना चाहिये ।।५-६।।

❁ अथ विवाह प्रकरण ❁

वर कन्या की वर्षशुद्धि—

कन्याया दशमे वर्षे नवमेऽप्यष्टमेऽपि वा।
वरस्य षोडशादूर्ध्वं विवाहो यौवने शुभः।।१।।

दसवें, नववें, आठवें वर्ष में कन्या का और वर का १६ वर्ष के अनन्तर युवावस्था में (अर्थात् ४० वर्ष के भीतर) विवाह शुभ है।।१।।

कन्या की संज्ञा—

'अष्टवर्षा भवेद् गौरी नववर्षा चा रोहिणी।
दशवर्षा च कन्या स्यादत ऊर्ध्वं रजस्वला।।२।।

आठवें वर्ष गौरी, नवम वर्ष में रोहणी, दशम वर्ष में कन्या कहलाती है, दश वर्ष के बाद रजस्वला कहलाती है ।।२।।

गौरीं ददन्नागलोकं लभते स्वश्च रोहिणीम्।
कन्यां ददन्मर्त्यलोकं रौरवं तु रजस्वलाम्।।३।।

गौरी दान करने से नागलोक, रोहिणी दान करने से स्वर्गलोक, कन्यादान करने से मृत्युलोक और रजस्वला दान करने से रौरव (नरक) पाता है ।।३।।

गुरुशुद्धिवशेन कन्यकानां समवर्षेषु षडब्दकोपरिष्टात्।
रविशुद्धिवशाच्छुभौ वराणामुभयोश्चन्द्रविशुद्धितो विवाहः।।४।।

६ वर्ष के ऊपर सम (८।१०) वर्ष में गुरुशुद्धि होने पर कन्या का और रवि शुद्धि से वर का तथा कन्या और वर की चन्द्र शुद्धि से विवाह शुभ होता है ।

रविशुद्धि

जन्मराशेस्त्रिषष्ठायदशमेषु रविः शुभः।
पश्चात् त्रयोदशांशेभ्यो द्विपञ्चनवेष्वपि।।५।।

जन्मराशि से ३, ६, १०, ११ वें रवि शुभ हैं। यदि रवि १३ अंश से अधिक हो जाय तो २, ५, ९ वीं राशि में भी शुभ होते हैं ।।५।।

चन्द्र शुद्धि—

जन्मराशेस्त्रिषष्ठाद्य-सप्तमायखसंस्थितः।
शुद्धश्चन्द्रो द्विकोणस्थः शुक्ले चाऽन्यत्र निन्दितः।।६।।

जन्मराशि से ३, ६, १, ७, ११, १०वें स्थान में चन्द्रमा शुभ होते हैं २, ५, ९ वें शुक्लपक्ष में शुभ हैं। ४, ८, १२ वें में अशुभ होते हैं ।।६।।

गुरु शुद्धि—

'बटुकन्याजन्मराशेस्त्रिकोणायद्विसप्तगः।
श्रेष्ठो गुरुः खषट्त्र्याद्ये पूजयान्यत्र निन्दितः।।७।।

बालक और कन्या की जन्म राशि में २, ५, ९, ७, ११ वें स्थान में गुरु शुभ होते हैं। तथा १०, ६, ३, १ इनमें शांति (जपदान) से शुद्ध होते हैं । ४, ८, १२ में अशुभ हैं ।।७।।

विशेष—

स्वोच्चे स्वभे स्वमैत्रे वा स्वांशे वर्गोत्तमे गुरुः।
अशुभोऽपि शुभो ज्ञेयो नीचारिस्थः शुभोऽप्यसन्।।८।।

अपने उच्च में अपनी राशि में मित्र की राशि में अपने नवांश में गुरु रहे तो अशुभ भी शुभ होता है और नीच तथा शत्रु की राशि में रहे तो शुभ भी अशुभ होता है। यहाँ गुरु उपलक्षण हैं—सब ग्रह रवि चंद्र आदि) अपने उच्चादि स्थान में रहने पर अनिष्ट स्थान में भी शुभ होते है।।८।।

अथ वरवरण (तिलक मुहूर्त)—

कन्याभ्राताऽथवा विप्रो वस्त्रालंकरणादिना।
ध्रुवपूर्वानिलैः कुर्याद्वरवृत्तिं शुभे दिने।।९।।

कन्या के सहोदर भाई अथवा कोई ब्राह्मण वस्त्र अलंकार आदि से शुभ दिन में ध्रुव संज्ञक, तीनों पूर्वा और कृत्तिका नक्षत्र में वर को तिलक चढ़ावे ।।९।।

अथ कन्यावरण मुहूर्त—

विवाहोक्तैश्च नक्षत्रैः शुभे लग्ने शुभे दिने।
वस्त्रालंकरणाद्यैश्च कन्यकावरणं शुभम्।।१०।।

विवाहोक्त नक्षत्र, शुभ दिन, शुभ लग्न में वस्त्र अलंकार फल पुष्प आदि से कन्यावरण शुभ होता है ।।१०।।

वर कन्या की कुण्डली विचार—

लग्ने व्यये चतुर्थे च सप्तमे वाष्टमे कुजः।
भर्तारं नाशयेद्भार्या भर्ता भार्यां विनाशयेत्।।११।।

यदि लग्न, द्वादश, चतुर्थ, सप्तम, अष्टम इन भावों में स्त्री की कुंडली में, मंगल हो तो स्वामी का नाश होता है और पुरुष की कुंडली में हो तो स्त्री का नाश होता है।।११।।

परिहार—

भौमतुल्यो यदा भौमो पापो वा तादृशो भवेत्।
वरवध्वोर्मिथस्तत्र भौमदोषो न विद्यते।।१२।।

उक्त स्थानों में वर के जन्मपत्र में मंगल हो तो वर मांगलिक (स्त्री नाशक) तथा कन्या के जन्मपत्र में कन्या मंगला कहलाती है। उसका यह परिहार है कि यदि उक्त स्थान में वर की कुण्डली में मंगल हो तथा कन्या की कुण्डली में भी उन्हीं स्थानों में से किसी में मंगल हो तो परस्पर दोषों का नाश होकर विवाह सम्बन्ध शुभप्रद हो जाता है। यदि एक के जन्मपत्र में मंगल हो और दूसरे के जन्मपत्र में उन स्थानों में मंगल न हो, कोई अन्य पापग्रह भी हो तथापि अनिष्ट भौम का दोष नहीं होता है।।१२।।

मतान्तर—

सप्तमे यदा सौरिर्लग्ने वापि चतुर्थके।
अष्टमे द्वादशे चैव तदा भौमो न दोषकृत्।।१३।।

यदि सप्तम, लग्न, चतुर्थ, अष्टम, द्वादश इन भावों में शनैश्चर हो तो परस्पर भौम का दोष नहीं होता है ।।१३।।

पुनः विशेष—

उक्तस्थानेषु चन्द्राच्च गणयेत् पापखेचरान्।
पापाधिक्ये वरे श्रेष्ठं विवाहं प्रवदेद् बुधः।।१४।।

जैसे लग्न से ४, ७, ८, १२ वें मंगल या अन्य पापग्रह अनिष्ट कहे गये हैं उसी प्रकार चन्द्रमा से भी उक्त स्थान में पापग्रह अनिष्ट होते हैं। इस लिये वर की कुंडली में लग्न और चन्द्रमा से युक्त स्थान में पापग्रह की संख्या गिने एवं कन्या की कुंडली में भी लग्न और चन्द्रमा से युक्त स्थानों में पापग्रह की संख्या गिने यदि कन्या से वर की पापसंख्या अधिक हो तो विवाह सम्बन्ध श्रेष्ठ समझना चाहिये ।।१४।।

अथ मेलापक (आठ प्रकार के कूट)—

वर्णो वश्यं तथा तारा योनिश्च ग्रहमैत्रकम्।
गणकूटं भकूटं च नाडी चैते गुणाधिकाः।।१५।।

१ वर्ण, २ वश्य, ३ तारा, ४, योनि, ५ ग्रहमैत्री, ६ गणकूट, ७ राशिकूट, ८ नाडी ये आठ प्रकार के कूट हैं। इनमें क्रम से एक—एक गुण अधिक होते हैं ।।१५।।

यथा - वर्ण में १, वश्य में २, तारा में ३, योनि में ४, ग्रहमैत्री में ५, गण मैत्री में ६, भकूट में ७, नाडी में ८, गुण होते हैं। सबका योग ३६ होता है।

अथ वर्णज्ञान—

कर्कमीनालयो विप्राः सिंहो मेषो धनुर्नृपाः।
कन्यावृषमृगा वैश्याः शूद्रा युग्मतुलाघटाः।।१६।।

कर्क, मीन, वृश्चिक ये ब्राह्मण वर्ण हैं। मेष, सिंह, धनु ये क्षत्रिय, कन्या, वृष, मकर ये वैश्य और मिथुन, तुला कुम्भ ये शूद्र वर्ण हैं।।१६।।

वर्णगुण संख्या—

एको गुणः सदृग्वर्णे तथा वर्णोत्तमे वरे।
हीनवर्णे वरे शून्यं केप्याहुः सदृशे दलम्।।१७।।

वर और कन्या एक वर्ण हो अथवा कन्या से वर का वर्ण उत्तम हो तो एक गुण, हीन वर्ण वर हो तो शून्य गुण होता है। कोई समान वर्ण में आधा गुण कहते हैं ।।१७।।

वर्णगुण संख्या चक्र—

वर्णज्ञान चक्र—

राशि	मीन	मेष	वृषभ	मिथुन
	कर्क	सिंह	कन्या	तुला
	वृश्चिक	धन	मकर	कुम्भ
वर्ण	ब्राह्मण	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र

वरवर्ण

कन्यावर्ण	ब्राह्मण	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र
ब्राह्मण	१	०	०	०
क्षत्रिय	१	१	०	०
वैश्य	१	१	१	०
शूद्र	१	१	१	१

अथ वश्यज्ञान—

"हित्वा मृगेन्द्रं नरराशिवश्याः सर्वे तथैषां जलजाश्च भक्ष्याः।
सर्वेऽपि सिंहस्य वशे विनालिं ज्ञेयं नराणां व्यवहारतोऽन्यत्।१८।

सिंहराशि को छोड़कर सब राशि नरराशि के वश्य होती हैं और जलचर राशि भक्ष्य हैं और वृश्चिक के छोड़कर सब राशि सिंह के वश में हैं। और राशियों के वश्यावश्य को व्यवहार से समझना।।१८।।

वश्यज्ञानार्थ-द्विपदादिसंज्ञा—

वृषसिंहधनुर्मेषा मकरार्ध चतुष्पदाः।
मृगोत्तरार्ध कुम्भश्च मीनश्चैते जलेचराः।।१९।।
नरा मिथुनकन्ये च धनुःपूर्वार्धकं तुला।
कीटस्तु कर्कटः प्रोक्तो वृश्चिकश्च सरीसृपः।।२०।।

मेष, वृष, सिंह धन के उत्तरार्ध और मकर के पूर्वार्ध ये चतुष्पद हैं। मकर के उत्तरार्ध, कुम्भ, मीन ये जलचर हैं। मिथुन, तुला, कन्या, धन के पूर्वार्ध ये द्विपद हैं। कर्क, कीट और वृश्चिक सरीसृप हैं।।१९-२०।।

वश्यगुणबोधक चक्र

वरराशि—

कन्याराशि—

	चतु.प	द्विपद	जलचर	वनचर	कीट
चतुष्पद	२	१	१	।।	०
द्विपद	१	२	।।	०	०
जलचर	१	।।	२	१	२
वनचर	०	०	१	२	०
कीट	१	१	१	०	२

वश्य गुण विभाग—

सख्यं वैरं च भक्ष्यं च वश्यमाहुस्त्रिधा बुधाः।
वैरभक्ष्ये गुणाभावो द्वयोः सख्ये गुणद्वयम्।।२१।।
वश्यवैरे गुणस्त्वेको वश्यभक्ष्ये गुणार्धकम्।

सख्य (मैत्री) वैर, भक्ष्य, ये तीन प्रकार के वश्य कूट होते हैं। यदि वर कन्या की राशि में परस्पर वैर भक्ष्य हो तो शून्य गुण और दोनों में मैत्री हो तो २ गुण, वश्य वैर हो तो १ गुण, वश्य भक्ष्य हो तो आधा (।।) गुण होता है।।२१।।

अथ ताराकूट—

कन्यर्क्षाद्वरभं यावत् कन्याभं वरभादपि।।२२।।
गणयेन्नवहृच्छेषे त्रीष्वद्रिभमसत्स्मृतम्।

कन्या के नक्षत्र से वर के नक्षत्र तक और वर के नक्षत्र से कन्या के नक्षत्र तक गिनकर पृथक ९ का भाग देने से ७, ५, ३, बचे तो अशुभ अर्थात् १, २, ४, ६, ८, ९ बचे तो शुभ है ।।२२।।

तारा गुणविभाग—

एकतश्चेच्छुभा तारा परतश्चाशुभा तदा।।२३।।
सार्द्धश्चैको गुणो ग्राह्यस्ताराशुद्ध्या मिथस्त्रयः।
उभयोर्न शुभा तारा तदा शून्यं समादिशेत्।।२४।।

एक से शुभ तारा दूसरे से अशुभ हो तो डेढ़ (१।।) गुण, दोनों से यदि शुभ तारा हो तो ३ गुण । दोनों से अशुभ तारा हो तो ० गुण समझना।।२३-२४।।

तारागुणबोधकचक्र— वरतारा संख्या—

	संख्या	१	२	३	४	५	६	७	८	९
कन्या की तारा संख्या	१	३	३	१।।	३	१।।	३	१।।	३	३
	२	३	३	१।।	३	१।।	३	१।।	३	३
	३	१।।	१।।	०	१।।	०	१।।	०	१।।	१।।
	४	३	३	१।।	३	१।।	३	१।।	३	३
	५	१।।	१।।	०	१।।	०	१।।	०	१।।	१।।
	६	३	३	१।।	३	१।।	३	१।।	३	३
	७	१।।	१।।	०	१।।	०	१।।	०	१।।	१।।
	८	३	३	१।।	३	१।।	३	१।।	३	३
	९	३	३	१।।	३	१।।	१।।	३	३	३

अथ योनिकूट—

'अश्विन्यम्बुपयोर्हयो निगदितः
स्वात्यर्कयोः कासरः
'सिंहो वस्वजपाद्भयोः समुदितो
याम्यान्त्ययोः कुञ्जरः।

मेषो देवपुरोहितानलभयोः कर्णाम्बुनोर्वानरः।
स्याद्वैश्वाभिजितोस्तथैववनकुश्चान्द्राब्जयोन्योरहिः।।२५।।
ज्येष्ठामैत्रभयोः कुरङ्ग उदितो मूलार्द्रयोः श्वा तथा।
मार्जारोऽदितिसार्पयोरथ मघायोन्योस्तथैतोन्दुरुः।
व्याघ्रो द्वीशभचित्रयोरपि च गौरर्यम्णबुध्यर्क्षयो-
र्योनिः पादगयोः परस्परमहावैरं भयोन्योस्त्यजेत्।।२६।।

अश्विनी, शतभिषा की अश्व योनि, स्वाती हस्त की महिष, धनिष्ठा पूर्वभाद्रपदा की सिंह, भरणी रेवती की हस्ती, पुष्य कृत्तिका की मेष, श्रवण पूर्वाषाढ़ की वानर, उत्तराषाढ़ अभिजित् की नकुल, मृगशिरा पूर्वाफाल्गुनी की सर्प, ज्येष्ठा अनुराधा की हरिण, मूल आर्द्रा की कुत्ता, पुनर्वसु आश्लेषा की मार्जार, मघा पूर्वाफाल्गुनी की मूषक, विशाखा चित्रा की व्याघ्र, उत्तराफाल्गुनी उत्तराभाद्रपदकी गौ योनि है। श्लोक के एक—एक चरण में जो दो—दो योनि पठित हैं उनमें परस्पर महावैर है इसलिये त्याज्य है।।२५-२६।।

अथ योनिगुण विभाग—

महावैरे च वैरे च समे चैव यथाक्रमम्।
मैत्रे चैवातिमैत्रे च खैकद्वित्रिचतुर्गुणा।।२७।।

परस्पर महावैर में ० (शून्य), बैर मे १, सम में २, मैत्री में ३, अति मैत्री मे ४, ४, ग्रहण करना चाहिये।।२७।।

"रवैः समो ज्ञो मित्राणि चन्द्रारेज्याः परावरी।
इन्दोर्न शत्रवो मित्रे रविज्ञावितरे समाः।।२८।।
समौ कुजस्य शुक्रार्कौ बुधोऽरिः सुहृदः परे।
ज्ञस्य चन्द्रो रिपुर्मित्रे शुक्रार्कावितरे समाः।।२९।।
आरार्कज्ञा गुरोर्मित्राण्यार्किर्मध्यः परावरी।
भृगोः समावीज्यकुजौ मित्रे ज्ञार्कौ परौ रिपू।।३०।।
शनेर्गुरुः समो मित्रे शुक्रज्ञौ शत्रवः परे।
कश्यपोत्त्याऽनया विज्ञो ग्रहमैत्रीं विचारयेत्।।३१।।

रवि के बुध सम, चन्द्रमा मंगल बृहस्पति मित्र, शुक्र, शनि, शत्रु है। चन्द्रमा के शत्रु नहीं हैं , रवि बुध मित्र, मंगल बृहस्पति शुक्र शनि सम हैं। मंगल के शुक्र शनि सम, बुध

शत्रु चन्द्र रवि बृहस्पति मित्र, बुध के चन्द्रमा शत्रु, सूर्य शुक्र मित्र, मंगल बृहस्पति शनि सम हैं। बृहस्पति के रवि मंगल बुध मित्र, शनि सम, चन्द्र शुक्र शत्रु हैं। शुक्र के मंगल बृहस्पति सम, बुध शनि मित्र, रवि चन्द्र शत्रु हैं। शनि के गुरु सम, बुध शुक्र मित्र रवि चन्द्र मंगल शत्रु हैं। इस काश्यप मुनि की उक्ति से ग्रहमैत्री विचार करना चाहिये ।।२८-३१।।

योनिगुणबोधक चक्र—

अथ ग्रहमैत्री

	अ	गज	मेष	सर्प	श्वा	मा	मू.	गौ	म	व्या	मृग	वा	न	सिं.
अश्व	४	२	३	२	२	२	२	३	०	१	३		२	१
गज	२	४	३	३	२	२	२	२	३	२	२	३	२	०
मेष	३	३	४	३	२	३	२	३	३	१	३		३	१
सर्प	२	२	३	४	२		१	१	२	२	२	२	०	२
श्वान	२	२	१	२	४	१	१	१	२	१	०	२	२	१
मार्जार	२	२	३	२	१	४	०	२	२	१	२	२	२	२
मूषक	२	२	२	१	१	०	४	२	२	२	२	२	२	१
गौ	३	२	३	१	२	४	२	४	३	०	३	२	३	१
महिष	०	३	३	२	०	२	२	३	४	१	२	२	२	३
व्याघ्र	१	२	१	२	१	१	२	०	१	४	१	१	२	२
मृग	३	२	३	२	०	२	२	३	२	१	४	२	२	२
वानर	२	३	०	२	२	२	२	२	२	१	२	४	२	३
नकुल	२	२	१	०	२	२	२	३	२	२	२	२	२	३
सिंह	१	०	१	२	१	२	१	१	२	२	२	३	२	४

ग्रहमैत्री गुणविभाग—

ग्रहमैत्रं सप्तविधं गुणाः पञ्च प्रकीर्तिताः।
तत्रैकाधिपतित्वे च मित्रत्वे गुणपञ्चकम्।।३२।।
चत्वारः सममित्रत्वे द्वयोः साम्ये त्रयो गुणाः।
मित्रवैरे गुणश्चैकः समवैरे गुणार्द्धकम्।।३३।।
परस्परं खेटवैरे गुणशून्यं विनिर्दिशेत्।
असद्भे सममित्रादौ व्येका ग्राह्या यथोदिताः।।३४।।

ग्रहमैत्री कूट सात प्रकार के हैं और ५ गुण हैं। इनमें यदि वर कन्या की राशि में एकाधिपत्य वा मैत्री हो तो ५ गुण, सम मित्रता हो तो ४ गुण, दोनों में समता हो तो ३ गुण, मित्र शत्रुत्व हो तो १ गुण सम शत्रुता हो तो अर्ध (।।) गुण और परस्पर शत्रुता हो तो शून्य गुण होता है। मित्रादि होने पर भी यदि नीच आदि में हो तो प्राप्त गुण में एक अल्प करकें ग्रहण करना चाहिये ।।३२-३४।।

अथ ग्रहमैत्री बोधक चक्र–

	सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
सूर्य	५	५	५	४	५	०	०
चंद	५	५	४	१	४	।।	।।
मंगल	५	४	५	।।	५	३	।।
बुध	४	१	।।	५	।।	५	४
गुरु	५	४	५	।।	५	।।	३
शुक्र	०	।।	३	५	।।	५	५
शनि	०	।।	।।	४	३	५	५

अथ गणकूट–

"रक्षोनरामरगणाः क्रमतो मघाहि–
वस्विन्द्रमूलवरुण नलतक्षराधा।
पूर्वोत्तरात्रय–विधातृयमेशभानि
मैत्रादितीन्दुहरिपौष्णमरुल्लघूनि।।३५।।

मघा, श्लेषा, धनिष्ठा, ज्येष्ठा, मूल, शततारका, कृत्तिका, चित्रा, विशाखा ये राक्षसगण हैं। तीनों पूर्वा, तीनों उत्तरा, रोहिणी, भरणी, आर्द्रा, ये नरगण हैं। अनुराधा, पुनर्वसु, मृगशिरा, श्रवण, रेवती, स्वाती और लघुसंज्ञक (हस्त, पुष्य अश्विनी, अभिजित) ये देवगण हैं ।।३५।।

अथ फल—

स्वगणे परमा प्रीतिर्मध्यमा नरदेवयोः।
नरराक्षसयोर्मृत्युः कलहो देवरक्षसोः।।३६।।

अपने गण में उत्तम प्रीति, देव मनुष्य गणमें मध्यम प्रीति होती है, नर राक्षस गण में मृत्यु, और देव राक्षस गण में कलह होता है ।।३६।।

अथ गणकूट गुणविभाग—

स्वगणे षड्गुणाः प्रोक्ताः पञ्च देवमनुष्ययोः।
देवराक्षसयोश्चैकः शून्यं मनुजरक्षसोः।।३७।।

स्वगण में ६ गुण, देव नर में ५, देवराक्षस में १, नर राक्षस में शून्य ० गुण होता है ।।३७।।

गण गुणबोधक चक्र—

वर

कन्या

	देव	नर	राक्षस
देव	६	५	१
नर	५	६	०
राक्षस	१	०	६

गणादि दोष परिहार—

राशीशयोः सुहृद्भावे मित्रत्वे वांशनाथयो।
गणादिदौष्ट्येऽप्युद्वाहः पुत्रपौत्रप्रवर्धनः।।३८।।

राशीश में मैत्री हो अथवा अंश के स्वामी में मैत्री हो तो गणादि दुष्ट रहने पर भी विवाह पुत्र पौत्र को बढ़ानेवाला होता है ।।३८।।

अथ राशिकूट—

''मृत्युः षट्काष्टके ज्ञेयोऽपत्यहानिर्नवात्मजे।
द्विर्द्वादशे दरिद्रत्वं द्वयोरन्यत्र सौख्यकृत्।।३९।।

वर की राशि से कन्या की राशि तक और कन्या की राशि से वर की राशि तव गिनने से ६।८ हो तो दोनों की मृत्यु, ९।५ हो तो सन्तान हानि, २, १२ हो तो दरिद्रत होती है ।।३९।।

दुष्टभकूटपरिहार—

एकाधिपत्ये राशीशमैत्र्यां दुष्टभकूटके।
नाडी नक्षत्रशुद्धिश्चेद्विवाहः शुभदस्तदा।।४०।।

वर और कन्या दोनों की राशि के स्वामी एक ही ग्रह हो अथवा दोनों राशीश में मैत्री ह ोऔर नाड़ी नक्षत्र शुद्ध रहे तो दुष्टभकूट में भी विवाह शुभ होता है ।।४०।।

राशिकुट गुणबोधक चक्र—

	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध	म.	कु	मी
मे.	७	०	७	७	०	०	७	०	०	७	७	०
वृ.	०	७	०	७	७	०	०	७	०	०	७	७
मि	७	०	७	०	७	७	०	०	७	०	०	७
क	७	७	०	७	०	७	७	०	०	७	०	०
सिं.	०	७	७	०	७	०	७	७	०	०	७	०
कं.	०	०	७	७	०	७	०	७	७	०	०	७
तु.	७		०	७	७	०	७	०	७	७	०	०
वृ.	०	७	०	०	७	७		७	०	७	७	०
ध.	०	०	७	०	०	७	७	०	७	०	७	७
म	७	०	०	७	०	०	७	७	०	७	०	७
कुं.	७	७	०	०	७	०	०	७	७	०	७	०
मी.	०	७	७	०	०	७	०	७	७	७	०	७

अथ नाड़ीकूट—

ज्येष्ठारौद्रार्यमाम्भःपतिभयुगयुगं दास्त्रभं चैकनाड़ी
पुष्येन्दुत्वाष्ट्रमित्रान्तकवसुजलभं योनिबुध्न्ये च मध्या।
वाय्वग्निव्यालविश्वोडुयुगयुगमथो पौष्णभं चापरा स्या-
द्दम्पत्योरेकनाड्यां परिणयनमसन्मध्यनाड्यां च मृत्युः।।४१।।

ज्येष्ठा, आर्द्रा, मूल, पुनर्वसू, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, शतभिषा, पूर्वभद्र, अश्विनी ये आदि नाड़ी और पुष्य, मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, भरणी, धनिष्टा, पूर्वाषाढ़, पूर्वफाल्गुनी, उत्तराभाद्र ये मध्यनाड़ी तथा स्वाती, विशाखा, कृत्तिका, रोहिणी, आश्लेषा, मघा, उत्तराषाढा, श्रवण, रेवती ये अन्त्यनाड़ी हैं। वर कन्या की एक नाड़ी में विवाह अशुभ है, मध्यनाड़ी नें मृत्यु होती है अर्थात् भिन्न नाड़ी शुभ होती ।।४१।।

नाड़ी बोधक चक्र—

आदि	अ.	आ.	पु.	उ.फा.	ह.	ज्ये.	मू.	श.	पू.
मध्य	भ.	मू.	पु.	पु फा	चि.	अ.	पू	ध.	उ.
अन्त्य	कृ.	रो.	श्ले.	म.	स्वा.	वि.	उ.	श्र.	रे.

नाड़ी गुणबोधक चक्र—

वरनाड़ी

कन्यानाड़ी	आदि	मध्य	अन्त्य
आदि	०	८	८
मध्य	८	०	८
अन्त्य	८	८	०

विशेष

नाडीदोषोऽस्ति विप्राणां वर्णदोषोऽस्ति भूभुजाम्।
वैश्यानां गणदोषः स्यात् शूद्राणां योनिदूषणम्।।४२।।

ब्राह्मणों को नाड़ीदोष, क्षत्रियों को वर्ण राशिज वर्ण दोष, वैश्यों को गणदोष और शूद्रों को योनिदोष विशेष करके हैं।।४२।।

परिहार—

राश्यैक्ये चेद्भिन्नमृक्षं द्वयोः स्थान्नक्षत्रैक्ये राशियुग्मं तथैव।
नाड़ीदोषो नो गणानां न दोषो नक्षत्रैक्ये पादभेदे शुभं स्यात्।।४३।।

वर कन्या की एक राशि हो और नक्षत्र भिन्न—भिन्न हो अथवा एक नक्षत्र और भिन्न भिन्न राशि हो तो नाड़ीदोष और गणदोष नहीं होता है। तथा एक नक्षत्र में चरण के भेद होने से शुभ होता है।।४३।।

ग्राह्य अग्राह्य गुण संख्या—

अशुभोऽष्टादशाल्पश्चेत् शुभोऽष्टादशतोऽधिकः।
शुभोऽतिगुणयोगश्चेत्सप्तविंशतितोऽधिकः ।।४४।।

आठों कूट के गुण का योग १८ से अल्प अशुभ, और १८ से अधिक शुभ है तथा २७ से अधिक हो तो अत्यन्त शुभ है ।।४४।।

अथ वर्गकूट—

अवर्गो गरुडस्योक्तो मार्जारस्य कवर्गकः।
सिंहस्यैवं चवर्गस्तु कुक्कुरस्य टवर्गकः।।४५।।
सर्पस्योक्तस्तवर्गस्तु पवर्गो मूषकस्य च।
यवर्गस्तु गजस्योक्तो मेषस्य तु शवर्गकः।।४६।।

अवर्ग के स्वामी गरुड़, कवर्ग के मार्जार, चवर्ग के सिंह, टवर्ग के कुक्कुर, तवर्ग के सर्प, पवर्ग के मूषक, यवर्ग के हरिण (मृग), शवर्ग के स्वामी मेष हैं।।४५-४६।।

स्ववर्गात्पञ्चमः शत्रुश्चतुर्थो मित्रसंज्ञकः।
उदासीनस्तृतीयः स्याद्वर्गभेदस्त्रिधोदितः।।४७।।
स्ववर्गे परमा प्रीतिर्मित्रवर्गेऽपि तादृशी।
उदासीने प्रीतिरल्पा शत्रुवर्गे मृतिर्भवेत्।।४८।।

अपने से ५ वाँ वर्गेश शत्रु ४ था मित्र और तृतीय उदासीन (सम) होते हैं। इस प्रकार तीन भेद हैं। एक वर्ग में अत्यन्त प्रीति, मित्र वर्ग में उत्तम प्रीति और उदासीन में थोड़ी प्रीति होती है। परस्पर शत्रुवर्ग में मृत्यु होती है ।।४७-४८।।

वर्ग चक्र—

	वर्ग	स्वामी	मित्र	सम	शत्रु	दिशा	स्वर
अवर्ग	अ इ उ ए ओ	गरुड़	श्वान	सिंह	सर्प	पूर्व	८
कवर्ग	क ख ग घ ङ	मार्जार	सर्प	श्वान	मूषक	अग्निकोण	५
चवर्ग	च छ ज झ ञ	सिंह	मूषक	सर्प	मृग	दक्षिण	६
टवर्ग	ट ठ ड ढ ण	श्वान	मृग	मूषक	मेष	नैऋत्य	४
तवर्ग	त थ द ध न	सर्प	मेष	मृग	गरुड़	पश्चिम	७
पवर्ग	प फ ब भ म	मूषक	गरुड़	मेष	मार्जार	वायव्य	१
यवर्ग	य र ल व	मृग	मार्जार	गरुड़	सिंह	उत्तर	३
शवर्ग	श ष स ह	मेष	सिंह	मार्जार	श्वान	ईशान	२

वरवधू मेलापक-उदाहरण—

वर कुण्डली

च. ८
६ सू.
७ बु., शु.
५ रा.
९
१०
४
११ के.
१
३
१२ मं.
२ बु., श.

संवत् १९९८ अश्विन शुक्ल पञ्चमी गुरुवासरे तुलालग्नोदये विशाखा चतुर्थ चरणे जन्म।

कन्या कुण्डली

च. ९
७ शु.
८
१० के.
६ सू., मं.
११
५ बु., शु.
१२
२
४ रा.
१
३ श.

संवत् २००१ अश्विन शुक्ल नवमी भौमवासरे वृश्चिकलग्नोदये पूर्वाषाढ तृतीय चरणे जन्म।

ग्रहमेलापक—इसी प्रकार के ११ वे श्लोकानुसार वर की कुण्डली में लग्नादि अनिष्ट स्थान में मंगल नहीं है। एवं चन्द्रमा से भी उक्त स्थान (१, ४. ७, ८, १२) में मंगल नहीं है। अतः वर में मांगलिक दोष नहीं है।

एवं कन्या की कुण्डली में भी—लग्न से अथवा चन्द्रमा से उक्त स्थान में मंगल न होने से कन्या भी मंगली नहीं है। किन्तु कुछ आचार्यों के मत से—उक्त स्थान में अन्य पाप ग्रह होने से भी दोष कहा गया है। उसके अनुसार— वर की कुण्डली में लग्न से अष्टम शनि, द्वादश सूर्य और चन्द्रमा से सप्तम शनि, चतुर्थ सुर्य है। एवं ४ अनिष्ट ग्रह संख्य हुई। तथा कन्या की कुण्डली में लग्न से अष्टम शनि, चन्द्रमा से सप्तम शनि, अष्टम राहु एवं ३ पापग्रह अनिष्ट हैं। यहाँ वर की अनिष्ट ग्रह संख्या से कन्या की अनिष्ट ग्रह संख्या अल्प है अत: ग्रहमेलापक श्रेष्ठ हुआ।

	वर	कन्या	गुण
वर्ण	ब्राह्मण	वैश्य	१
वश्य	कीट	चतुष्पद	१
तारा	५	६	१।।
योनि	व्याघ्र	वानर	२
ग्रहमैत्री	मित्र	सम	५
गणमैत्री	राक्षस	मनुष्य	०
भृकूट	२	१२	०
नाड़ी	अन्त	मध्य	८
	गुण योग		१८।।

नक्षत्र मेलापक के अनुसार गुण का १८ से अधिक और २७ से अल्प होने के कारण मध्यम है। अत: श्रेष्ठ और मध्यम मेलापक होने से इन दोनों में विवाह शुभप्रद सिद्ध होता है।

फिर भी—वर और वधू के कुल और रूप गुण की अनुकूलता देख कर ही विवाह सम्बन्ध करना चाहिए।

विवाह में दशदोष—

लत्ता पातो युतिर्वेधो यामित्रं बाणपञ्चकम्।
एकार्गलोपग्रहौ च क्रान्तिसाम्यं शशीनयो:।।४९।।
दग्धा तिथिश्च विज्ञेया दश दोषा: करग्रहे।

१ लत्ता, २ पात, ३ युति, ४ वेध, ५ यामित्र, ६ बाणपञ्चक, ७ एकार्गल, ८ उपग्रह, ९ क्रान्तिसाम्य, १० दग्धतिथि ये विवाह में मुख्य दशदोष होते हैं।।४९।।

विशेष

पञ्चाधिकेषु दोषेषु विवाहं परिवर्जयेत्।।५०।।
क्रूरविद्धे कुयामित्रे मृत्युबाणे विशेषत:।
सुविद्धभे सुयामित्रे केपीच्छन्ति करग्रहम्।।५१।।

उक्त दोषों में ५ से अधिक दोष हो तो विवाह नहीं करना चाहिये उनमें भी यदि क्रूरग्रह बिद्धनक्षत्र, पापग्रहकृत यामित्र और मृत्युबाण हो तो विशेषकर त्याग करना चाहिये। कुछ आचार्य शुभ ग्रह से विद्ध नक्षत्र में और शुभ ग्रहकृत या मित्र दोष में विवाह शुभप्रद कहते हैं।।५०-५१।।

(१) लत्तादोष—

ज्ञराहुपूर्णेन्दुसिताः स्वपृष्ठे भ सप्त गो जाति-शरैर्मितं हि।
संलत्तयन्तेऽर्क-शनीज्य-भौमाःसूर्याष्टतर्काऽग्निमितंपुरस्तात्।।५२।।

अपने आश्रित नक्षत्र से—पीछे ६ ठे को बुध, ९ वें को राहु, २२ वें को पूर्णचन्द्र, ५ वें को शुक्र लत्तित (पद से मर्दित) करते हैं। तथा अपने आश्रित नक्षत्रसे आगे—१२ वें को सूर्य, ८ वें को शनि, ६ ठे को गुरु, ३ तृतीय नक्षत्र को मंगल लत्तादोष से युक्त बनाते हैं। इसमें अभिजित् की गणना नहीं होती है।।५२।।

(२) पातदोष—

हर्षण-वैधृति-साध्य-व्यतिपातकशूलगण्डयोगानाम्।।२७।।
अन्ते यन्नक्षत्रं पातेन निपातितं तत् स्यात्।।५३।।

हर्षण, वैधृति, साध्य, व्यतिपात, शूल, गण्ड इन ६ योगों के अन्त में जो नक्षत्र हो वह पातदोष युक्त होता है।।५३।।

(३) युतिदोष—

चन्द्रे सूर्यादिसंयुक्ते दारिद्र्यं मरणं शुभम्।
सौख्यं सापत्न्यवैराग्य पापद्वययुते मृतिः।।५४।।

(चन्द्रमा—ग्रह से युक्त हो तो युति दोष कहलाता है।)

चंद्रमा यदि सूर्य से युक्त हो तो दरिद्रता, मंगल से युक्त हो तो मरण बुध से युक्त हो तो शुभ, गुरु से युक्त हो तो सुख, शुक्र से युक्त हो तो शत्रुता, शनि से युक्त हो तो वैराग्य, यदि दो पापग्रहों से युक्त हो तो मरण होता है।।५४।।

(४) विवाह में पञ्चशलाकावेध

वेधोऽन्योन्यमसौ विरञ्च्यभिजितोर्याम्यानुराधर्क्षयो-
र्विश्वेन्द्वोर्हरिपित्र्ययोर्ग्रहकृतो हस्तोत्तराभाद्रयोः।
स्वातीवारुणयोर्भवेन्निरृतिमादित्योस्तथोफान्त्ययोः
खेटे तत्र गते तुरीयचरणाद्योर्वा तृतीयद्वयोः।।५५।।

यह पञ्चशलाकावेध—परस्पर रोहिणी अभिजित् में, भरणी अनुराधा में, उत्तराषाढ़ मृगशिरा में, श्रवण मघा में, हस्त उत्तराभाद्र में स्वाती शतभिषा में, मूल पुनर्वसु में तथा उत्तरफाल्गुनी रेवती में होता है। अर्थात् परस्पर वेध के जो दो—दो नक्षत्र हैं इनमें एक में, कोई ग्रह हो

तो दूसरा नक्षत्र विद्ध समझा जाता है जो विवाह में त्याज्य कहा गया है। इस प्रकार का वैध गौण (साधारण) है। वास्तव में एक नक्षत्र के प्रथम चरण में ग्रह हो तो दूसरे का चतुर्थ चरण और चतुर्थ चरण में हो तो दूसरे का प्रथम चरण विद्ध होता है एवं द्वितीय और तृतीय चरण में परस्पर वेध होता है। पापग्रहकृत चरण वेध अवश्य त्याज्य कहा गया है ।।५५।।

प्रसंगवश अन्य कर्मों में सप्तशलाका वेध—

शाक्रेज्ये शतभानिले जलशिवे पौष्णार्यमर्क्षे वसुः
द्वीशे वैश्वसुधांशुभे हयभगे सार्पानुराधे तथा।
हस्तोपान्तिमभे कृशानुहरिभे मूलादिती त्वाष्ट्रभे-
ऽजाङ्घ्री याम्यमघे कुशानुहरिभे विद्धेऽद्रिरेखे मिथः।।५६।।

(जिस प्रकार विवाह में पञ्चशलाका चक्र में दो-दो नक्षत्रों में परस्पर वेध होता है, उसी प्रकार उपनयन आदि शुभ कर्मों में सप्तशलाका चक्र में दो दो नक्षत्रों में परस्पर वेध होता है) जैसे ज्येष्ठा पुष्य में, शतभिषा स्वाती में, पूर्वाषाढ आर्द्रा में, रेवती उत्तर पूर्व फाल्गुनी में, आश्लेषा अनुराधा में हस्त—उत्तरभाद्र में, रोहिणी अभिजित् में, मूल पुनर्वसु में, चित्रा पूर्वभाद्र में, भरणी मघा में, कृत्तिका श्रवण में परस्पर वेध समझना चाहिये। चरण वेध भी उसी प्रकार प्रथम चतुर्थ और द्वितीय तृतीय में होता है।।५६।।

(५) यामित्रदोष—

लग्नाच्चन्द्रान्भवनगे खेटे न स्यादिह परिणयनम्।
किं वा बाणाशुगमितलवगे यामित्रं स्यादशुभकरमिदम्।।५७।।

लग्न—या चन्द्रमा से सप्तम स्थान में कोई ग्रह हो तो यामित्र (जामित्र) दोष होता है। यदि लग्नगत नवमांश या चन्द्रगत नवमांश से ५५ वें नवमांश में ग्रह हो (अर्थात् लग्न ग्रह का अन्तर ६ राशि हो) तो पूर्ण यामित्र होता है। यह विवाह में अशुभ प्रद होता है।

साधारण यामित्र अल्प दोषावह और पूर्ण यामित्र अधिक दोषप्रद होता है। एवं शुभग्रह कृत यामित्र स्वल्प दोषप्रद और पापग्रह कृत अधिक दोषप्रद होता है।।५७।।

(६) बाणदोष—

रसगुण-शशिनागाब्धाढ्यसंक्रान्तियातां-
शकमिति-रथतष्टाऽङ्कैर्यदा पञ्च शेषः।
रुगनल-नृप-चौरा-मृत्यु- संज्ञश्च बाणो
नवहृतशरशेषे शेषकैक्ये सशल्यः।।५८।।

तात्कालिकसूर्य के भुक्तांश को ५ स्थान में रखकर क्रम से ६, ३, १, ८, ४ जोड़कर सब में ९ के भाग देनेसे प्रथम स्थान में ५ शेष बचे तो रोगबाण, द्वितीय स्थान में अग्नि, तृतीय स्थान में राज, चतुर्थ स्थान में चोर और पञ्चम स्थान में मृत्युबाण होता है ।।५८।।

विन्ध्य से दक्षिण देश में बाणदोष—

लग्नेनाढ्या याततिथ्योऽङ्कतष्टाः
शेषे नाग-द्व्यब्धि-तर्क्रेन्दुसंख्ये।
रोगो वह्नी राजचौरो च मृत्यु-
र्बाणश्चायं दाक्षिणात्यप्रसिद्धः।।५९।।

जिस तिथि में विवाह करना हो उसके पूर्व की गत तिथि संख्या में लग्नराशि संख्या जोड़कर उसमें ९ के भाग से ८ शेष बचे तो रोग बाण, २ शेष में अग्निबाण, ४ शेष में राजबाण, ६ शेष में चोरबाण और ० शेष बचे तो मृत्यु बाण, होता है ।।५९।।

समय और कृत्यों में त्याज्य बाण—

रात्रौ चोररुजौ दिवा नरपतिर्वह्निः सदा सन्ध्ययो-
र्मृत्युश्चाथ शनौ नृपो विदि मृतिर्भौमेऽग्निचोरौ रवौ।
रोगोऽथ व्रत-गेहगोप-नृप-सेवा-यान-पाणिग्रहे-
वर्ज्याश्च क्रमता बुधै रुगनलक्ष्मापाल-चौरा मृतिः।।६०।।

चोर और रोग बाण रात्रि में, राज—बाण दिन में, अग्नि बाण सर्वदा, और मृत्यु बाण सन्ध्या समय में त्याज्य है। शनिवार में रोग बाण बुध में मृत्युबाण, मङ्गल में अग्निबाण और चोर बाण तथा रविवार में रोगबाण त्याज्य है। एवं उपनयन में रोगबाण, गृह कर्म में अग्निबाण, राजसेवा (नौकरी) में राजबाण, यात्रा में चोरबाण और विवाह में मृत्युबाण त्याज्य है।।६०।।

(७) एकार्गल दोष (खार्जूर)—

व्याघात-गण्ड-व्यतिपात-पूर्व-
शूलान्त्यवज्रे परिघाति-गण्डे।
एकार्गलाख्यो ह्यभिजित् -समेतो-
दोषः शशी चेद् विषमर्क्षगोऽर्कात्।।६१।।

व्याघात, गण्ड, व्यतिपात, वज्र, परिघ, अतिगण्ड इन योगों में कोई योग हो उस दिन सूर्याश्रित नक्षत्र से चन्द्राश्रित नक्षत्र की संख्या विषम हो तो एकार्गल दोष होता है। यहाँ नक्षत्रों की गणना अभिजित् समेत होती है ।।६१।।

(८) उपग्रह दोष—

शराष्टदिक्-शक्रनगातिधृत्यस्तिथिर्धृतिश्च प्रकृतेश्च पञ्च।
उपग्रहाः सूर्यभतोऽब्जताराः शुभा न देशे कुरु-बाह्लिकानाम्।।६२।।

यदि सूर्याश्रित नक्षत्र से—चन्द्र नक्षत्र तक गिनने से ५, ८, १०, १४, ७, १९, १५, १८, २१, २२, २३, २४, २५, इनमें कोई संख्या हो तो उपग्रह द्रोष कहलाता है। यह कुरु और वाह्लिक देश में शुभ नहीं होता है ।।६२।।

(९) क्रान्तिसाम्य दोष—

पञ्चास्याजौ गोमृगौ तौलिकुम्भौ कन्यामीनौ कर्क्यली चापयुग्मे।
तत्रान्योन्यं चन्द्रभान्वोर्निरुक्तं क्रान्तेः साम्यं नो शुभं मंगलेषु।।६३।।

सिंह, मेष, इन दो राशियों में यदि किसी एक में सूर्य और दूसरे में चन्द्रमा हो तो —सूर्य और चन्द्रमा की क्रान्ति की समता होती है (जो क्रान्तिसाम्य दोष कहलाता है।) एवं वृष, मकर तथा तुला कुम्भ, और कन्या मीन, और कर्क वृश्चिक, एवं धनु मिथुन इन दो दो राशियों में भी सूर्य चन्द्र के रहने पर परस्पर क्रान्ति साम्य दोष होता है। जो सब मंगल कार्य में अशुभ होता है।।६३।।

(१०) दग्ध तिथि—

चापान्त्यगे गोघटगे पतंगे कर्काजगे स्त्रीमिथुने स्थिते च।
सिंहालिगे नक्रघटे समाः स्युस्तिथ्यो द्वितीयाप्रमुखाश्च दग्धाः।।६४।।

सूर्य यदि धनु या मीन में हो तो द्वितीया, वृष, कुम्भ में हो तो चतुर्थी, कर्क मेष में हो तो षष्ठी, मिथुन कन्या में हो तो अष्टमी, सिंह वृश्चिक में हो तो दशमी और मकर या तुला में हो तो द्वादशी तिथि दग्ध होती है। यह भी विवाहादि शुभ कार्यों में वर्जित है ।।६४।।

विवाह में विहित लग्न नवमांश—

मृतिभवनांशो यदि च विलग्ने
तदधिपतिर्वा न शुभकरः स्यात्।
व्ययभवनं वा भवति तदंश-
स्तदधिपतिर्वा कलहकरः यिस्त्।।६५।।

वर और कन्या के जन्मराशि लग्न से अष्टम राशि लग्न या नवमांश में हो तो शुभ नहीं होता है। एवं जन्म—राशि लग्न से द्वादश राशि भी लग्न और नवमांश में कलहकारक होता है। इसलिये लग्न स्थिर करने के समय इसका पूर्ण ध्यान रखना चाहिये।

विवाह में शुभग्रह की राशि और अपनी जन्म राशि या लग्न से उपचय (३, ६, १० ११) कोई भी राशि लग्न हो तो विहित है।।६५।।

विवाह लग्न में विहित नवमांश—

कार्मुक-तौलिक-कन्या-युग्मलवे झषगे वा।
यर्हि भवेदुपयामस्तर्हि सती खलु कन्या।।६६।।

धनु, तुला, कन्या, मिथुन और मीन के नवमांश में विवाह हो तो कन्या सती होती हैं।।६६।।

विशेष—

अन्त्यनवांशे न च परिणे या काचन वर्गोत्तममिहहित्वा।
नो चरलग्ने चरलवयोगं तौलिमृगस्थे शशभृति कुर्यात्।।६७।।

इतना ध्यान रहे कि वर्गोत्तम नवमांश को छोड़कर अन्तिम नवमांश में विवाह नहीं करना चाहिये। और चरलग्न में चरनवमांश नहीं रखना चाहिये।।६७।।

अथ विवाह मुहूर्त- (नाह्निदत्त)—

"रेवत्युत्तररोहिणीमृगमधामूलानुराधाकर-
स्वातीषु प्रमदातुलामिथुनके लग्ने विवाहः शुभः।
मासाः फाल्गुनमाघमार्गशुचयो ज्येष्ठस्तथा माधवः
शस्ताः सौम्यदिनं तथैव तिथयो रिक्ताकु हूवर्जिताः ।।६८।।

रेवती तीनों उत्तरा रोहिणी मृगशिरा मधा मूल अनुराधा हस्त स्वाती इन नक्षत्रों में, कन्या तुला मिथुन लग्न में, फाल्गुन माघ मार्ग (अग्रहण) आषाढ़ ज्येष्ठ इन मासों में (शनि मंगल छोड़कर) और शुभ दिन में तथा रिक्ता तिथि और अमावस्या को छोड़कर और तिथियों में विवाह शुभ है।।६८।।

विशेष

मिथुनकुम्भमृगालिवृषाजगे मिथुनगेऽपि रवौ त्रिलवे शुचेः।
अलिमृगाजगते करपीडनं भवति कार्तिकपौषमधुष्वपि।।६९।।

मिथुन के सूर्य (आषाढ़) में, कुम्भ के सूर्य (फाल्गुन) में, मकर के सूर्य (माघ) में, वृश्चिक के सूर्य (अग्रहण) में, वृष के सूर्य (ज्येष्ठ) में, मेष के सूर्य (वैशाख) में विवाह शुभ है। विशेष यह है कि मिथुन के सूर्य रहने पर भी आषाढ़ के त्रिलव (अर्थात् केवल आषाढ़ शुक्ल १ से १० दशमी पर्यन्त) विवाह शुभ है, हरिशयन में विवाह वर्जित है। तथा वृश्चिक, मकर, मेष वा कुम्भ के सूर्य रहे तो कार्तिक पौष और चैत्र में भी विवाह शुभ है।।६९।।

विवाह में विहित—

केन्द्रे कोणे द्वितीये च तृतीये च शुभग्रहाः।
पापास्त्रिषष्ठलाभेषु स्थिताः श्रेष्ठफलप्रदाः।।७०।।

विवाह लग्न से १।२।३।४।५।७।९।१० इन स्थानों में शुभग्रह तथा (३।६।११) इन स्थानों में पापग्रह शुभ फलदायक होते हैं।।७०।।

विवाह में वर्जित—

जन्ममासर्क्षवारेषु पित्रोः श्राद्धतिथौ तथा।
ज्येष्ठापत्यस्य च ज्येष्ठे विवाहं परिवर्जयेत्।।७१।।

जन्ममास, जन्म नक्षत्र, जन्म दिन में तथा माता पिता के मरण तिथि में तथा ज्येष्ठ मास में ज्येष्ठ सन्तान का विवाह शुभ नहीं है ।।७१।।

ज्येष्ठमासो वरो ज्येष्ठस्तथा ज्येष्ठा च कन्यका।
त्रिज्येष्ठं न शुभं प्रोक्तं मध्यं ज्येष्ठद्वयं स्मृतम्।।७२।।

ज्येष्ठमास, ज्येष्ठ वर, ज्येष्ठ कन्या, ये तीन ज्येष्ठ विवाह में शुभ नहीं है। दो ज्येष्ठ मध्यम है, अर्थात् एक ज्येष्ठ शुभ है ।।७२।।

विवाह लग्न में त्याज्य—

लग्ने व्यये शनिस्त्याज्यः षष्ठे शुक्रेन्दुलग्नपाः।
रन्ध्रे शन्यादयः पञ्च सर्वेऽस्ते च गुरुं बिना।।७३।।

लग्न और द्वादश में शनि, षष्ठ में शुक्र चन्द्र लग्नेश, अष्टम में शनि, रवि, चन्द्र, भौम, बुध, और सप्तम में बृहस्पति को छोड़कर सब ग्रह त्याज्य हैं ।।७३।।

यामार्धं च व्यतीपातं भद्रां वैधृतिकं तथा।
वर्जयेत् सर्वकार्येषु रविदग्धं दिनत्रयम्।।७४।।

अर्धप्रहरा, व्यतीपात योग, भद्रा करण, वैधृति योग और सूर्य के संक्रान्ति से दूषित ६ दिन (अर्थात् मासान्त संक्रान्ति मासादि) सब शुभ कार्य में त्याग करना चाहिये ।।७४।।

क्षीणेऽस्ते च गुरौ शुक्रे तथा न्यूनाधिमासके।
गण्डान्ते च विवाहादि शुभं कर्म विवर्जयेत्।।७५।।

गुरु शुक्र क्षीण हो अथवा अस्त हो तथा क्षयमास और मलमास में तथा गण्डान्त में विवाह उपनयन मुण्डन आदि शुभ कार्य न करे।।७५।।

अथा गण्डान्तलक्षण—

ज्येष्ठापौष्णभसार्पभान्त्यघटिकायुग्मं च मूलाश्विनी-
पित्र्यादौ घटिकाद्वयं निगदितं तद्भस्य गण्डान्तकम्।
कर्काल्यण्डजभान्ततोऽर्थघटिका सिंहाश्वमेषादिगा
पूर्णान्ते घटिकात्मकं त्वशुभदं नन्दातिथेश्चादिमम्।।७६।।

ज्येष्ठा रेवती आश्लेषा इन नक्षत्रों के अन्त्य की दो घड़ी और मूल, अश्विनी, मघा इनमें आदि की दो २ घड़ी नक्षत्र गण्डान्त है, और कर्क, वृश्चिक मीन इनके अन्त्य की आधी घड़ी, सिंह, धनु मेष के आदि की आधी घड़ी राशि या लग्न गण्डान्त है। तथा पूर्णातिथि के अन्त्य की एक घड़ी नन्दा तिथि के आदि की १ घड़ी गण्डान्त होता है।।७६।।

लग्न भंगकारक योग

व्यये शनिः खेऽवनिजस्तृतीये
भृगुस्तनौ चन्द्रखला स शस्ताः।
लग्नेट् कविग्लौश्च रिपौ मृतौ ग्लौ-
र्लग्नेट् शुभाराश्च मदे च सर्वे।।७७।।

विहित लग्न में भी लग्न से व्ययस्थान में शनि, १० वें में मंगल, तृतीय में शुक्र, लग्न में चन्द्रमा और पापग्रह, षष्ठ स्थान में लग्नेश शुकर और चद्रमा, अष्टम स्थान में लग्नेश शुभग्रह और मंगल तथा सप्तम में सब (पाप या शुभ कोई भी) ग्रह अशुभ (लग्न भङ्ग कारक) होते हैं।।७७।।

लग्न में ग्रहों के प्रशस्त (रेखाप्रद) स्थान—

त्र्याय्याष्टषट्सु रविकेतुतमोऽर्कपुत्रा-
स्त्र्यायारिगः क्षितिसुतो द्विगुणायगोऽब्जः।
सप्तव्ययाष्टरहितौ ज्ञगुरू सितोऽष्ट-
त्रिद्यूनषड्व्ययगृहान् परिहृत्य शस्तः।।७८।।

रवि, केतु, राहु और शनि ये- ३, ११, ८, ६, स्थान में, मंगल ने ११ में, चन्द्रमा २, ३, ११ में बुध और गुरु ७, ८, १२ को छोड़कर शेष स्थानों में शुक्र, ८, ३, ७, ६, १२ को छोड़कर अन्य स्थानों में प्रशस्त होते हैं।।७८।।

प्रशस्त स्थान स्थित ग्रहों का विशोपक बल

द्वौ द्वौ ज्ञभृग्वोः पञ्चेन्दौ रवौ सार्धत्रयो गुरौ।
रामा भन्दागुकेत्वारे सार्धैकैकं विंशोपकाः।।७९।।

उपरोक्त प्रशस्त स्थान में बुध हो तो २, शुक्र हो तो २, चन्द्र हो तो ५, रवि हो तो ३।।, गुरु हो तो ३ तथा शनि, केतु और मंगल हो तो प्रत्येक को १।।, १।। विंशोपक बल होता है।।७९।।

इति विवाहप्रकरण।



अथ वधूप्रवेशप्रकरण

वधूप्रवेश मुहूर्त

समाद्रिपञ्चाङ्कदिने विवाहाद्वधूप्रवेशोऽष्टिदिनान्तराले।
शुभः परस्ताद्विषमाब्दमासदिनेऽक्षवर्षात्परतो यथेष्टम्।।१।।

*विवाह दिन से १६ दिन के भीतर पञ्चम सप्तम नवम तथा सम (६।८।१०।१२।१४।।१६ वें) दिन में वधूप्रवेश शुभ है १६ दिन के बाद विषममास, विषमवर्ष, विषम (१।३ इत्यादि) दिन में शुभ है ** और ५ वर्ष के बाद जब इच्छा हो शुभ मुहूर्त में वधूप्रवेश शुभ है।।१।।

नक्षत्रादि [illegible]

ध्रुवक्षिप्रमृदुश्रोत्रवसुमूलमघा[illegible] ।
वधूप्रवेशः सन् नेष्टो रिक्ता[illegible] बुधे परैः।।२।।

---

* नूतनविवाहिता कन्या के प्रथम स्वामी के गृह में प्रवेश [illegible] वधूप्रवेश कहलाता है।

** १६ दिन के बाद १मास के भीतर विषम दिन में, [illegible] के बाद एक वर्ष के भीतर विषम मास में तथा १ वर्ष के बाद विषम वर्ष में वधूप्रवेश शुभ है।

ध्रुव संज्ञक, क्षिप्र संज्ञक, मृदु संज्ञक, श्रवण, धनिष्टा, मूल, मघा रेवती इन नक्षत्रों में वधूप्रवेश शुभ है और रिक्ता तिथि रविवार मंगलवार में अशुभ है। कितने आचार्य के मत से बुध में भी वधूप्रवेश अशुभ है।।२।।

वधूप्रवेश में सन्मुख शुक्र का दोष नही—

लल्लाचार्य—

स्वभवनपुरप्रवेशे देशानां विप्लवे तथोद्वाहे।
नववध्वा गृहगमने प्रतिशुक्रविचारणा नास्ति।।३।।

अपने ग्राम या गृह में प्रवेश के समय, देशों में उपद्रव होनेपर तथा नवविवाहित वधू के परिगृह में प्रवेश सन्मुख शुक्र का दोष नहीं होता है।।३।।

भास्करः—

न शुक्रदोषो न सुरेज्यदोषो ताराबलं चन्द्रबलं न योज्यम्।
उद्वाहिताया नवकन्यकाया दीपोत्सवे शोभनमङ्गलानि।।४।।

अर्थ स्पष्ट है।।

कालविवेक—

रात्रौ विवाहभे शस्तः सन्मुहूर्ते स्थिरोदये।
वधूप्रवेशो नैवात्र प्रतिशुक्रभयं भवेत्।।५।।

रात्रि में, विवाहविहित नक्षत्रों में, शुभ मुहूर्त में वधूप्रवेश प्रशस्त है। इसमें सन्मुख शुक्र का दोष नहीं होता है।।५।।

नववधू पाककर्म—

मृगोत्तरातिष्यकृशानुसार्पे श्रुतित्रये ब्रह्म-द्विदैवधिष्ण्ये।
शुभे तिथौ व्याररवौ प्रकुर्यान् नवा वधूर्नूतनपाककर्म।।६।।

मृगशिरा, तीनों उत्तरा, पुष्य, कृत्तिका, आश्लेषा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, रोहिणी, विशाखा इन नक्षत्रों में शुभ तिथि मे और रवि मङ्गल से भिन्न वार में वधू प्रथम पाक कर्म आरम्भ करे।।६।।

इति वधूप्रवेश प्रकरण।



अथ द्विरागमन प्रकरण

उद्वाहसमये बाला व्रजेद्भर्तृगृहं प्रति।
पुनस्तातगृहाद्यात्रा तद्द्विरागमनं स्मृतम्।।१।।

विवाह समय में वधू अपने पति के घर में जाती है वह वधूप्रवेश कहलाता है। पुनः पिता के घर में आकर पतिगृह की यात्रा को द्विरागमन कहते हैं।।१।।

विहित नक्षत्रादि—

पूपापुष्यपुनर्वसूत्तरमृगा मैत्राश्वहस्तत्रयी
रोहिण्यः श्रवणो द्विरागमविधौ मूलं धनिष्ठा तथा।
कुम्भाजालिरविश्च वर्षमसमं त्यक्त्वा कुजार्कीं च गो-
कन्यामन्मथमीनतौलिमकरा लग्नानि यात्रातिथिः।।२।।

रेवती, पुष्य, पुनर्वसु, तीनों उत्तरा, मृगशिरा, अनुराधा, अश्विनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, रोहिणी, श्रवण, मूल, धनिष्ठा ये नक्षत्र, कुम्भ, मेष वृश्चिक में सूर्य हो तथा विवाह से विषम (१।३ इत्यादि) वर्ष में शनि, मंगल छोड़कर अन्य वार, वृष कन्या मिथुन तुला मकर ये लग्न और यात्रोक्त तिथि ये द्विरागमन में शुभ हैं।।२।।

द्विरागमन में त्याज्य—

अस्तंगते भृगोः पुत्रे तथा सम्मुखमागते।
नष्टे जीवे निरंशे वा नैव संचालयेद्वधूम्।।३।।

शुक्र अस्त हो अथवा संमुख हो तथा वृहस्पति अंशरहित अथवा अस्त हो तो द्विरागमन न करे।।३।।

गर्भिण्या बालकेनापि नववध्वा द्विरागमे।
पदमेकं न गन्तव्यं शुक्रे सम्मुखदक्षिणे।।४।।

शुक्र यदि सम्मुख वा दक्षिण हो तो गर्भिणी या बालक के सहित अथवा नवीना का द्विरागमन न करे।।४।।

विशेष—

काश्यपेषु वशिष्ठेषु चात्रिभृग्वङ्गिरस्सु च।
भारद्वाजेषु वात्सेषु प्रतिशुक्रो न दुष्यति।।५।।

काश्यप, वशिष्ठ, अत्रि, भृगु, अंगिरा, भारद्वाज, वत्स इनके गोत्रों में सम्मुख शुक्र का दोष नहीं है।।५।।

रेवत्यादि मृगान्तञ्च यावत्तिष्ठति चन्द्रमाः।
तावच्छुक्रो भवेदन्धः सम्मुखे दक्षिणे शुभः।।६।।

रेवती से मृगशिरा पर्य्यन्त जब तक चन्द्रमा रहते है तब तक शुक्र अन्ध रहता है। इनमें सम्मुख दक्षिण शुक्र का दोष नहीं होता।।६।।

अस्तेऽथवा शिशुत्वे वा वालत्वे गुरुशुक्रयोः।
शुभो द्विरागमो यावद् वर्षमेकं विवाहतः।।७।।

गुरु शुक्र के अस्त शिशुत्व, वृद्धत्व में भी विवाह से १ वर्ष के भीतर द्विरागमन शुभ है।।७।।

पुनः विशेष—

सम्मुखे दक्षिणे राहौ शुभो वध्वा द्विरागमः।
द्विरागमगता कन्या चागता पितृवेश्मनि।।८।।
बालिका युवती वापि ततो भर्तृगृहं प्रति।
पदमेकं न गच्छेत्सा राहौ सम्मुखदक्षिणे।।९।।

सम्मुख दक्षिण राहु में द्विरागमन शुभ है। द्विरागमन में पति के भवन जाकर फिर पिता के गृह में आवे तो बाला रहे वा युवती सम्मुख दक्षिण राहु में स्वामी के भवन के प्रति एक पद भी न चले।।८-९।।

इति द्विरागमन प्रकरण।

प्रथम रजोदर्शन फल

आद्यं रजः शुभं माघमार्गराधेषफाल्गुने।
ज्येष्ठश्रावणयोः शुक्ले सद्वारे सत्तनौ दिवा।।१।।
श्रुतित्रयमृदुक्षिप्रध्रुवस्वातौ सिताम्बरे।
मध्यं च मूलाधितिभे पितृमिश्रे परेष्वसत्।।२।।

माघ, मार्गशीर्ष, वैशाख, आश्विन, फाल्गुन, ज्येष्ठ, श्रावण मास, शुक्ल पक्ष शुभ ग्रह के दिन, शुभ लग्न, दिन के समय, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, मृदु क्षिप्र ध्रुव संज्ञक स्वाती नक्षत्र, और उजला वस्त्र इन सबों में स्त्रियोंका प्रथम

मासिक धर्म होना शुभ है। तथा मूल पुनर्वसु मघा मिश्रसंज्ञक इन नक्षत्रों में मध्यम और शेष मास वारादि में अशुभ है।।१-२।।

गर्भाधान मुहूर्त—

गण्डान्तं त्रिविधं त्यजेत्रिधनजन्मर्क्षे च मूलान्तकं
दास्त्रं पौष्णमथोपरागदिवसं पातं तथा वैधृतिम्।
पित्रोः श्राद्धदिनं दिवा च परिघाद्यर्धं स्वपत्नीगमे-
भान्युत्पातहतानि मृत्युभवनं जन्मर्क्षतः पापभम्।।३।।

तीनों प्रकार के गण्डान्त, सप्तम तारा, जन्म तारा, मूल भरणी अश्विनी रेवती और ग्रहण दिन, पात योग, वैधृति योग, माता पिता के श्राद्ध दिन तथा दिवस, परिघ योग का पूर्वार्ध, उत्पात, हस्त नक्षत्र, जन्म राशि से अष्टम राशि लग्न में हो और पापग्रह की राशि इन सबों को अपनी स्त्री के समागम में त्याग करना चाहिये।।३।।

तथा च—

भद्राष्ठी पर्वरिक्ताश्च सन्ध्याभौमार्कार्किनाद्य रात्रीश्चतस्त्रः।
गर्भाधानं त्र्युत्तरेन्द्वर्कमैत्रब्राह्मस्वातीविष्णुवस्वम्बुपे सत्।।४।।

भद्रा, षष्ठा, पर्वदिन, रिक्ता तिथि, सन्ध्या-समय, मंगल, रवि शनिवार, रजो दर्शन से चार रात्रि इन सबों को छोड़कर, तीनों उत्तरा मृगशिरा, हस्त, अनुराधा, रोहिणी, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा इन नक्षत्रों में गर्भाधान शुभ है।।४।।

गण्डान्त में जन्मनिषेध—

नक्षत्रराशिगण्डान्ते यदि जन्म भवेत्तदा।
शान्तिः कार्या प्रयत्नेन तत्पित्रा विधिपूर्विका।।५।।

यदि नक्षत्र राशि गण्डान्त में किसी का जन्म हो तो उसका पिता अवश्य दोष-निवृत्ति के लिये विधिपूर्वक शान्ति करे।।५।।

सीमान्त पुंसवन मुहूर्त—

जीवार्कारदिने मृगेज्यनिरृतिभोत्रादितिब्रध्नभै
रिक्तावार्करसाष्टवर्ज्यतिथिभिर्षष्ठेऽष्टमे मासि वा।

सीमन्तांऽथ तृतीयमासि शुभदैः केन्द्रत्रिकोणे खलै-
र्लाभारित्रिपु पुंसवं शुभयुते लग्ने च पुंभांशके।।६।।

वृहस्पति, रवि या मंगल के दिन में मृगशिरा, पुष्य, मूल, श्रवण, पुनर्वसु, हस्त, इन नक्षत्रों में रिक्ता अमावस्या द्वादशी षष्ठी अष्टमी इन तिथियों को छोड़कर और तिथियों में, शुभग्रह केन्द्र त्रिकोण में हों पापग्रह ३, ६, ११ वें स्थान में हों, शुभ तथा पुरुष राशिका नवांश लग्न में हो तो ६ वें ८ वें मास में सीमान्त तथा तीसरे ३ मास में पुंसवन कर्म शुभ है।।६।।

अथ जातकर्म—

पर्वरिक्तोनसद्वारे मृदुक्षिप्रचरध्रुवे ।
जन्मन्येकादशे वाऽह्नि द्वादशे जातकर्म सत्।।७।।

पर्व, रिक्ता रहित तिथि तथा शुभ दिन मे मृदु संज्ञक क्षिप्र चर ध्रुवसंज्ञक नक्षत्रों में जन्म दिन में तथा ११ वें अथवा १२ वें दिन में जातकर्म शुभ है।।७।।

शिशुविलोकन—

तृतीये मासि तुर्ये वा यात्रोक्तेऽह्न्यकचन्द्रयोः।
वारे च कुलरीत्या वा शुभं शिशुविलोकनम्।।८।।

तृतीय वा चतुर्थ महीने में, यात्रा में कथित मुहूर्तों में वा रवि चन्द्र वार में अपने कुलानुसार बालक को देखना शुभ है।।८।।

दुग्धदान—

रिक्तां भौमं परित्यज्य विर्ष्टिं पातं सवैधृतिम्।
मृदुध्रुवक्षिप्रभेषु स्तन्यपानं हितं शिशोः।।९।।

रिक्ता तिथि, मङ्गलवार भद्रा, पात वैधृति योग इनको छोड़कर बाकी दिन और तिथि में तथा मृदु ध्रुव क्षिप्र संज्ञक नक्षत्रों में बालक को स्तनपान कराना शुभ है।।९।।

सूती स्नान—

व्यर्कषड्वसुरिक्तेह्नि कुजार्केज्ये ध्रुवे करे।
विचित्रमृदुवाताश्वे सूतिस्नानं शुभं स्मृतम्।।१०।।

१२, ६, ८, रिक्ता इनसे भिन्न तिथियों में, मंगल, रवि, गुरुवार में, चित्रा को छोड़कर मृदु संज्ञक (मृगशिरा, रेवती, अनुराधा) स्वाती अश्विनी इन नक्षत्रों में सूती स्नान शुभ है।।१०।।

अथ नामकरण-(नारद-मनू)

सूतकान्ते नामकर्म विधेयं स्वकुलोचित्तम्।
पुण्ये तिथौ मुहुर्ते वा नक्षत्रे वा गुणान्विते।।११।।

जन्म सूतक के अन्त में (अर्थात् ब्राह्मण का ११ वें दिन, क्षत्रिय का १३ वें दिन, वैश्य का १६ वें दिन, शूद्र का १३ वें दिन में) अपने कुलानुसार बालक का नाम धरे। वा पुण्यतिथि, पुण्य मुहूर्त वा पुण्य नक्षत्र में नामकरण शुभ है।।११।।

दन्तोत्पत्तिकथन—

जन्मतः पञ्चमासेषु दन्तोत्पत्तिर्न शोभना।
शुभा षष्ठादिके ज्ञेया न सदन्तजनिः शुभा।।१२।।

जन्म से पाँच महीने तक दाँत निकलना शुभ नहीं है और छठे आदि महीनों में शुभ है तथा दन्त सहित बालक का जन्म शुभ नहीं है।।१२।।

दोलारोहण-निष्क्रमण मुहूर्त—

जन्मार्कभूपधृतिदिङ्मितवासरे स्या-
द्वारे शुभे मृदुलघुध्रु वभैः शिशूनाम्।
दोलाधिरूढिरथ निष्क्रमणं चतुर्थ-
मासेगमोक्तसमयेऽर्कमितेऽह्नि वा स्यात्।।१३।।

जन्म से १०, १२, १६, १८ वें दिन में शुभग्रह के वार में, मृदु लघु ध्रुव संज्ञक नक्षत्रों में बालक को दोला पर चढ़ाना शुभ है। तथा चौथे महीने में वा जन्म से १२ वें दिन में यात्रोक्त मुहूर्त में बालक को प्रथम घर से बाहर ले जाना शुभ है।।१३।।

जन्मनक्षत्र में वर्ज्य—

निष्कासनं प्राशनकर्णवेधौ क्षौरं विवादं गमनं च युद्धम्।
श्राद्धं गृहं वा कृपिभेषजौ च न जन्मभे शस्तमुशन्ति सन्तः।।१४।।

निष्कासन, अन्नप्राशन, कर्णवेध और विवाद (मोकदमा कलह आदि यात्रा, युद्ध, खेती औषधि ये जन्म नक्षत्र में नहीं करना चाहिये।।१४।।

अथ अन्नप्राशन—

पूर्वार्द्राभरणी भुजङ्गवरुणांस्त्यक्त्वा कुजार्की तथा
नन्दां पर्वं च सप्तमीमपि तथा रिक्तामपि द्वादशीम्।
स्यात् षष्ठाष्टममासि चाद्यमशनं स्त्रीणां पुनः पञ्चमे
गोकन्याझषमन्मयेषु धवले पक्षे च योगे शुभे।।१५।।

तीनों पूर्वा, आर्दा, भरणी, आ लेषा, शतभिषा नक्षत्र तथा मंगल शनिवार और नन्दा पर्व सप्तमी रिक्ता द्वादशी तिथि इन सबों को छोड़ कर अवशिष्ट नक्षत्र तिथिवार में बालक को ६, ८ वें मास में, कन्या योग में प्रथम अन्न भोजन कराना शुभ है।।१५।।

कर्णवेध—

हित्वैतांश्चैत्रपौषावमहिरिशयनं जन्ममासं च रिक्तां
युग्माब्दं जन्मतारामृतुमुनिवसुभिः सम्मिते मास्यथो वा।
जन्माहात् सूर्यभूपैः परिमितदिवसे ज्ञेज्यशुक्रेन्दुवारे-
ऽथोजाब्दे विष्णुयुग्मादितिमृदुलघुभैः कर्णवेधः प्रशस्तः।।१६।।

चैत्र पौष तिथिज्ञय हरिशयन, जन्ममास रिक्तातिथि समवर्ष जन्म तारा इन सबों को छोड़, बाकी मास और तिथि में ६, ७, ८ वें वार में विषमवर्ष में श्रवण, घनिष्ठा, पुनर्वसु, मृदु लघु संज्ञक नक्षत्रों में कर्णवेध शुभ है।।१६।।

अथ चूड़ाकरण (मुण्डन) मुहूर्त—

शोक्रोपेतैर्विमैत्रैश्च मृदुक्षिप्रचरैस्तथा।
कर्णवेधोक्तवर्षादौ चौलं लग्ने शुभे शुभम्।।१७।।

कर्णवेधोक्त वर्ष मास दिन में तथा अनुराधा को छोड़कर मृदु क्षिप्र चरसंज्ञक तथा ज्येष्ठा नक्षत्र में, तथा शुभ लग्न में चूड़ाकरण (मुण्डन) शुभ है।।१७।।

विशेष—

ऋतुमत्याः सूतिकायाः सूनोश्चौलादि नाचरेत्।
ज्येष्ठापत्यस्य न ज्येष्ठे कैश्चिन्मार्गेऽपि नेष्यते।।१८।।

ऋतुमती (मास धर्मसहित) और प्रसूतिका के बालक का मुण्डन, उपनयन आदि न कराये। तथा ज्येष्ठ सन्तान का ज्येष्ठ में और किसी के मत से अगहन में भी चूड़ाकरण आदि न करावे।।१८।।

पञ्चमासाधिके मातुर्गर्भे चौलं शिशोर्न सत्।
पञ्चवर्षाधिकस्येष्टं गर्भिण्यामपि मातरि।।१९।।

माता के गर्भ को पाँच मास से अधिक हुआ हो तो उस बालक का मुण्डन शुभ नहीं है। अगर ५ वर्ष से अधिक हो तो माता के गर्भ रहने पर भी मुण्डन शुभ होता है।।१९।।

सामान्यक्षौरकर्म—

त्यक्त्वा रिक्तार्कभौमार्कीन् हितं क्षौरं च चौलभे।
नैव क्षौरक्रिया कार्या स्नाताभ्यक्तकृताशनैः।।२०।।

रिक्तातिथि रवि मंगल शनिवार को छोड़ कर बाकी तिथि और दिन में तथा चूड़ाकरणोक्त नक्षत्र में और क्षौर कराना शुभ है तथा स्नान करके, तैल लगा करके और भोजन करके क्षौर क्रिया न करावे।।२०।।

विशेष—

नृपविप्राज्ञया यज्ञे मरणे बन्धमोक्षणे।
प्रयागेऽखिलवारर्क्षतिथिषु क्षौरमिष्टदम्।।२१।।

राजा तथा ब्राह्मण की आज्ञा से, यज्ञ में , मरणाशौच में, कैद से छूटने पर और प्रयाग में सब तिथि वार नक्षत्र में क्षौर शुभ है।।२१।।

निषिद्धवारादि में क्षौर कराने का मन्त्र—श्रीपतिः

केशवमानर्तपुरं पाटलिपुत्रं पुरीमहीच्छत्राम्।
दितिमदितिं च स्मरतां क्षौरविधौ भवति कल्याणम्।।२२।।

अथ उपनयनवर्षशुद्धि—

विप्राणां च शुभं व्रतं निगदितं वर्षेऽष्टमे पञ्चमे
शुद्धेऽर्के च गुरौ तथा क्षितिभुजां षष्ठेऽथवैकादशे।
वैश्यानां च तथाष्टमेऽतिशुभदं वा द्वादशे वत्सरे
कालेऽथ द्विगुणे गते निगदितं गौणं तदाहुर्बुधाः।।२३।।

जन्म से वा गर्भ से पञ्चम वा अष्टम वर्ष में ब्राह्मणों का तथा ६ठें या ११वें वर्ष में क्षत्रियों का और ८वें वा १२वें वर्ष में वैश्यों का उपनयन शुभ है। अथवा उपरोक्त काल के दूना समय तक गुरु शुद्धि से उपनयन शुभ है, किन्तु इसको पण्डितो ने गौणपक्ष कहा है।।२३।।

उपनयन मुहूर्त—

जलभे चाश्वमे हस्तत्रये च प्रवणत्रये।
ज्येष्ठाभाग्यमृगे पुष्ये रेवत्यां चोत्तरायणे।।२५।।
द्वितीयायां तृतीयायां पञ्चभ्यां दशमीत्रये।
रवौ सोमे गुरौ शुक्रे बुधे वारे सिते दले।।२६।।
कन्यायुग्मधनुः सिंहवृषलग्नेषु सद्व्रतम्।
सर्वारम्भोक्तलग्नादिशुद्धिमैत्रापि चिन्तयेत्।।२७।।

पूर्वाषाढ़, अश्विनी, हस्त, पित्रा, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतमिषा, ज्येष्ठा, पूर्वाफाल्गुनी, मृगशिरा, पुष्य, इन नक्षत्रों में, उत्तरायण में इन वारों में, शुक्लपक्ष में, कन्या मिथुन धनु सिंह वृष इन लग्नों में उपनयन शुभ है। सर्वारिम्भ में जो लग्न शुद्धि कही गयी है वह उपनयन में भी विचारे ।।२५-२७।।

विशेष—

जन्मर्क्षमासलग्नादौ व्रते विद्याधिको व्रती।
आद्यगर्भेऽपि विप्राणां क्षत्रादीनामनादिमे।।२८।।

जन्मनक्षत्र, जन्ममास, जन्मलग्न आदि में ब्राह्मण के प्रथम सन्तान का और क्षत्रिय वैश्य के द्वितीय आदि बालक का उपनयन होने से विद्वान होता है।।२८।।

अनध्याय—

पौषे माघे शुचौ ज्येष्ठे रुद्रार्कदिग्द्विसम्मिताः।
तिथ्यः क्रमादनध्यायः व्रतबन्धे न ते शुभाः।।२९।।

पौष की ११, माघ की १२, आषाढ़ की १०, ज्येष्ठ की २ ये तिथियां व्रतबन्ध में अनध्याय हैं।।२९।।

निषेध—

कृष्णे प्रदोषेऽनध्याये शनौ निश्यपराह्नके।
प्राक्सन्ध्यागर्जिते नेष्टो व्रतबन्धो गलग्रहे।।३०।।

कृष्णपक्ष में, अनध्याय में, शनिवार में, रात्रि में, अपराह्न में प्रातःकाल गर्जना हो तथा गलग्रह में उपनयन अशुभ है।।३०।।

प्रदोषलक्षण—

अर्क-तर्क-त्रितिथिषु प्रदोषः स्यात्तदग्रिमैः।
रात्र्यर्धसार्धप्रहरयाममध्यस्थितैः क्रमात्।।३१।।

द्वादशी में अस्त के बाद मध्य रात्रि के भीतर त्रयोदशी हो तथा षष्ठी में सायंकाल से डेढ़ प्रहर रात्रि के भीतर सप्तमी हो, तृतीया में १ प्रहर रात्रि के मध्य चतुर्थी का प्रवेश हो तो प्रदोष होता है।।३१।।

गलग्रह तिथि—

त्रयोदश्यादिचत्वारि सप्तम्यादि दिनत्रयम्।
चतुर्थी चैकतः प्रोक्ताः अष्टावेते गलग्रहा।।३२।।

१३, १४, १५, १, ४, ७, ८, ९ ये तिथियां गलग्रह हैं।।३२।।

अथ समावर्तन—

केशान्तं षोडशे वर्षे-चौलोक्तदिवसे शुभम्।
व्रतोक्तदिवसादौ हि समावर्तनमिष्यते।।३३।।

१६वें वर्ष में चूड़ाकरणोक्त मुहूर्त में केशान्त कर्म, और उपनयनोक्त मुहूर्त में समावर्तन कर्म शुभ है।।३३।।

अथ अक्षरांम्भ मुहूर्त—

पञ्चोमेऽब्दे गणेशादीन् पूजयित्वोत्तरायणे।
लघुश्रोत्रानिलान्त्येशतक्षादितिसमित्रमे ।।३४।।
शिवार्कदिग्द्विषट्पञ्चत्रिसंख्ये च तिथौ दिने।
व्यार्किभौमे चरद्व्यंगे लग्ने सन् स्याल्लिपिग्रहः।।३५।।

पञ्चम वर्ष में उत्तरायण समय में ११, १२, १०, २, ३, ५, ६ इन तिथियों में लघु संज्ञक श्रवण, स्वाती रेवती आर्द्रा चित्रा पुनर्वसु, अनुराधा इन नक्षत्रों में मंगल शनिवार को छोड़कर शेष दिन गणेष, विष्णु, सरस्वती लक्ष्मी इष्ट देव आदि के पूजन करके प्रथम अक्षराम्भ करना शुभ है।।३४-३५।।

वेदारम्भ—

मृगादिपञ्चके हस्तत्रिके विष्णुत्रिकाश्विभे।
मैत्रान्त्यमूलपूर्वासु विद्यारम्भः शुभे दिने।।३६।।

मृगशिरा, आर्द्रा पुनर्वसु पुष्य आश्लेषा, हस्त, चित्रा स्वाती श्रवण धनिष्ठा, शतभिषा, अश्विनी, अनुराधा, मूल, तीनों पूर्वा इन नक्षत्रों में, रवि सोम बुध गुरु शुक्र इन दिनों में विद्यारम्भ शुभ है।।३६।।

स्त्रीवस्त्रादिधारण—

करादिपञ्चकेऽश्विन्यां धनिष्ठायां च पूषणि।
धार्यं ज्ञेऽर्के गुरौ शुक्रे स्त्रीभिर्वस्त्रविभूषणम्।।३७।।

हस्त चित्रा स्वाती विशाखा अनुराधा अश्विनी धनिष्ठा रेवती इन नक्षत्रों में बुध रवि वृहस्पति शुक्र इन दिनों में स्त्री नवीन वस्त्राभूषण धारण करै।।३७।।

पुरुषवस्त्रधारण—

पुंभिः पूषादितिद्वन्द्वे रोहिण्युत्तरभेष्वपि।
गोकन्यायुग्ममीनाख्ये लग्ने धार्यं नवाम्बरम्।।३८।।

पुर्वोक्त नक्षत्र दिन तथा रेवती, पुनर्वसु, पुष्य, रोहिणी, तीनों उत्तरा इन नक्षत्रों में भी, वृष कन्या मिथुन मीन इन लग्नों में पुरुष नवीन वस्त्र धारण करै।।३८।।

स्त्रीकेशबन्धन मुहूर्त—

स्वात्युत्तरश्रवणशङ्करमाश्वमूल-
पुष्यादितीन्दुकरपौष्णशचीशभेषु ।
पक्षे सिते विकुजसौरिदिने सुलग्ने
स्यात्केशबन्धनविधिः शुभदो मृगाक्ष्याः।।३९।।

स्वाती तीनों उत्तरा श्रवण आर्द्रा अश्विनी मूल पुष्य पुनर्वसु मृगशिरा रेवती ज्येष्ठा इन नक्षत्रों में शुक्ल पक्ष में शनि मंगल को छोड़कर और दिन में शुभ लग्न में स्त्रियों का केशबन्धन शुभ है।।३९।।

वस्त्रक्षालन मुहूर्त—

करपञ्चाश्विनीपुष्यवसुभे व्यार्किवित्कुजे।
षष्ठीरिक्तोनतिथ्यां च वस्त्राणां क्षालनं शुभम्।।४०।।

हस्त चित्रा स्वाती विशाखा अनुराधा अश्विनी पुष्य धनिष्ठा इन नक्षत्रों में, शनि बुध मंगल को छोड़कर अन्य वारों में तथा रिक्ता षष्ठी से भिन्न तिथियों में कपड़ा धुलाना शुभ है।।४०।।

दन्तधावन—

रूपरामरसभूतपूर्णिमानागदर्शरविसङ्क्रमे दिने।
श्राद्धयज्ञनियमेषु पण्डितैर्दन्तकाष्ठकरणं न कीर्तितम्।।४१।।

१, ३, ६, १४, १५, ८ अमावस्या इन तिथियों में रवि संक्रान्तदिन में श्राद्ध यज्ञ व्रत में काष्ठ के दँतुवन नहीं करै।।४१।।

औषधभक्षण मुहूर्त—

मृदुमूलचरक्षिप्रे व्यार्किभौमदिने शुभे।
द्व्यङ्गलग्नेष्टमे शुद्धे सत्तिथौ भेषजं शुभम्।।४२।।

मृदुसंज्ञक मूल चर क्षिप्र संज्ञक नक्षत्रों में शनि मंगल छोड़कर और दिन में द्विस्वभाव राशि लग्न हो उसमें शुभ ग्रह हो और शुभ तिथि में औषध खाना शुभ है।।४२।।

रोगविमुक्तस्नान—

व्यन्त्यादितिध्रुवमघानिलसार्पधिष्ण्ये
रिक्ते तिथौ चरतनौ विकवीन्दुवारे।
स्नानं रुजा विरहितस्य जनस्य शस्तं
हीने विधौ खलखगैर्भवकेन्द्रकोणे।।४३।।

रेवती पुनर्वसु ध्रुव संज्ञक मघा स्वाती आश्लेषा इनसे भिन्न नक्षत्रों में रिक्ता तिथियों में चर लग्न में, शुक्र और सोम को छोड़कर और दिनों में चन्द्रमा क्षीणबली हो पाप ग्रह ११ और केन्द्र त्रिकोण में हो, ऐसे लग्न में रोग छूटने पर स्नान शुभ है।४३।।

स्त्रियों के लिये शतभिषा स्नान निषेध—

चन्द्रे शतभिषां प्राप्ते नारी न स्नानमाचरेत्।
भ्रमात् स्नाता तदा पुष्पैः गन्धाद्यैः पूजयेत्पतिम्।।४४।।

चन्द्रमा जिस दिन शतभिषा नक्षत्र में रहे उस दिन स्त्री स्नान न करै। कदाचित् भ्रम स्नान करै तो गन्ध पुष्पादि से पति का पूजन करै तो दोष नाश होता है।।४४।।

इति रजोस्नान।



।।अथ गृहप्रकरण।।

तत्र वास्तुभूमिशुभाशुभ लक्षण—

पूर्वोत्तरप्लवा भूमिः सुप्रसन्ना समापि च।
ईशप्लवा निरुचिाच्छष्टा प्रशस्ता वास्तुकर्मणि।।१।।
दक्षिणापरनीचा भूः सोषरा विषमापि वा।
वृक्षच्छायासमायुक्ता वर्जनीया प्रयत्नतः।।२।।
उक्ताभ्योऽन्यस्वरूपा तु मध्यमा परिकीर्तिता।
तस्यामपि वसेच्छान्त्याऽथवा देवद्विजाज्ञया।।३।।

जो भूमि पूर्व तथा उत्तर दिशा में क्रम से नीची हो अथवा समान हो वा ईशानकोण में नीची हो, देखने में सुन्दर मालूम हो, जहाँ से पहले कोई वास करके चला न गया हो, ऐसी भूमि वास करने में शुभ है। जो भूमि दक्षिण या पश्चिम दिशा में झुकी हो ऊसर हो, या नीचा-ऊँचा गढ़ा इत्यादि वाली हो, देखने से मन प्रसन्न न होता हो, जहाँ वृक्ष की छाया दिन भर रहती हो; ऐसी भूमि में वास नहीं करना चाहिये। और इन दोनों से भिन्न लक्षण वाली भूमि मध्यम है, उसमें भी देवादिकों की पूजा करके ब्राह्मणों की आज्ञा से वास करना शुभ है।।१-३।।

अथ भूमिवर्ण—

श्वेता च ब्राह्मणी भूमिः क्षत्रियारुणविग्रहा।
वैश्या पीततरा ख्याता कृष्णा शूद्राभिधीयते।।४।।

ब्राह्मणी ब्राह्मणस्योक्ता क्षत्रिया क्षत्रियस्य च।
वैश्या वैश्यस्य निर्दिष्टा शूद्रा शूद्रस्य शस्यते।।५।।

श्वेत वर्ण भूमि ब्राह्मणी, लाल वर्ण की भूमि क्षत्रिया, पीले वर्ण की वैश्या (वैश्यजाति), काले वर्ण की भूमि शूद्रा कहलाती है। ब्राह्मणी भूमि ब्राह्मण को, क्षत्रिया क्षत्रिय को, वैश्या वैश्य वर्ण को, शूद्रा भूमि शूद्र को शुभ देने वाली होती है।।४-५।।

अथ शल्योद्धारः—

स्मृत्वेष्टदेवतां प्रश्नवचनस्याद्यमक्षरम्।
गृहीत्वा तु ततः शल्याशल्यं सम्यग्विचारयेत्।।६।।

इष्ट देवता को स्मरण करके प्रश्न के आदि अक्षर से शल्य है या नहीं। है तो कहाँ है इत्यादि विचार करै।।६।।

अकचटतपयश हपया वर्णाः पूर्वादि-मध्येषु।
शल्यकरा इह नान्ये शल्यगृहे निवसतां नाशः।।७।।

यदि प्रश्न के आदि में अ-क-च-ट-त-प-य-श-ह-प-य से वर्ण पड़े तो यथा क्रम से पूर्वादि दिशाओं मे तथा हपय से मध्य में भी शल्य कहना। अन्य।।७।।

शल्यज्ञान—

प्रश्नाद्ये यदि 'अः' प्राच्यां नरशल्यं तदा भवेत्।
सार्द्धहस्तप्रमाणेन तच्च मानुष्यमृत्युकृत्।।८।।
आग्नेयां यदि कः प्रश्ने शशशल्यं करद्वये।
राजदण्डो भवेत्तत्र, भयं नैव निवर्तते।।९।।
याम्यायां यदि चः प्रश्ने कुर्यादाकटिसंस्थितम्।
नरशल्यं गृहेशस्य मरणं चिररोगिता।।१०।।
नैर्ऋत्यां यदि टः प्रश्ने सार्द्धहस्तादधस्तले।
शुनोऽस्थि जायते तच्च बालानां जनयेन्मृतिम्।।११।।

तः प्रश्ने पश्चिमायां तु शिशोः शल्यं प्रजायते।
सार्धहस्तमिते तत्र स्वामिनो नेच्छति ध्रुवम्।।१२।।
वायव्यां यदि पः प्रश्ने तुषाङ्गारश्चतुः करे।
कुर्वन्ति मित्रनाशं च दुःस्वप्नदर्शनन्तथा।।१३।।
उदीच्यां यदि यः प्रश्ने तदा शल्यं कटेरधः।
तद्गृहे निर्धनत्यं च कुबेरसदृशं यदि।।१४।।
ऐशान्यां यदि शः प्रश्ने गोशल्यं सार्धहस्तके।
तद् गोधनानां नाशाय जायते गृहमेधिनः।।१५।।
हपया मध्यकोष्ठे च वक्षोमात्रं भवेदधः।
नृकपालमथो भस्म लौहं तत्कुलनाशकृत्।।१६।।

जिस भूमि में शल्य विचार करना हो उस भूमि को नौ भाग बनावे। प्रश्न के आदि अक्षर में यदि 'अ' हो तो पूर्व भाग में डेढ़ हाथ नीचे मनुष्य का शल्य कहना वह नाशकारक होता है। यदि प्रश्न सें ककार हो तो अग्निकोण में २ हाथ नींचे शशक (खरहा आदि) का शल्य राजदण्डकारक होता है। प्रश्नादि में चकार हो तो दक्षिण भाग में कटि पर्यन्त नीचे मनुष्य का शल्य गृहपति को मारने वाला और रोगी करने वाला होता है। प्रश्नादि में टकार हो तो नैऋत्य कोण में डेढ़ हाथ नीचे कुत्ते का शल्य कहना, वह बालकों का मरण कारक होता है। यदि तकार हो तो पश्चिम में बच्चों का शल्य कहना, वह गृहेश को अशुभकारक होता है। यदि पकार हो तो वायव्य कोण में भूसा अथवा कोयला आदि कहना, वहाँ मित्र का नाशक और दुःस्वप्न देखने में आता है। यदि प्रश्नादि में ह-प-य इनमें कोई हों तो मध्य भाग में मनुष्य के कपाल वा भंस्म अथवा लौह छाती प्रमाण नीचे में कहना, वह कुल नाशकारक होता है। विशेष- प पश्चिम और 'य' वायव्य में कहा गया है और इन दोनों अक्षर से मध्य में भी शल्य समझना।।८-१६।।

अथ शुभाशुभभूमि परीक्षा—

हस्तमात्रं खनेत्खातं जलेनैव प्रपूरयेत्।
पूरिते वास्तुकर्ता च गच्छेत्पदशतं पुनः।।१७।।

समागत्याम्भसां वृद्धिं दृष्ट्वा वृद्धिरनुत्तमा।
समेऽपि स्यान्महावृद्धिः क्षये क्षयमथादिशेत्।।१८।।

जिस भूमि में वास्तु करना हो उस भूमि में एक हाथ लम्बा एक हाथ चौड़ा एक हाथ गहिरा खात बना कर उसको जल से पूरित करके वास्तुकर्ता वहाँ से एक सौ पद चल कर फिर वहाँ आवे। यदि खात में जल बढ़ जाये तो अत्यन्त वृद्धि, यदि जल न बढ़े न घटे तो भी वृद्धि देनेवाली भूमि होती है, यदि जल घट जाय तो हानि करने वाली भूमि समझना।।१७-१८।।

अथ गृहसमीप में शुभ वृक्ष—

यत्र तत्र स्थिता वृक्षा विल्वदाडिमकेसराः।
पनसो नारिकेलश्च शुभं कुर्वन्ति नित्यशः।।१९।।
जम्बीरश्च रसालश्च रम्भाशेफालिकांस्तथा।
निम्बाशोकशिरीषाश्च मल्लिकाद्याः शुभप्रदाः।।२०।।

बेल, दाडिम, केसर, (नागकेसर, मौलसरी), कटहल नारिकेल ये वृक्ष सर्वत्र शुभ होते हैं तथा नीबू, आम, केला, शृगारहार, नीम, अशोक शिरीष तथा मल्लिका ये वृक्ष भी घर के समीप में शुभ है।।१९-२०।।

अथ अशुभ वृक्ष—

मालतीं चैव चम्पां च केतकीं कुन्दमेव च।
मुनिवृक्षं ब्रह्मवृक्षं वर्जयेद् गृहसन्निधौ।।२१।।
तिन्तिलीको वटः प्लक्षः पिप्पलश्च सकोटरः।
शीरी च कण्टकी चैव निषिद्धास्ते महीरुहाः।।२२।।

मालती, चम्पा, केवड़ा, कुन्द, अगस्त्य, ब्रह्मवृक्ष, ये घर के समीप में वर्जित हैं तथा तेतर, बड़, पाकड़, पीपल तथा खोंढ़र वाला वृक्ष और जिसमें दूध होता हो तथा काँटों वाले जितने वृक्ष हैं वे घर के समीप में निषिद्ध हैं।।२१-२२।।

विशेष—

वृक्षप्रासदिनी छाया सच्छन्नं यदि मन्दिरम्।
अचिरेणैव कालेन उद्वासं जायते ध्रुवम्।।२३।।

वृक्ष की छाया यदि सर्वदा (दिन भर) घर पर पड़ती हो तो वहाँ से शीघ्र उजड़ कर दूसरे स्थान में जाना पड़ता है। इसलिये ऐसे स्थान में वास न करै।।२३।।

प्रथमान्तयामवर्ज्यं च द्वित्रिप्रहरसम्भवा।
छायावृक्षध्वजादीनां सदा दुःखप्रदायिनी।।२४।।

प्रथम और चतुर्थ प्रहर को छोड़कर, दूसरे और तीसरे प्रहर में वृक्ष अथवा ध्वजा आदि की छाया मकान पर पड़े तो वह अशुभ होती है।।२४।।

इति गृहप्रकरणम्।



❀ प्रथम गृहकर्म—(वास्तु) ❀

तत्र वास्तु योग्य ग्राम विचार—

यद्भं द्व्यङ्कसुतेशदिङ्मितमसौ ग्रामः शुभो नामभात्
स्वं वर्गं द्विगुणं विधाय परवर्गाढ्यं गजैः शेषितम्।
काकिण्यस्त्वनयोश्च तद्विवरतो यस्याऽधिकः सोऽर्थदो-
थ द्वारं द्विजवैश्यशद्रनृपराशीनां हितं पूर्वतः।।१।।

नाम राशि से ग्राम राशि तक गिनने से २, ९, ५, ११, १० संख्या हो तो ग्राम शुभ होता है। अथ काकिणी विचार— नाम की वर्ग संख्या को दूनी करके उसमें ग्राम को वर्ग संख्या (विवाह प्रकरण के ४३-४४ श्लोकोक्त) अवर्ग से गिन कर जोड़कर ८ का भाग देने से जो शेष बचे वह नाम की काकिणी होती है। दोनों में जिसकी काकिणी अधिक शुभ होती है।* द्वारविचार— ब्राह्मण वर्ण राशिवाले को पूर्व मुख, वैश्य वर्ण राशिवाले को दक्षिण मुख, शूद्र राशिवाले को पश्चिम मुख, क्षत्रिय राशिवाले को उत्तर मुक का द्वार शुभ है।।१।।

वर्ग की शर संख्या—

अ-क-च-ट-त-प-य-श वर्गाः पूर्वादीनां दिशां ज्ञेयाः।
तेषां वसुशररसयुगगिरिशशिगुणबाहवः क्रमादङ्काः।।२।।

* यह रामाचार्य का मत है। नारदादि मुनि के वाक्य से स्पष्ट है कि नाम की काकिणी अधिक होने से शुभ (धनप्रद) होती है।

अवर्ग पूर्व दिशा के, कवर्ग अग्निकोण के, चवर्ग दक्षिण के, टवर्ग नैर्ऋत्य के, तवर्ग पश्चिम के, पवर्ग वायुकोण के, यवर्ग उत्तर के, शवर्ग ईशान कोण के स्वामी हैं। तथा अवर्ग की शर संख्या ८, कवर्ग की ५, चवर्ग की ६, टवर्ग की ४, तवर्ग की ७, पवर्ग की १, यवर्ग की ३, शवर्ग की २ शर संख्या होती है।।२।।

अत गृहदशाज्ञान (अर्थात् दशावश के शुभाशुभ गृह)

अवर्गादि शरैः सङ्ख्यां नामग्रामदिशामयीम्।
नागैर्भागं समाहृत्य शेषं गृहदशा रवेः।।३।।
शुभानां च दशा शस्ता पापानामशुभा स्मृता।
तमोर्कार्किकुजाः पापाः गुरुज्ञेन्दुसिताः शुभाः।।४।।

नाम ग्राम और दिशा के वर्ग की शर संख्याओं का योग करके उसमें ८ का भाग देने से शेष रव्यादि ग्रह की गृहदशा होती है। शुभ ग्रह की दशा शुभ, पाप ग्रह की दशा अशुभ होती है। राहु, शनि, रवि, मंगल ये पाप ग्रह और बुध, बृहस्पति, शुक्र, सोम ये शुभ ग्रह हैं।।३-४।।

उदाहरण— विचार करना है कि जगन्नाथ चौधरी को नेहरा मौजे में दक्षिण दिशा का घर कैसा है— तो यहाँ नाम से चवर्ग की शर संख्या ६, ग्राम की शर संख्या ७, दक्षिण दिशा का चवर्ग है, उसकी शर संख्या ६, सब के योग १९ में ८ का भाग देने से ३ शेष बचा, रवि से गिनने से मंगल की दशा हुई, यद्यपि मंगल पाप ग्रह है परन्नु सामदेवी के लिये मंगल शुभ है, इसलिये शुभ हुआ। इसी प्रकार और भी विचार करना। शून्य (८) शेष में राहु की दशा होती है।।४।।

वास्तुमुहूर्त—

रोहिण्यां श्रवणात्रयेऽदितियुगे हस्तत्रये मूलके
रेवत्युत्तरफल्गुनीन्दुतुरगे मित्रोत्तराषाढयोः।
शस्तं वास्तु कुजार्कवर्जितदिने गोकुम्भसिंहे झषे
कन्यायां मिथुने नभः शुचिसहोराधोर्जके फाल्गुने।।५।।

रोहिणी श्रवण धनिष्ठा शतभिषा पुनर्वसु पुष्प हस्त चित्रा मूल रेवती उत्तरा फाल्गुनी मृगशिरा अश्विनी अनुराधा उत्तराषाढ़ इन नक्षत्रों में, मंगल रवि को छोड़कर और दिनों में वृष मिथुन सिंह कन्या कुम्भ मीन इन लग्नों में श्रावण, आषाढ़ अगहन बैशाख कार्तिक फाल्गुन इन मासों में वास्तु (गृहरम्भ) शुभ होता है।।५।।

वृषवास्तुचक्रोद्धार—

सूर्याक्रान्तात्त्यजेत् सप्त, शुभान्येकादशस्त्वथ।
शेष नन्दर्क्षकं दुष्टमिति वास्तुनि कीर्तितम्।।६।।

सूर्य जिस नक्षत्र में रहे उससे ७ नक्षत्र त्याग करके बाद ११ नक्षत्र में गृहारम्भ शुभ है।। उसके आगे ९ नक्षत्र अशुभ है यह वास्तु में अवश्य विचार करे।।६।।

पृथ्वी शयन—

"प्रद्योतनात् पंच नगाङ्क सूर्य-नन्देन्दु-षड्विंशमितेषु भेषु।
शेते मही नैव गृहं प्रकुर्यात् तडागवापीखननं न शस्तम्।।७।।"

सूर्य के नक्षत्र से ५ वें, ७ वें, ९ वें, १९ वें, २६ वें नक्षत्रों में पृथ्वी शयन करती है। इसलिये मकान, पोखरा कुएँ का खनना आरम्भ न करै।।७।।

विस्तारहस्तैर्विहृतश्च पिण्डो दैर्ध्यं भवेल्लब्धमितं यदङ्कम्।
शेषं चतुर्विंशतिसंगुणन्तु भजेत्तु तैर्लब्धिसमाङ्गुलानि।।८।।

गृह की लम्बाई चौड़ाई का गुणन पिण्ड कहलाता है, पिण्ड में चौड़ाई से भाग ले तो लब्धाङ्क लम्बाई होंगी बाकी जो बचे उसको २४ से गुणा कर पुनः चौड़ाई से भाग ले जो लब्धि हो वह अंगुल होगा।।८।।

अभीष्टांशादिसिद्ध्यर्थं क्षिपेद्दैर्ध्येऽङ्गुलादिकम्।
न विस्तारे कदाचित्स्याद्विश्वकर्माब्रवीद्वचः।।९।।

अभीष्टांशादि सिद्ध्यर्थ लम्बाई में अंगुलादि युक्त करे चौड़ाई में कदाचित् युक्त न करै यह विश्वकर्मा का वचन है।।९।।

दत्ते दुःखं तृतीयर्क्षं पञ्चमर्क्षं यशः क्षयम्।
आयुः क्षयं सप्तमर्क्षं कर्तुर्थाद्गृहभावधि।।१०।।

कर्ता के ऋक्ष से गृह ऋक्ष तीसरा हो तो दुःखद है, पंचमर्क्ष यशक्षयकारक है और सप्तमर्क्ष आयुःक्षयकारक है।।१०।।

अथ कृत्तिकादि भेद से गृहफल—

त्रिभिस्त्रिभिर्वेश्मनि कृत्तिकाद्यै-
रुच्छेद १ पुत्राप्ति २ धनादि ३ शोकम् ४।

शत्रोर्भयं ५ राजभयं ६ च मृत्युः ७
सुखं ८ प्रवासश्च ९ नव प्रभेदाः।।११।।

तीन-तीन नक्षत्र के क्रमपूर्वक कृत्तिकादि से दिन नक्षत्र तक गणना करने से उच्छेद १ पुत्राप्ति २ धन ३ शोक ४ शत्रुभय ५ राजभय ६ मृत्यु ७ सुख ८ प्रवास ९ ये नव प्रकार के भेद है।।११।।

अथ पिंडानयन प्रकार—

दैर्घ्यविस्तारयोर्घातो गृहस्य पदमुच्यते।
अष्टभिर्भाजिते शेषे आयो भवति संस्फुटः।।१२।।

लम्बाई और चौड़ाई को परस्पर गुणने से गृह का पिंड होता है, उस पिंड में आठ का भाग देने से शेष ध्वजादि आय होगा।।१२।।

अथायादि विचारः—

गो ९ नन्द ९ षट् ६ सर्प ८ गुणा ३ ष्ट
८ नागै८र्वेदा ४ष्ट ८ भिस्संगुणिते च पिंडे।
भक्ते गजा ८ द्र्य ७ङ्क ९पतङ्ग १२ नाग ८
२७भाक्षेन्दु १५ भिर्भैः २७खदिवाधिनाथैः १२०।।१३।।
ध्वजादिरायोऽर्कदिनादिवार-
स्त्वंशस्तथा स्वं च ऋणं च धिष्ण्यम्।।
तिथिर्युतिश्चायुरथो गृहस्य
नवैव नाम्ना च सदृक्फलानि।।१४।।

पिंड को नौ जगह धरे क्रम से ९।९।६।८।३।८।८।४।८ से गुणन करे और फिर क्रम से ८।७।९।१२।८।७।१५।२७।१२० से भाग लेले तो ध्वजादिक आय १, वार २, अंश ३, द्रव्य ४, ऋण ५, ऋक्ष ६, तिथि ७, योग ८, आयुर्बल ९, होगा। यह गृह का नौ प्रकार अंश होगा यह नाम समान फल करनेवाला है।।१३-१४।।

अथ निषिद्ध तिथिवार योगादि—

सूर्यारवारराश्यंशाः सदा वह्निभयप्रदाः।
तिथिप्रयोजनं दर्शं रिक्तां च वर्जयेदपि।।१५।।

योगं दुष्टफलं चैव शनिराहुयुतं च भम्।।१६।।

पूर्वादितस्सद्मसु दिङ्मुखेषु भू १ द्वौ२युगा४नाग८मिता ध्रुवांका।

शालाध्रुवाङ्कसंयोगः सैको वेशमध्रुवादिकम्।१७।

रवि भौम, शनिवार अग्निभयकारक है तथा अमावस और रिक्ता तिथि भी वर्जित है। इस तरह से दुष्ट योग और शनि राहु युक्त नक्षत्र वर्जित है। पूर्वादिक दिशा के द्वारके १, २, ४, ८, ध्रुवाङ्क हैं, शालाध्रुव के अङ्क का योग करके १ और जोड़े तो ध्रुवादिक गृह होगा।।१५-१८।।

अथ षोडशगृह विचारः—

गृहपिण्डं युगैर्हत्वा षट्चन्द्रैर्भागमाहरेत्।

शेषाङ्केतु स्मृतं नाम ध्रुवादिक्रमतो बुधैः।।१८।।

ध्रुवं च १ धान्यं च २ जयञ्च ३ नन्दं ४

खरञ्च ५ कान्तं च ६ मनोरमञ्च ७

सुवक्त्रसंज्ञं ८ खलु दुर्मुखाख्यं ९ क्रूरं १०

विपक्षं ११ धनदं क्षयं च १३।।१९।।

आक्रन्द १४ संज्ञं विपुलाह्वयं च १५

स्यात्षोडशं तद्विजयाभिधानम्।।२०।।

गृहपिंड को चार से गुणै और १६ से भाग दे, जो शेषांक रहै सो ध्रुवादिक पिंड का गृह होगा। यथा-ध्रुव १ धान्य २ जय ३ नन्द ४ खर ५ कान्त ६ मनोरम ७ सुवक्त्र ८ दुर्मुख ९ क्रूर १० विपक्ष ११ धनद १२ क्षय १३ आक्रन्द १४ विपुल १५ और विजय १६ यह सोलह प्रकार नाम के गृह होंगे।।१८-२०।।

आयादिपरत्वेन द्वारमाह—

धान्यं बुधैः पूर्वमुखं गृहस्य जयं तथा दक्षिणादिङ्मुखं हि।

यत्पश्चिमास्यं खरसंज्ञकं च स्याद्दुर्मुखं सौम्यदिगास्यमेवम् ।।२१।।

यद् दुर्मुखं चैव विपक्षसंज्ञमाक्रन्दसंज्ञं धनदं सुवक्त्रम्।

त्रित्र्यक्षरं वै विपुलं महद्भिर्ज्ञेयं गृहन्तद्विजयाभिधानम्।।२२।।

मनोरमं स्याच्चतुरक्षरं हि नेत्राक्षराण्यान्यगृहाणि विद्यात्।
ध्रुवं बुधैरुर्ध्वमुखं गृहस्य चतुर्मुखं स्याद्विजयाभिधानम्।।२३।।

धान्यनामक पूर्व दिशा में द्वार करै। जयनामक दक्षिण दिशा में द्वार करै और दुर्मुखनामक उत्तर दिशा में द्वार करै। विपक्ष आक्रन्द, धनद, सुवक्त्र, तथा विपुल और विजय इनका तीन अक्षर का नाम है। मनोरम नाम चार अक्षर का है। इससे अन्य गृह के दो अक्षर के नाम हैं ध्रुव नामक गृह को ऊर्ध्वमुख बनावे तथा विजयनामक गृह के चारों दिशा में द्वार बनावे।।२१-२३।।

वृक्षविचार—

पूर्वप्लवोदक्प्लवगा सुखाप्त्यै जनो वसेत्तत्र निवासयोग्यात्।।२४।।
प्लक्षोत्तरं पूर्ववटं च शस्तं स्थानात्तथोदुम्बरदक्षिणं च ।।२५।।
यत्पश्चिमाश्वन्थकमुत्तमं च वास्तुर्दिशेद्धूतरुशुद्धभागम्।
निषिद्धवृक्षाभिहता दिगन्तास्तदन्तरे पूजितवृक्षबीजम्।।२६।।

पूर्व दिशा में जमीन प्लव हो तो सुख की वृद्धि करनेवाली है उसमें निवास करना योग्य है, पाकड़ का वृक्ष उत्तर में शुभ है। पूर्व दिशा में बरगद का वृक्ष शुभ है तथा गूलर का वृक्ष दक्षिण में शुभ है। पश्चिम दिशा में पीपल का वृक्ष शुभ है। इससे वृक्ष का विचार करके शुद्ध भूमि में गृह बनावे। जो निषिद्ध वृक्ष हो, वह गृह की ऊँचाई की दूरी पर शुभ है उसके मध्य में उत्तम वृक्ष शुभ होता है।।२४-२६।।

अंशादि ज्ञान भित्तिमान—

भं नागतष्टं व्यय ईरितोऽसौ ध्रुवादिनामाक्षरयुक् सपिण्डः।
तष्टो गुणैरिन्द्रकृतान्तभूपा ह्यंशा भवेयुर्न शुभोऽन्तकोऽत्र।।२७।।
गृहे मृन्मये मानमन्तःप्रधानं तथा चेष्टिकाभित्तिभागन्तदर्द्धम्।
तया चोपलस्य सभित्त्या सदैव प्रकुर्याद्बुधश्चान्यथा द्रव्यनाशम्।।२८।।

गृहनक्षत्र को आठ से भाग देवे जो शेष रहे सो व्ययसंज्ञक होगा। इस व्यय को ध्रुवादि नामाक्षर में जोड़े और पिण्ड भी जोड़े फिर ३ से भाग लेवे। १ बचे तो इन्द्र का अंश, २ बचे तो यम का अंश, ३ बचे तो तो भूप का अंश होगा,

इसमें यम का अंश शुभ नहीं है। यदि मिट्टी का मकान बनावै तो लम्बाई चौड़ाई भीतर भीतर रहै। ईंट के मकान में आधा बाहर रहे और पत्थर के मकान में सब बाहर रहैं इससे अन्यथा करै तो धन का नाश होगा।।२७-२८।।

पिण्ड में भित्ति का विचार—

अंगेषु बंगेषु कलिंगदेशे सौराष्ट्रदेशे मगधप्रदेशे ।
मरुञ्जले सिन्धुगिरिप्रदेशे सभित्तिमानं कथितं मुनीन्द्रैः।।२९।।
गर्भस्य ग्राह्यं यदि मध्यदेशे तथापि चाग्निर्नृपचौरयुद्धम्।
उद्‌बन्धनं घातविघातमेव इदं हि वाक्यं कथितं वसिष्ठैः।।३०।।

अंग देश में, बंग देश में, कलिंग देश में, सौराष्ट्र देश में, मगध देश में, मध्य देश में, मरुञ्जल देश में तथा सिन्धु, गिरि प्रदेश में सभित्तिमान मुनीद्रों ने कहा है। गर्भ का ग्रहण यदि मध्यदेश में करै तो उनका फल क्रम से इस तरह से है। अग्निभय, नृपभय, चोरभय, युद्धभय, उद्‌बन्धन, घात और विघात होता है। यह वाक्य वसिष्ठ का है।।२९-३०।।

अथ नक्षत्रे ज्ञाते राशिनिर्णय—

अश्विनीमघमूलाद्यैस्त्रित्रिभे राशिरिष्यते।
शेषे भे द्वितयं गेहे विशेषोऽयं प्रकाशितः।।३१।।
द्विपः पुनः प्रयोक्तव्यो वापीकूपसरस्सु च।
अग्निवेश्मसु सर्वेषु गृहे बह्वायजीविनाम्।।३२।।
धूम्रं नियोजयेत्केचिच्छ्वानं म्लेच्छादिजातिषु।
प्रागुदक्पश्चिमे वायौ पशुस्थानं च कारयेत्।।३३।।
दिगन्तरेऽथ मध्ये वा पशुश्चैव विनश्यति।
पशुसद्म वृषाये च ध्वजाये वा सुखप्रदम्।।३४।।

अश्विनी, मघा, मूल से तीन तीन ऋक्ष की राशि हैं और जो नक्षत्र है वे दो दो नक्षत्र की राशि हैं, यह विशेष करके प्रकाश किया है। वापी और कूप में, तालाब में हस्ती नामक आय योजना किये हैं, तथा अग्निआगार बनाने में धूम आय का विचार करै। किसी-किसी आचार्य ने धूम आग की योजना की है।

श्वान आय म्लेच्छादि जातियों के मकान में विचारै, पूर्व, उत्तर, पश्चिम तथा वायव्य में पशुस्थान बनावै। तथा दिगन्तर में अथवा मध्य में पशु का नाश होगा पशु के मकान में वृक्षाय ग्रहण करै ध्वजाद भी शुभ है।।३१-३४।।

अथ गृहाङ्गणे शुभाशुभफलानि—

स्वामीहस्तप्रमाणेन दीर्घविस्तारसंयुतम्।
नवभिस्तु हरेद्भागं शेषश्चैव महालयम्।।३५।।
दानी राजा तथा पण्ढं तस्करो भोगिसंज्ञकः।
आभीर्विचक्षणो अङ्को धनी नामसदृक्फलाः।।३६।।

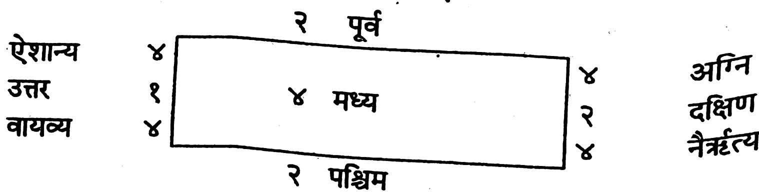
स्वामी के हाथ के प्रमाण से लम्बाई चौड़ाई जोड़ करके नवे भाग लेवे जो शेष रहै सो फल जानै। दानी १ राजा २ पण्ढ ३ तस्कर ४ भोगिसंज्ञक ५ आभी ६ विचक्षण ७ रङ्क ८ धनी ९ ये नाम समान फल देते हैं।।३५-३६।।

अथ बूसाचक्रम

लिखित्वा पूर्वकाष्ठासु सूर्यभाच्चक्रमुच्यते।।३७।।
द्वयं चतुश्च सर्वत्र मध्ये चत्वारि इत्यपि।।३८।।
दिशायां लभते सौख्यं कोणे हानिः पशुक्षयम्।
मध्येषु स्थिरता ज्ञेया फलं बूसाख्यचक्रकम्।।३९।।

पूर्व दिशा से सूर्य के नक्षत्र से दिशा में २ कोण में ४ ऋक्ष लिखे मध्य में ४ ऋक्ष लिखै। दिशा में सौख्य और कोण में हानि तथा पशुक्षय और मध्य में स्थिरता होगी, यह बूसाचक्र में विचारे।।३७-३९।।

बूसाचक्रम्—



अथ चरणि विचारः—

स्वामिहस्तप्रमाणेन दीर्घविस्तारसंयुतम्।
वसुभिस्तु हरेद्भागं शेषं चरणिरुच्यते।।४०।।

पशुहानिः १ पशोर्नाशः २ पशुलाभः ३ पशुक्षयः ४।
पशुरोगः ५. पशोर्वृद्धि ६ पशुभेदो ७ बहुः पशुः ८।।४१।।

स्वामी के हाथ के प्रमाण से लम्बाई चौड़ाई का योग करै फिर आठ से भाग देवै जो बाकी बचै सो चरणी में फल विचारै। पशुहानि १, पशुनाश २, पशुलाभ ३ पशुक्षय ४ पशुरोग ५ पशुवृद्धि ६ पशुभेद ७ बहुपशु ८।।

अथ भुवः सुप्तत्वज्ञानम्—

कर्तृग्रामदिशश्चैव स्वरयुक्तस्तु कारयेत्।
वह्निभिस्तु हरेद्भागं शेषांके फलमादिशेत्।।४२।।
एके जागर्ति भूमिश्च द्वितीये समता भवेत्।
तृतीये राक्षसो चैव मृत्युरेतन्न संशयः।।४३।।

कर्ता, ग्रामं तथा दिशा के स्वर एकत्र करै उसमें तीन से भाग देवे जो शेष बचै सो फल जानै। १ बचै तो पृथ्वी जागती है, २ बचै तो समता कहना, ३ बचै तो राक्षसी कहना, यह मृत्यु देनेवाली है इसमें संशय नहीं है।।४२-४३।।

पुनरपि—

ग्रामस्वरं तत्र दिशाप्रमाणं नामाक्षरं तत्र ग्रहैः समन्वितम्।
तौलेन गुण्यं युग ४ भागधेयं सौख्यं च सुप्तं च मृतं च शून्यम्।।४४।।

ग्राम के स्वर तथा दिशा का प्रमाण तथा नामाक्षर एकत्र करके ९ मिलावै। सात से गुणा करै और ४ से भाग ले। १ बचै तो सुख, २ बचै तो सुप्त, ३ बचै तो मृतक, ४ बचै तो शून्य यह फल जानै।।४४।।

अथ प्रकारान्तरेण भूमिसुप्तत्वज्ञानम—

ग्रामक्षरं चतुर्गुण्यं नामाक्षरसमन्वितम्।
शिवनेत्रैर्हरेद्भागं शेषांके लभते फलम्।।४५।।
एकेन जीविता भूमिर्द्वितीये समता फलम्।
तृतीयेन मृता भूमिरित्युक्तं रुद्रयामले।।४६।।

ग्रांम के अक्षर को चौगुना करके नाम के अक्षर में जोड़ दे फिर ३ से भाग ले शेष बचै सो ऐसा फल जानै। एक बचै तो जीवित भूमि, २ बचै तो सम भूमि, ३ बचै तो मृता भूमि है। यह रुद्रयामल ने कहा है ।।४५-४६।।

अन्यच्च—

ग्रामनामदिशावर्गमेकीकृत्य त्रिभिर्भजेत्।
एकेन जीविता भूमिर्द्वितीयेन मृता भवेत्।।
शून्ये शून्यं विजानीयादित्युक्तं रुद्रयामले।।४७।।
महालयं खातमितं विनिर्मितं ध्वजादयो गर्भमिति प्रमाणकम्।
शुभं च सौख्यं धनधान्यवृद्धिं गृहेश्वरस्य फलमेवमाहुः।।४८।।
भित्त्याश्चार्द्धन्तु देवानां प्रासादो भित्तिबाह्यके।
भित्तिरन्यस्य गेहानामालयं त्रिविधं स्मृतम्।।४९।।
स्वामिहस्तप्रमाणेन ज्येष्ठपत्नीकरेण च।
ज्येष्ठापत्यकरेणापि कर्म्मकारकरेण वा।।५०।।
अनामिकान्तो हस्तः स्यादूर्ध्वबाहुशरांशकः।
तर्जनीमध्यमाभ्यां च प्रमाणं नैव कारयेत्।।
गर्भमात्रम्भवेद्देहन्नृणां प्रोक्तं पुरातनैः।।५१।।

ग्रामवर्ग, नामवर्ग, दिशावर्ग एकत्र करके ३ से भाग ले। १ बचै तो जीवित, २ बचै तो मृतक, शून्य बचै तो शून्य जानै ऐसा रूद्रयामल का वचन है। महालय में खात को बराबर बनावे, ध्वजादिक में गर्भमिति प्रमाण करै, इसका फल शुभ सौख्य, धनधान्यवृद्धि गृहेश्वर का फल ऐसा है। देवता के मन्दिर में आधी भीति लेवे अटारी में भीत बाहर रहे मकान में भीति का जोता दूसरे से ग्रहण करै इस तरह तीन प्रकार मकान के हैं। स्वामी के हाथ के प्रमाण से तथा ज्येष्ठ पत्नी के हाथ से तथा ज्येष्ठ पुत्र के हाथ से तथा कर्मकार के हाथ से अनामिकान्त हाथ से ऊपर बाहु के पंचमांश तक का प्रमाण है। तर्जनी व मध्यमा का प्रमाण न करना चाहिये। गर्भमात्रगृह प्राचीनचार्यों ने कहा है।।४७-५१।।

अथ नामप्राधान्यतामाह—

देशे ज्वरे ग्रामगृहप्रवेशे सेवासु युद्धे व्यवहारकार्ये।
द्यूतेषु दानेषु च नामराशेर्यात्राविवाहादिषु जन्मराशेः।।५२।।
मैत्री विवाहवद् ग्राह्या विपरीता तु नाडिका।
गृहं तत्स्वामिनो भैक्यम्मृत्युदं तद्विवर्जयेत्।।५३।।

सेव्यसेवकयोश्चैव गृहं तत्स्वामिनोरपि।

परस्परं मित्रयोश्च नाडीवेधः प्रशस्यते।।५४।।

देश में, ज्वर में, ग्राम में, गृहप्रवेश में, सेवा में, युद्ध में और व्यवहार में, द्यूत में तथा दान में, नामराशि ग्रहण करना। यात्रा यथा विवाहादिक में जन्मराशि ग्रहण करना चाहिए। मैत्री विवाह की तरह से विचारै परन्तु नाड़ी विपरीत रहै गृहर्क्ष तथा स्वाम्यर्क्ष यदि एक हो तो मृत्युप्रद है। इनको वर्जित कर देवै। स्वामी तथा सेवक में गृह और स्वामी में तथा परस्पर मित्रता में नाड़ीवेध शुभ है।।५२-५४।।

दीर्घविस्तारसंख्यैक्ये चाष्टाभिर्गुणिते तथा।

नवभिस्तु हरेद्भागं शेषके फलमादिशेत्।।५५।।

तस्कर १ भोग २ विचक्षण ३ दाता ४ नृप ५ नपुंसकौ ६।

धनाढ्यश्च ७ दरिद्रश्च ८ भयदो ९ नवमस्तथा।।५६।।

लम्बाई चौड़ाई को एकत्र करै पुनः आठ में गुणै नव से भाग लेवै जो शेष बचै सो फल कहै। तस्कर १ भोगी २ विलक्षण ३ दाता ४ नृपति ५ नपुंसक ६ धनाढ्य ७ दरिद्रता ८ भयद ९।।५५-५६।।

अध गृहारम्भनक्षत्राणि—

त्र्युत्तरेऽपि च रोहिण्यां पुष्यमैत्रे करद्वये।

धनिष्ठाद्वितये पौष्णे गृहारम्भः प्रशस्यते।।५७।।

अश्विनीरोहिणी मूलमुत्तरात्रयमैन्दवम्।

स्वातिहस्तोऽनुराधा च गृहारम्भे प्रशस्यते।।५८।।

तीनों उत्तरा, रोहिणी, पुष्य, अनुराधा, हस्त, चित्रा, धनिष्ठा, शतभिषा, रेवती ये ऋक्ष गृहारम्भ में शुभ कहे हैं। अश्विनी, रोहिणी, मूल तीनों, उत्तरा, मृगशिरा, स्वाती, हस्त, अनुराधा ये भी नक्षत्र गृहारम्भ में शुभ हैं।।५७-५८।।

अथ गृहारम्भे वर्ज्य तिथिवार—

भौमार्क रिक्ताऽमाद्यूने चरोनाङ्गे विपञ्चके।।५९।।

पुनरपि—

पुष्यं धनिष्ठामृदुवायुमूलस्थिराश्विनी विष्णुजले च हस्ते।
एषु प्रवेशे बहुपुत्रपौत्राश्चिरं वसेद्भूरिसमागमैश्च।।६०।।

मंगलवार, रविवार, रिक्ता तिथि, अमावस्या, चर लग्न वर्जित है तथा बुधपंचक वर्जित है। फिर एक आचार्य का मत यह है कि पुष्य, धनिष्ठा, मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, स्वाती, मूल, तीनों उत्तरा, रोहिणी, अश्विनी, श्रवण, शतभिष, हस्त इनमें प्रवेश करने में पुत्र-पौत्रादिक का सुख होगा। यह योग बहुत समागम से बहुत दिन पर्यन्त निवासकारक है।।५९-६०।।

अथ मासाः—

सौम्ये फाल्गुनवैशाखमाघश्रावणकार्तिके।
मासाः स्युर्गृहनिर्माणे पुत्रारोग्यधनप्रदाः।।६१।।

उत्तरायण में फाल्गुन, वैशाख, माघ, श्रावण, कार्तिक ये मास गृहनिर्माण में पुत्र, आरोग्य और धनप्रद हैं।।६१।।

अथ प्रवेशज्ञानम्—

गृहारम्भोदिते मासे धिष्ण्ये वारे विशेद्गृहम्।
तथा सौम्यायने हर्म्ये तृणागारन्तु सर्वदा।।६२।।

गृहारम्भ में जो मासादि कहे हैं, उन वारादिकों में तथा उत्तरायण रवि में गृहप्रवेश करै तथा तृणागार में सर्वदा प्रवेश करै।।६२।।

अथ मतान्तर से भूमिपरीक्षा—

श्वेतारक्तकपीतकृष्णवसुधा स्वादुः कटुस्तिक्तका।
काषाया घृतशोणितान्नमदिरागन्धाः शुभा विप्रतः।।६३।।

सफेद, आरक्त, पीत और काली पृथ्वी तथा स्वादु, कटुक, तिक्त, कषाय, घृत, शोणित, अन्न मदिरा ये गन्धवाली भूमि विप्रादिवर्गों को शुभ हैं।।६३।।

तथा द्वार द्वारनिर्णयो वास्तुशास्त्रे—

नवभागं गृहं कृत्वा षट्कभागन्तु दक्षिणे।
त्रिभागमुत्तरे कार्यं शेषं द्वारं प्रकीर्तितम्।।६४।।

दक्षिणाङ्कः स वै प्रोक्तो मन्दिरान्निस्सृते सति।
यो भूयाद्दक्षिणे भागे वामे भूयात्स वामगः।।६५।।

गृह की लम्बाई के नौ भाग करै। पाँच भाग दक्षिण में और तीन भाग बायें में छोड़कर मध्य में जो एक भाग है उसी में द्वार बनावै। दक्षिणांग उसीको मानै, जो मन्दिर-से निकलने के समय दक्षिण हो, जो वाम हो सो वाम मानै।।६४-६५।।

पुनरपि

पूर्वादौ त्रि षड ६र्थ २ पञ्चम ५ लवे द्वाः सव्यतोऽङ्कोद्धृते।
दैर्ध्ये द्वयें द्व्येश सुसमुच्छ्रिताब्धिलवके सर्वासु दिक्षूदिता।।६६।।

लम्बाई में नौ से भाग लेवै पूर्वादि दिशा में वामवर्त्त तृतीय भाग में पूर्व षष्ठ भाग में उत्तर, द्वितीय भाग में पश्चिम, पञ्चम भाग में दक्षिण द्वार बनावै, ऊँचाई के अष्टमांश में सब दिशाओं में द्वार करै।।६६।।

अथ द्वारशाखारोपणम्—

अश्विनीत्र्युत्तराहस्ततिष्यश्रु तिमृगेषु च।
रोहिण्यां स्वातिभेऽन्त्ये च द्वारशाखाम्प्ररोपयेत्।।६७।।

अश्विनी, तीनों उत्तरा, हस्त, पुष्य, श्रवण, मृगशिरा, रोहिणी, स्वाती और रेवती इनमें द्वारशाखारोपण करै।।६७।।

अथ द्वारपरत्वेन चतुर्दिक्षु ऋक्षस्थापनम्—

कुड्यां भित्वा न कुर्वीत द्वारन्तत्र सुखेप्सुभिः।
कृत्तिकाभगमैत्रन्तु विशाखां च पुनर्वसुम्।।६८।।
पुष्यं हस्तं तथार्द्रा च क्रमात्पूर्वेषु विन्यसेत्।
मैत्रं विशाखा पौष्णश्च नैर्ऋत्यं यमदैवतम्।।६९।।
वैश्वदेवाश्विनीचित्राः क्रमाद्दक्षिणमास्थिताः।
पित्र्यं प्रौष्ठपदार्य्यम्णन्तथा मासान्तदैवतम्।।७०।।
शततराश्विनीहस्तः पश्चिमे रोहिणी मृगौ।
स्वात्याश्लेषाऽभिजित्सोम्यं वैष्णवं वासवन्तथा।।७१।।

याम्यं ब्राह्मं क्रमात्सौम्यद्वारेषु च विनिर्दिशेत्।
द्वारर्क्षैस्तद्दिशाद्वारं स्थापयेद्वा विचक्षणः।।७२।।

सुख की इच्छा चाहनेवाले पाख भेदन करके द्वार न बनावै। कृतिका, पूर्वाफाल्गुनी, अनुराधा, विशाखा, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, आर्द्रा ये ८ नक्षत्र पूर्व में स्थापित करै। अनुराधा, विशाखा, रेवती, मूल, भरणी, उ. षा., अश्विनी, चित्रा ये नक्षत्र क्रम से दक्षिण में स्थित हैं। मघा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, शतभिषा, अश्विनी, रोहिणी, मृग ये ८ नक्षत्र पश्चिम में स्थापित करै। स्वाती, आश्लेषा; अभिजित, मृगशिरा, श्रवण, धनिष्ठा, भरणी, रोहिणी ये ८ नक्षत्र उत्तर में स्थापित करै। द्वारर्क्षा में उसी दिशा में द्वार बनावै।।६८-७२।।

सूर्य्यमाद्वेदमैः ४ शीर्षस्थितश्च धनसम्पदः।
गेहादुद्वासनन्तस्मादष्टभैः ८ कोणसंस्थितैः।।७३।।
शाखास्वष्ट ८ मितैस्तस्माद्धनं सौख्यं भवेद्गृहे।
देहल्यान्तु त्रिभि ३ र्धिष्णैर्मृत्युर्गृहपतेर्भवेत्।।७४।।
चतुर्भि ४ र्मध्यगैस्तस्माद्द्रव्यलाभः शुभं भवेत्।
एतच्चक्रं विचार्य्यादौ द्वारं कुर्यात्स्वमन्दिरे।।७५।।

सूर्य के नक्षत्र से ४ नक्षत्र शीर्ष पर धरै। उसमें यदि द्वारशाखा स्थापित करै तो धन सम्पत्ति हो तथा जिससे ८ नक्षत्र कोण पर धरै उससे उद्वासन होगा। उससे फिर ८ नक्षत्र शाखा पर धरै उनमें धन तथा सुख हो, देहली में ३ नक्षत्र धरै वे गृहपति को मृत्युप्रद है। तिसेसे ४ नक्षत्र मध्य में धरै उसमें द्रव्य लाभ तथा सौख्य होता है। इस चक्र को आदि में विचार कर तब अपने मकान का द्वार बनावै।।७३-७५।।

तत्र द्वारनियममाह—

कर्कनक्रहरिकुम्भगतेऽर्के पूर्वपश्चिममुखानि गृहाणि।
तौलिमेषवृषवृश्चिकजाते दक्षिणोत्तरमुखानि च कुर्य्यात्।।७६।।

कर्क, मकर, सिंह, कुम्भ के सूर्य हों तो पूर्व तथा पश्चिम में गृह का मुख बनावै और तुला, मेष, वृष, वृश्चिक के सूर्य हों तो दक्षिण तथा उत्तर में गृह का मुख बनावै।।७६।।

अथ वसिष्ठः—

मनसश्चक्षुषोर्यत्र सन्तोषो जायते भुवि।
तस्यां कार्यं गृहं सर्वैरिति गर्गादिसम्मतम्।।७७।।

मन से और नेत्र से जिस भूमि को देखने से सन्तोष होवै, उसी भूमि में गृह बनावै ऐसा गर्गादिक का मत है।।७७।।

अथाष्टौ वर्गाः—

अकारादिषु वर्गेषु दिक्षु प्रागादिषु क्रमात्।
तार्क्ष्यमार्जारसिंहश्वाः सर्पाखुगजशाशकाः।।७८।।

अकारादि वर्ण के विषे पूर्वादिक क्रम से गरुड़, मार्जार (बिलार) २ सिंह ३ श्वान ४ सर्प ५ मूसा ६ हाथी ७ खरहा ८ जानै।।७८।।

अथ लाभालाभ विचारः—

स्ववर्गं द्विगुणीकृत्य परवर्गेण योजयेत्।
वसुभिस्तु हरेद्भागं योऽधिकः स ऋणी भवेत्।।७९।।

अपने वर्ग को २ गुणै परवर्ग अर्थात् ग्राम वर्ग भी उसमें जोड़ दे ८ से भाग देवै, पुनः ग्रामवर्ग को द्विगुणित करै अपना वर्ग जोड़ देवै पुनः ८ से भाग दे जो बाकी बचै उन दोनों शेषों का अन्तर करै। जिसमें अधिक शेषांक बचै सो ऋणी है।।७९।।

अस्योदाहरणम्—

यथारामहर्षस्य वर्गः गजस्तत्संख्या ७ द्विगुणिता १४ अयोध्यायाः वर्गः गरुडस्तत्संख्या १ युता १५ अष्टभक्तावशेषः ७ रामहर्षस्य काकिण्यः।। एवं ग्रामवर्गसंख्या १ द्विगुणिता २ रामहर्षस्य वर्गसंख्या ७ युता ९ अष्टभक्तावशेषः १ ग्रामस्य काकिणयः।। द्वयोरन्तरं ६ अत्र रामहर्षस्य काकिण्योधिकास्तेन तत्र वासकरणाद् द्रव्यहानिः।।

जैसे रामहर्ष का वर्ग हस्ती है उसकी संख्या ७ है दूना किया १४ तथा अयोध्या का वर्ग गरुड़ है उसकी संख्या १ है, योग किया तो १५ भया और उसे आठ से भाग दिया बाकी बचा ७ सो ही रामहर्ष की काकिणी भई। इस तरह ग्रामवर्ग की संख्या १ है दूना किया २ भया रामहर्ष की वर्ग संख्या ७ है योग किया ९ भया आठ से भाग दिया बाकी बचा १ सो ग्राम की काकिणी भई। दोनों का अन्तर किया तो बाकी बचा ६ इससे रामहर्षकी काकिणी अधिक है उनको वास करनेसे द्रव्यकी हानि होगी।

पुनरपि—

यथा वासुदेवस्य वर्गः मूषकः तत्संख्या ६ द्विगुणिता १२ अयोध्यायाः वर्गः गरुडः तत्संख्या १ युतः १३ अष्टभक्तावशेषः ५ वासुदेवस्य काकिण्याः।। एवं ग्रामवर्गसंख्या १ द्विगुणिता २ वासुदेवस्य वर्गसंख्या ६ युतः ८ अष्टभक्तावशेषः ० ग्रामस्य काकिरायः द्वयोरन्तरम् ५ अत्र वासुदेव काकिरायोऽधिकास्तेन तत्र वासकरणाद् द्रव्यहानिः।।

जैसे वासुदेवका वर्ग मूषक है उसकी संख्या ६ दुना किया १२ भया अयोध्या का वर्ग गरुड़ है उसकी संख्या १ है सो योग किया तो १३ हुआ आठ से भाग दिया बाकी बचा ५ सो वासुदेव की काकिणी हुई। इसी तरह ग्रामवर्ग की संख्या १ है सो दूना किया २ हुआ वासुदेव की वर्ग संख्या ६ है सो योग दिया ८ भया। आठ से भाग दिया बाकी बचा ०(८) यह ग्राम की काकिणी हुई इससे वासुदेव की काकिणी अल्प है उनको वास करने से द्रव्य की वृद्धि होगी।

वि०— गंर्गादि मत से ग्राम की काकिणी से नाम की काकिणी अधिक शुभ कही गयी है।

गृहारम्भलग्नाद् दीर्घायुर्योगः—

गुरुर्लग्ने रविः षष्ठे द्यूने सौम्ये सुखे सिते।
तृतीयस्थेऽकपुत्रेऽत्र तद्गृहं शतमायुषम्।।८०।।

भृगुर्लग्नेऽम्बरे सौम्ये लाभस्थाने च भास्करे।
गुरुः केन्द्रगतो यत्र शतवर्षाणि तिष्ठति।।८१।।
हिबुकेज्येऽम्बरे चन्द्रे लाभे च कुजभास्करे।।५७।।
आरम्भः क्रियते यस्य अशीत्यायुः क्रमाद्भवेत्।।८२।।
लग्नस्थौ गुरुशुक्रौ च रिपुराशिगते कुजे।
सूर्ये लाभगते यस्य द्विशताब्दानि तिष्ठति।।८३।।
स्वोच्चस्थौ गुरुशुक्रौ च स्वभे चैव सुखस्थितौ।
स्वोच्चे लाभगते मन्दे सहस्राणां समा स्थितिः।।८४।।
कर्कलग्नगते चन्द्रे केन्द्रस्थाने च वाक्पतिः।
मित्रस्वोच्चस्थितैः खेटैर्लक्ष्मीस्तस्य चिरं भवेत्।।८५।।

बृहस्पति लग्न में हो, सूर्य छठवें हो, बुध सातवें हो, शुक्र चौथे हो, तीसरे शनि हो तो वह गृह १०० वर्ष रहेगा।।७३।। शुक्र लग्न में हो; दशवें बुध हो, ग्यारहवें सूर्य हो, केन्द्र १, ४, ७, १० में गुरु हो तो भी १०० वर्ष गृह रहेगा।।७५।। बृहस्पति चतुर्थ में हो, दशवें चन्द्रमा हों, मंगल तथा सूर्य लाभ में हो तब जिस मकान को आरम्भ करे वह मकान ८० वर्ष रहेगा।।७५।। बृहस्पति तथा शुक्र लग्न में हो, छठवें मंगल हो सूर्य एकादश में हो तो वह गृह २०० वर्ष स्थिर रहेगा।।७६।। बृहस्पति और शुक्र उच्च के होकर एकादश में और चतुर्थ में हो अपने उच्च का होकर शनि एकादश में हो तो १००० वर्ष स्थिर रहेगा।।७७।। कर्क लग्न में चन्द्रमा हो, केन्द्र स्थान में गुरु हों मित्र के गृह में तथा उच्च स्थान में बुध हो तो लक्ष्मी बहुत दिन तक रहेगी।।८०-८२।।

स्वोच्चे शुक्रे विलग्ने वा गुरौ वेश्मगतेऽथवा।
शनौ स्वोच्चे लाभगे वा लक्ष्म्या युक्तं चिरं गृहम्।।८६।।

उच्चका शुक्र हो तथा लग्न में हो, गुरु चतुर्थ में हो, शनि उच्चका हो तथा ११ में हो तो वह घर लक्ष्मोयुक्त होकर बहुत कालतक रहेगा।।८६।।

अथ दुष्टयोगानाह—

शत्रुक्षेत्रगतैः खेटैर्नीचस्थैर्वा पराजितैः।
प्रारम्भे यस्य भवने लक्ष्मीस्तस्य विनश्यति।।८७।।

अन्यत्रोक्तम्—

एकोऽपि परभागस्थो दशमे सप्तमेऽपि वा।
द्यूनाम्बरे यदैकोऽपि परांशस्थो ग्रहो गृहम्।
अब्दान्तः परहस्तस्थं कुर्याच्चेद्वर्णपोऽबलः।।८८।।

अन्यदपि—

लग्नगे शशिनि क्षीणे मृत्युस्थाने च भूसुते।
प्रारम्भः क्रियते यस्य शीघ्रन्तद्धि विनश्यति।।८९।।
दशापतौ बलैर्हीने वर्णनाथे तथैव च।
पीडितर्क्षगते सूर्ये न विदध्यात्कदाचन।।९०।।

शत्रुक्षेत्र में ग्रह हों नीच के हों तथा पराजित हों ऐसे योग में जिस भवन का प्रारम्भ करै वहाँ लक्ष्मी का नाश होगा। कोई एक ग्रह शत्रुगृह में हो तो तथा दशम या सप्तम में हों, वर्णाधिप निर्बल हों तो वह गृह परहस्तगत हो जायै। सप्तम में तथा दशम में एक ग्रह भी हो तथा शत्रु नवांश में स्थित हो तो वह गृह वर्ष के अन्त में परहस्तस्थ करै यदि वर्णप अबल हो तो यह फल होगा। क्षीण चन्द्रमा लग्न में हों, मृत्युस्थान में मंगल हो तो जिस मकान को प्रारम्भ करै वह मकान शीघ्र ही नाश हो जायगा। दशापति निर्बल हों तथा वर्णनाथ भी निर्बल हो, पीडितर्क्ष में सूर्य्य हो तो कदापि गृह न बनावै।।८७-९९।।

अथ राहुमुखखात विचारः—

वृषर्कादित्रयं वेद्यां सिंहादि गणयेद् गृहे।
देवालये च मीनादिं तडागे मकरादिकम्।।९१।।

वृषार्कादि तीन वेदी में, सिंहदित्रय गृह में, देवालय में मीनादित्रय, तड़ाग में मकरादित्रय ग्रहण करना चाहिए।।९१।।

यथागृहे—

कन्यासिंहे तुलायां भुजगपतिमुखं शम्भुकोणेऽग्निखातं
वायव्ये स्यात्तदास्यन्त्वलिधनुमकरे हीशखातं वदन्ति।
कुम्भेमीने न मेषे निर्ऋतिदिशि मुखं वायुकोणे चं खातम्
चाग्नेः कोणे मुखं वै वृषामिथुनगते कर्कटे रक्षखातम्।।९२।।

सिंह कन्या तुला के रवि में भुजगपति का मुख शम्भुकोण में रहता है तब खात अग्निकोण में शुभ है। वृश्चिक धन मकर के रवि में मीन मेष के रवि में नैर्ऋत्य कोण में सुख रहता है तब खात वायव्य कोण में शुभ होता है तथा वृष मिथुन कर्क के रवि में अग्निकोण में मुख रहता है तब खात नैर्ऋत्य कोण में शुभ होता है।।९२।।

अथ खनिते खाते निस्सृतवस्तुफलानि—

खाते यदाश्म लभते हिरण्यमथेष्टिकाद्यं च समृद्धिरत्र।
द्रव्यं च रम्याणि सुखानि धत्ते ताम्रादिधातुर्यदि तत्र वृद्धिः।।९३।।
पिपीलिकाषोडशपक्षनिद्रा भवन्ति चेत्तत्र वसेन्न कर्ता।
तुषास्थिचीराणि तथैव मस्मान्यण्डानि सर्पा मरणप्रदाः स्युः।।९४।।
वराटिका दुःखकलिप्रदात्री कार्पास एवाति ददाति रोगम्।
काष्ठं प्रदग्धं यदि रोगभीतिर्भवेत्कलिः खर्परके च दृष्टे।
लौहे च कर्तुर्मरणन्निगद्याद्विचार्य्य वास्तुं प्रदिशन्ति धीराः।।९५।।

खात में यदि पत्थर निकलै तो हिरण्य लाभ होय, ईंटा निकले तो वृद्धि कहना, द्रव्य निकलै तो उत्तम सुख होय, ताम्रादि धातु निकलने से वृद्धि होय। चींटी या मेघा निकलै तो अशुभ है। भूसा हड्डी, वस्त्र, भस्म, अण्डा, सर्प, निकलै तो मृत्युप्रद है। कौड़ी निकले तो दुःख और कलह होवै। कपास निकले तो अतिरोग देवै, जला काठ निकलै तो रोग भय हो, खपड़ा निकले तो कलह होय। लोहा निकलै तो कर्ताकी मृत्यु होय धीर विद्वान् विचार करके वास्तु का फल इस प्रकार कहते हैं।।९३-९४।।

पृथ्वीशयन में परिहार—

वेदाष्टपञ्चाग्निसाद्रिघट्यः शेते मही वै रविभाद्दिनर्क्षे।
कृते तडागे त्वथ वाद्यगेहे बीजोप्तिलाङ्गल्यपरे शुभःस्यात्।।९६।।

अन्यदपि—

स्यान्नाड्य भवो ११ रुद्र ११ द्वादश १२
रवि १२ ऋक्षे २७ नृपा १६ श्च क्रमात्।

सुप्तश्चैव वसुन्धराम खनयेद्वापीतडागादिकम्
यात्रापाङ्गकृषिक्रियाद्यमशुभं ज्ञेयं शुभं तस्करे।।६७।।

पूर्वोक्त नक्षत्रों की ४।८।५।३।६।७ घड़ी क्रमसे भू सोती रहती है। सूर्यके नक्षत्र पर्यन्त गणना करै कूप में तथा तड़ाग में, गृह में,. बीजोप्ति में, मांगल्य में अशुभ है अन्यत्र शुभ है। यथा ११।११।१२।१२।२७।१६ इस क्रम से वसुन्धरा शयन करती है। सोती भूमि में वापी तडागादि बनाना शुभ नहीं हैं तथा यात्रा में, पाठ में, कृषिक्रियादि कार्य में अशुभ हैं और तस्करादि में शुभ है।।९६-९७।।

अथ सौरमासः—

मेषे चैत्रे वृषे ज्येष्ठे आषाढ़े कर्कटे रवौ।
सिंहे भाद्रपदे तोलावाश्विने कार्तिकेऽलिगे।।९८।।
पौषे नक्रे तथा माघे मकरे कुम्भगेऽपि च।
प्रकुर्यानमन्दिरं विद्वान्नान्यैः कैश्चिदुदीरितम्।।९९।।

चैत्र में मेष के रवि, ज्येष्ठ में वृष के रवि, आषाढ़ में कर्क के रवि, भाद्रपद में सिंह के रवि, आश्विन में तुला के रवि, कार्तिक में वृश्चिक के रवि हों, पौष में मकर के रवि तथा माघ में मकर और कुम्भ के रवि हों तो मन्दिर बनावे अन्य राशि में शुभ नहीं है ऐसा कुछ लोगों का मत है।।९८-९९।।

अथ शुभमास—

मार्गशीर्षे तथा पौषे माधवे श्रावणे तथा।
फाल्गुने च कृतं वेश्म सर्वसम्पत्प्रदं भवेत्।।१००।।
वेश्मारम्भे शुभा यस्य विशेषाच्छुक्लपक्षगा।
कुम्भेऽर्के फाल्गुने मासे श्रावणे सिंहकर्कयोः।।१०१।।
पौषे नक्रे गृहं कुर्यात्पूर्वपश्चिमदिङ्मुखम्।
मार्गे तुलालिगे भानौ वैशाखे वृषभाजयोः।
दक्षिणोदङ्मुखं श्रेष्ठं मन्दिरं नेष्टमन्यथा।।१०२।।

मार्गशीर्ष, पौष, वैशाख, श्रावण तथा फाल्गुन में यदि मकान बनावे तो सर्वसम्पत्प्रद होवे। गृहारम्भ में शुक्लपक्ष शुभ है। कुम्भ के सूर्य फाल्गुन में हों और कर्क सिंह के श्रावण में हों, पूस मे मकर के हों तो पूर्व पश्चिम दिशा के द्वार का गृह बनावे तथा तुला और वृश्चिक के भानु अगहन में हों, वृष और मेष के वैशाख में हों तो दक्षिणोत्तर द्वार का गृह श्रेष्ठ है, अन्यथा ठीक नहीं है।।१००-१०२।।

अथ चन्द्रर्क्षे द्वारम्–

वह्निमैत्रान्नगर्क्षस्थे चन्द्रे याम्योत्तराननम्।
पित्र्याद्वासवतस्तस्मात्प्राग्द्वारं स्याद्गृहं शुभम्।।१०३।।

कृत्तिका से तथा अनुराधासे सात सात नक्षत्र के क्रम से दक्षिणोत्तर द्वार शुभ है तथा मघा व धनिष्ठा से सात सात नक्षत्र के क्रम से पूर्व तथा पश्चिम में द्वार बनाना शुभ है।।१०३।।

द्वारे दीर्घविस्तारम्–

गेहोच्चस्य चतुर्थांशो द्विगुणो द्वार उच्छ्रय:।।१०४।।

गृह की ऊँचाई की चौथाई से द्विगुणित द्वारकी ऊँचाई बनावे।।१०४।।

अथ चन्द्रसूर्यवेध–

गृहे ग्रामे तथा क्षेत्र तडागारामभूमिषु।
चन्द्रवेधस्तु कर्तव्य: सौर: काष्ठाग्निजीविनाम्।।१०५।।

गृह, ग्राम, क्षेत्र, तालाब, बगीचा और भूमि में चन्द्रवेध करने से शुभ है अर्थात् दक्षिण उत्तर लम्बाई करे काष्ठ और अग्नि जीविका वालों को सूर्यवेध यानी पूर्व पश्चिम लम्बाई करना चाहिए।।१०५।।

दीर्घविस्तारमान–

पूर्वपश्चिमतो दैर्घ्यं सपादं दक्षिणोत्तम्।
शुभावहं गृहं चौर्घ्वं सूर्यविद्धं न सौख्यदम्।।१०६।।

पूर्व पश्चिम की चौड़ाई की सवाई उत्तर दक्षिण की लम्बाई करे। जैसे चौड़ाई २१ लम्बाई २५ यह चन्द्रवेध शुभ है और सूर्यवेध अशुभ है।।१०६।।

अथ वृषभचक्रम—

शीर्षे वृषे गेहविधाविनर्क्षाद्दाहोग्निमिश्चाब्धिभिरग्रपादम्।
शून्य युगः पश्चिम गुणैः पृष्ठगतैर्धनाप्तिः।।१०७।।
लाभो युगैर्दक्षिणकुक्षियातेः पुच्छेग्निमिः सद्मपतेर्विनाशः।
वामैयुगैनिवचनना च कुक्षौ पीडा च पन्युर्मुखगैस्त्रिभिश्च।।१०८।।
रविभात्सप्त नेष्टानि शुभान्येकगदशाष्टभात्।
दश शेषान्यनिष्टानि साभिजिद्वृषवास्तुनि।।१०९।।

सूर्य के नक्षत्र से गृहारम्भ ऋक्षपर्यन्त इसी वृषभ के हरएक अंग पर नक्षत्रों को स्थापित करके फल विचारे। अर्थ चक्र से स्पष्ट है। सूर्य के नक्षत्र से ७ नक्षत्र अनिष्ट है। आठवें से ११ नक्षत्र शुभ है। १९ से १० नक्षत्र अशुभ हैं। अभिजित् सहित वृषवास्तु में विचार करे।।१०७-१०९।।

शीर्ष ३	अग्रपाद ४	पृष्ठपाद ४	सव्य कुक्षि	लांगूल ३	अपसव्य कुक्षि ४	मुख ३	पष्ठ ३	अंग
शून्य	स्थिर	धन प्राप्ति	लाभ	स्वामी नाश	निर्धन	स्वामी पीडा	दाह	फल

अथ तिथिविचार—

त्यक्त्वा चतुर्दशी षष्ठीं चतुर्थीमष्टमीममाम्।
नवमीं च रविं भौमं गृहारम्भो विपञ्चके।।११०।।
दारिद्र्यं प्रतिपत्कुर्याच्चतुर्थी धनहारिणी।
अष्टस्युच्चाटनञ्चैव नवमी शस्त्रघातिनी।।१११।।
दर्शे राजभयं ज्ञेयं भूते दारविनाशनम्।

गृहारम्भ में १४।६।८।३०।९ तिथि, रवि, भौमवार और पञ्चक वर्जित है। प्रतिपद में द्रारिद्र्य, ४ धनहानि, ८ उच्चाटन, ९ अस्त्रवात। ३० रोगभय, १४ स्त्री नाश यह तिथियों का फल है।।१०-१११।।

अथ वारविचार—

आदित्यभौमवारौ वै वर्ज्यौ चान्ये शुभप्रदाः।।११२।।

रवि मंगलवार वर्जित हैं। और शुभप्रद हैं।।११२।।

अथ ऋक्षविचार—

त्र्युत्तरामृगरोहिण्यां पुष्यमैत्रे करत्रये।
धनिष्ठाद्धितये पौष्णे गृहारम्भः प्रशस्ते।।११३।।
गृहायलब्धऋक्षे च यन्नक्षत्रेषु चन्द्रमाः।
शलाकासप्तकं देयं कृतिकादिक्रमेण च।।११४।।
वामदक्षिणभागे तत्प्रशस्तं शांतिकारकम्।
अग्रे पृष्ठे न दातव्यं यदीच्छेच्छ्रे यमात्मनः।।११५।।
ऋक्षश्चाद्रस्य वास्तोश्च अग्रे पृष्ठे न शस्यते।
पुरस्थे पृष्ठगे वास्तोः खनिः स्याद्विधुमे मृतिः।।११६।।

तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा, रेवती, अनुराधा, चित्रा, शतभिषा, स्वाती, धनिष्ठा, पुष्य, हस्त इन ऋक्षों में गृहारम्भ शुभ है। गृहाय से लब्धि ऋक्ष में जिस नक्षत्र का चन्द्रमा हो उस नक्षत्र को विचार कर कृत्तिकादि क्रम से सप्तशलाका चक्र में स्थापित करे। वाम और दक्षिण में चन्द्रर्क्ष पड़े तो शस्त तथा शांतिकारक है। यदि अपना कल्याण चाहे तो सम्मुख तथा षष्ठ में गृहारम्भ न करे। चन्द्रर्क्ष तथा वास्तवर्क्ष सम्मुख और पृष्ठ शुभ नहीं हैं। सम्मुख में पड़े तो चोरी जाय, पृष्ठ में पड़े तो स्वामी की मृत्यु हो।।११३-११६।।

रामेणोक्तम्—

देवालये गेहविधौ जलाशये राहोर्मुखं शम्भुदिशो विलोमतः।
मीनार्कसिंहार्कमृगार्कतस्त्रिभे खाते मुखात्पृष्ठविदिक्शुभाभवेत्। ११७

देवालय में, गृहारम्भ में और जलाशय में शम्भुदिशा (ईशानकोण) से विपरीत क्रम से राहु का मुख जानना। मीनार्क से देवालय में, सिंहार्कदि से गृह में, मृगार्कादि से जलाशय में ३-३ राशि के क्रम से राहु का मुख समझना। मुख से पृष्ठ की ओर जो कोण है, उसमें खात शुभ हैं।।११७।।

मासफल—

चैत्रे च व्याधिमाप्नोति यो नवं कारयेद्गृहम्।
९ वैशाखे धनरत्नानि ज्येष्ठे मृत्युं तथैव च।।११८।।

श्रावणे मित्रलाभं तु हानिं भाद्रपदे तथा।
युद्धं स्यादाश्विने मासे कार्तिके धनधान्यकम्।।११९।।
मार्गशीर्षे तथा वित्तं पौषे तस्करतो भयम्।।१२०।।
लाभं तु बहुशो विद्यादग्निं माघे विनिर्दिशेत्।
काञ्चनं फाल्गुने विद्यादिति मासफलं बुधैः।।१२१।।

जो नवीण गृह चैत्र में बनावे तो व्याधि हो, वैशाख में धन तथा रत्न की प्राप्ति हो, ज्येष्ठ में मृत्युकारक है। आषाढ़ में उत्तम मृत्यु तथा श्रेष्ठ पशु की हानि हो, श्रावण में मित्र से लाभ हो, भाद्रपद हानिकारक है। आश्विन युद्धप्रद है, कार्तिक धनधान्यदायक है, मार्गशीर्ष धन-वृद्धिकारक है, पौष में तस्कर से भय होता है। माघ में लाभ तो बहुत होता है परन्तु अग्नि से भय होता है, फाल्गुन लक्ष्मीवृद्धिकारक है।।११८-१२१।।

मतान्तर से सौरमासफल—

गृहसंस्थापने सूर्यो मेषस्थो शुभदो भवेत्।
वृषस्थे धनवृद्धिः स्यान्मिथुने मरणं भवेत्।।१२२।।
कर्कटे शुभदं प्रोक्तं सिंहे भृत्यविवर्द्धनम्।
कन्या रोगं तुला सौख्यं वृश्चिके धनवर्द्धनम्।।१२३।।
कार्मुके च महामानिर्मकरे स्याद्धनागमः।
कुम्भे तु रत्नलाभः स्यान्मीने सद्म भयावहम्।।१२४।।

इस वचन का फल चक्र से समझ लेवें। स्पष्ट रीति से लिखा है।।१२२-१२४।।

चक्रम्।

मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	सौर मास
शुभ	धन वद्धि	म ण कारक	शुभ	भृत्य विवर्द्धन	रोग दाता	फल
तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	सौर मास
सौख्य	धन वृद्धि	महा हानि	धन लाभ	रत्न दायक	भय दायक	फल

षोडशगृहविचार—

स्नानाग्निपाकशयनास्त्र भुजेश्चधान्यभाण्डारदैवतगृहाणिचपूर्वतः स्युः तन्मध्यनस्तुशयनाज्यपुरीषविद्याभ्यासाख्यपरोदनरतौषधसर्वधाम।

पूर्वादि दिशा से स्नानगृह पूर्व में , पाकगृह अग्निकोण मे , शयनगृह दक्षिण में, अस्त्रगृह नैर्ऋत्य में, भोजनगृह पश्चिम में, धान्यगृह वायव्य में, भण्डारगृह उत्तर में, देवतागृह ईशान में निर्मित करे। पुनः उसके मध्य में मंथनगृह, आज्यगृह, पुरीषगृह, विद्याभ्यासगृह, रोदनगृह, रतिगृह, औषधगृह, सर्वधामगृह, बनावे।।१२५।।

चक्रम् ।

देवता	सर्वधाम	स्नान	मंथन	पाक
औषध				आज्य
भण्डार				शयन
रति				पुरीय
धान्य	रोदन	भोजन	विद्याभ्यास	अस्त्र

अन्यदपि—

ईशान्यां देवतागेहं पूर्वस्यां स्नानमन्दिरम्।
आग्नेयां पाकसदनं भाण्डारागारमुत्तरे।।१२६।।
आग्नेयपूर्वयोर्मध्ये दधिमन्थनकं गृहम्।
आग्नेययास्ययोर्मध्ये आज्यगेहं प्रशस्यते।।१२७।।
याम्यनैर्ऋत्याम्बुपयोर्मध्ये पुरीषत्यागमन्दिरम्।
नैर्ऋत्याम्बुपयोर्मध्ये विद्याभ्यासाख्यमन्दिरम्।।१२८।।
पश्चिमवायुमध्ये च गृहं रोदनकं स्मृतम्।
वायव्योत्तरयोर्मध्ये रतिगेहं प्रशस्यते।।१२९।।

ईशानेंकोण में देवतागृह, पूर्व में स्नानगृह, अग्निकोण में पाकगृह, उत्तर में भण्डारगृह बनावे। अग्नि पूर्व के मध्य में मंथनगृह, तथा अग्नि और दक्षिण के मध्य में आज्यगेह बनावे। दक्षिण नैर्ऋत्य के मध्य में पुरीषत्यागगृह तथा

नैर्ऋत्य पश्चिम के मध्य में विद्याभ्यास गृह निर्मित करे। तथा पश्चिम और वायु के मध्य में रोदनगृह तथा वायव्योत्तर के मध्य में रतिगृह बनावे। ऊपर चक्र देखिए।।१२६-१२९।।

गृहवृद्धौ निषेधवाक्य—

इच्छेद्यदि गृहवृद्धिं ततः समन्ताद्विवर्द्धयते तुल्यम्।
एकोद्देशे दोषः प्रागथवाप्युत्तरे कुर्य्यात्।।१३०।।
प्राग्भवति मित्रवैरं मृत्युभयं दक्षिणेन यदि वृद्धिः।
अर्थविनाशः पश्चादुदग्विवृद्धो मनस्तापः।।१३१।।

यदि गृह वृद्धि करने की इच्छा हो तो चारों तरफ बराबर वृद्धि करे एक ओर बढ़ावे तो दोष है, पूर्व अथवा उत्तर वृद्धि करे। पूर्व में मित्र से बैर, दक्षिण में मृत्युभय, पश्चिम में अर्थनाश, उत्तर में मन में ताप होगा।।१३०।।

रामेणोक्तम्—

पूर्णेन्दुतः प्राग्वदनं नवस्यादिपूत्तरास्यं त्वथ पश्चिमास्यम्।
दर्शादितः शुक्लेदले नवस्यादौ दक्षिणास्यं न शुभं वदन्ति।।१३२।

पुनर्गर्गेणोक्तम्—

पूर्णिमातोऽष्टमीं यावत्पूर्वास्यं बर्जयेद्गृहम्।
उत्तरास्यं न कुर्वीत नवम्यादिचतुर्दशीम्।।१३३।।
अमाय अष्टमीं यावत्पश्चिमास्यं न कारयेत्।
दक्षिणास्यं न कुर्वीत यावच्छुलचतुर्दशीम्।।१३४।।

पूर्णिमा से अष्टमी तक पूर्वदिशा में द्वार अशुभ है, तथा नवमी कृष्ण १४ तक उत्तर द्वार अशुभ है। ३० से ८ तक पश्चिम द्वार अशुभ है। नवमी से शुक्ल १४ तक दक्षिण द्वार अशुभ है। विशेष बात चक्र से समझ लेवें।।१३२-१३४।।

निषिद्ध दिशाद्वार	विहित दिशाद्वार	तिथि
पूर्व	उत्तर दक्षिण पश्चिम	शुक्ल १५ से कृष्ण ८ तक
उत्तर	पूर्व पश्चिम दक्षिण	कृष्ण ९ से कृष्ण १४ तक
पश्चिम	पूर्व दक्षिण उत्तर	कृष्ण ३० से शुक्ल ८ तक
दक्षिण	पूर्व पश्चिम उत्तर	शुक्ल ९ से शुक्ल १४ तक

अथ जीर्णकाष्ठनिषेधः—

जीर्णगेहेषु यत्काष्ठं मोहाद्दत्वा नवे गृहे।
नानारोगमयं चैव धननाशं पशुक्षम्।।१३५।।

पुराने घर की लकड़ी नये घर में लगावे तो अनेक रोग तथा धननाश और पशुनाश होता है।१३५।।

अथ शिवाबलिः

शाक्रं चौरादिशङ्का हुतभुजि विविधक्लेशभीति च यास्ये
सौख्यं कल्याणवित्तं दितितनयदिशि स्वल्पकालस्थितिं च।
वारुण्यां वित्तलाभोऽनिलदिशि सुहृदामागमः स्थैर्यमेवं
सौम्ये शैवे नराणां प्रभवति मरणं वास्तुवेश्मप्रवेशे।।१३६।।
रात्रौ भक्तं मांसादिसंयुक्तं भूमौ निधाय ततः।
कियद्दूरे गत्वा तच्छब्दं चिन्तयेत्।।१३७।।

पूर्व में चौरादिक शङ्का होती है, अग्नि कोण में अनेक क्लेश भय हो तथा दक्षिण में सुख तथा कल्याण हो, धनलाभ हो, नैर्ऋत्य कोण में स्थिति अल्प हो, पश्चिम में धन लाभ हो, वायव्य में मित्र प्राप्ति हो, उत्तर में स्थिरता और सम्मान हो, ईशानकोण में मृत्यु हो यह वास्तुवेश्म प्रवेश में विचार करे। रात्रि में भात और मांस एकत्र करके भूमि पर स्थापित करे। बाद में कुछ दूर चले तब शब्द का चिन्तन करे कि किस दिशा में सियार का शब्द हुआ है।।१३६-१३७।।

वास्तुपुरुष नाभिज्ञान—

ऊर्ध्वभागे त्रयं त्यक्त्वाधोभागे तु द्वयं तथा।
मध्ये नाभिं विजनीयाच्छंते वामेन पन्नगः।।
पूर्वादिषु शिरः कृत्वा शेते भाद्रात्रिषु त्रिषु।।१३८।।
ईशानतः सर्पयति कालसर्पो विहाय सृष्टिं गणयेद्विदिक्षु।
शेषोस्य वास्तोर्मुखमध्यपुच्छं त्रयं परित्यज्य खनेच्चतुर्थम्।।१३९।।

अथ गृहारम्भे निषेधकाल—

मध्याह्ने तु कृतं वास्तु कर्तुर्वित्तविनाशमन्।
महानिशास्वपि तथा सन्ध्ययोर्नैव कारयेत्।।१४०।।

ऊर्ध्व भाग में तीन भांग त्याग दे, आधे भाग में दो भाग त्याग दे, मध्य भाग में नाभि जाने, वामावर्त्त से पन्नग शयन करता है। भाद्रपद से ले करके तीन-तीन मास पूर्वादिक दिशा में शिर रहता है। ईशान कोण से वामावर्त्त कालसर्प चलता है। कोण से गिनती करे शेष वास्तु का मुख है। सो मुख, मध्य, पुच्छ तीनों छोड़ कर चतुर्थ भाग में कोण के और अग्रिम दिशा के मध्य में खात करे। मध्याह्न में गृहारम्भ करने से स्वामी तथा धन का नाश होता है और अर्द्धरात्रि में भी वही फल है। दोनों सन्ध्या में गृहारम्भ वर्जित है।।१३८-१४०।।

अन्यच्च—

कृत्यं वेश्म भवं द्विदैववितं रात्रौ प्रवेशः कचित्।।१४१।।
देशे ग्रामे गृहे युद्धे सेवायां व्यवहारके।
नामराशेः प्रधानत्वं जन्मराशिं न चिन्तयेत्।।१४२।।
विवाहे सर्वयज्ञेषु यात्रायां ग्रहगोचरे।
जन्मराशेः प्रधानत्वं नामराशिं न चिन्तयेत्।।१४३।।

गृहकृत्य दिन में शुभ है तथा गृहप्रवेश लग्नाभाव में रात्रि में भी क्वचित् हो सकता है। देश, ग्राम, गृह, युद्ध तथा सेवा (नौकरी) एवं व्यवहार में नाम राशि को ही प्रधान करे, जन्मराशि की चिन्ता न करे। विवाह में, सब यज्ञों में और यात्रा में ग्रहगोचर में जन्मराशि प्रधान करे, नामराशि की चिन्ता न करे।।१४१-१४३।।

पूर्व	अग्नि	दक्षिण	नैर्ऋत्य	दिशा
शुभ	मृत्यु	निर्धन	क्षय	फल
पश्चिम	वायव्य	उत्तर	ईशान	दिशा
पुत्रनाश	सुख	राज्य संपदा	धन	फल

जलवहनमार्गम—

पूर्वे वाहे धनं किंचिदग्निकोणे धनक्षयः।
याम्ये रोगभयं विद्यान्नैर्ऋते कलहागमः।।१४४।।
पश्चिमे मरणं सूनोर्वायव्ये बन्धुदर्शनम्।
उत्तरे सर्वसिद्धिः स्यादीशान्ये सुखसम्पदा।।१४५।।

पूर्व में नाबदान बनाने से कुछ धन, अग्निकोण में धनक्षय दक्षिण में रोगभय, नैर्ऋत्य में कलह, पश्चिम में पुत्रनाश, वायव्य में बन्धुदर्शन, उत्तर में सर्वसिद्धि, और ईशान में, सुख तथा सम्पत्ति होती है।।१४४-१४५।।

अथ कूपविचारः—

रोहिण्यर्क्षाद्भौमभात्सूर्य्यभाच्च राहो ऋक्षाद्गण्यते कूपचक्रम्।
यस्मिन्काले सर्वमेतत्प्रशस्तं तस्मिन्भूमौनिर्जलेस्याज्जलत्वम् १४६

रोहिणी नक्षत्र से, भौम ऋक्ष से, सूर्यर्क्ष से और राहु नक्षत्र से कूपचक्र का विचार करे। जिस समय चारों चक शुद्ध होयँ उस समय कूपारम्भ करने से निर्जल भूमि भी सजल हो जाती है।

अथ रोमेणोक्तराहुभात्कूप चक्रम—

राहुऋक्षात्रयं पूर्वे त्रयमग्नौ ततः क्रमात्।
मध्ये चत्वारि देयानि फलं तस्य विचारयेत्।।१४७।।
पूर्वे शोककरो राहुराग्नेय्यां जलसम्पदा।
दक्षिणे स्वामिमरणं नैर्ऋत्ये दुःखदायकम्।।१४८।।
पश्चिमे सजलं प्रोक्तं वायव्ये बालुका तथा।
उत्तरे निर्जलं वारि ईशान्ये च समुद्रवत्।।१४९।।
मध्ये स्वल्पजलं वाच्यं नान्यथा गणकोत्तमैः।।१५०।।

राहु के नक्षत्र से तीन तीन पूर्वादि दिशाओं में और चार नक्षत्र मध्य में स्थापित करे, शुभांशुभ फल का विचार चक्र के अनुसार करे।।१४६-१५०।।

पूर्व	अग्नि	दक्षिण	नैर्ऋत्य	पश्चिम	दिशा
३ शोक	३ जल सम्पत्ति	३ स्वामी मरण	३ दुःख	३ सजल	नक्षत्र फल

वायव्य	उत्तर	ईशान	मध्य	दिशा
३ बालुका	३ निर्जल	२ समुद्रवत्	४ स्वल्प जल	नक्षत्र फल

अथ रविभात्कूपचक्रम—

सजलखण्डजले सजलाजले शुभजलं लवणं च शिलाजले।
लवणमुष्णकरादिषु भेष्वपि नवफलानि विदुस्त्रितयोडुभिः।।१५१।।

सूर्य के नक्षत्र से ३-३ नक्षत्र सब दिशाओं में स्थापित करे और शुभाशुभ फल का विचार चक्र से करे।।१५१।।

पूर्व	अग्नि	दक्षिण	नैर्ऋत्य	पश्चिम	दिशा
३	२	३	३	३	नक्षत्र
सजल	खण्ड जल	सजल	अजल	शुभजल	फल

वायव्य	उत्तर	ईशान	मध्य	दिशा
३	३	३	३	नक्षत्र
लवण जल	शिला जल	लवण जल	शिला जल	फल

अथ भौमभात्कूपचक्रम्—

शशिशरेषुत्रिद्व्यब्धिगुणाब्धयः बहुजलं च सुसिद्धिरभङ्गदम्।
रुजमसिद्धियशोऽर्थप्रसिद्धिदं जलविभङ्गकरः कुजभादिति।।१५२।।

मङ्गल के नक्षत्र से इस चक्र के अनुसार वर्तमान नक्षत्र तक गणना करके शुभाशुभ का विचार करना चाहिये।।१५२।।

भौमचक्रम्—

नक्षत्र	१	५	५	३
फल	बहुजन	सुसिद्धि	अभंगद	रुज
नक्षत्र	२	४	३	४
फल	असिद्धि	यश, अर्थ	प्रसिद्धि	जलभंग

अथ रोहिणीभात्कूपचक्रम्—

रोहिण्यादि लिखेच्चक्रं यावत्तिष्ठति चन्द्रमाः।
मध्ये चन्द्रं द्वयं (२) पूर्वे तृतीयं (३) चाग्निकोणके।।१५३।।

याम्येतु बाण (५) संज्ञं स्यान्नैर्ऋत्ये रसमेव (६) च।
पश्चिमे युगलं (२) वायौ युगलं (२) त्रय (३) मुत्तरे।।१५४।।
ईशान्ये त्रीणि (३) देयानि ब्रह्मऋक्षादनुक्रमात्।
मध्ये शीघ्रं जलं स्वादु पूर्वे भूमौ च खण्डनम्।।१५५।।
आग्नेय्यां सजलं प्रोक्तं याम्ये च निर्ज्जलं भवेत्।
नैर्ऋत्ये सजलं प्रोक्तं पश्चिमे क्षारमेव च।।१५६।।
वायव्ये चैव पाषाणमुत्तरे च समुद्रवत्।
ईशाने कटुकं वारि कूपचक्रं विचारयेत्।।१५७।।

रोहिणी से लेकर जिस नक्षत्र का चंद्रमा हो वहाँ तक लिखकर पृष्ठ संख्या १२६ के चक्र के समान शुभाशुभ फल जानें।।१५३-१५७।।

अथ रामोक्तगेहदेशान्यादौकूपफलम्—

कूपे वास्तोर्मध्यदेशेऽर्थनाश-
स्त्वैशान्यादौ पुष्टिरैश्वर्यवृद्धिः।
सूनोर्नाशः स्त्रीविनाशो मृतिश्च
सम्पत्पीडा शत्रुतः स्याच्च सौख्यम्।।१५८।।

वास्तु (गृह) के मध्य में कूप बनावे तो धननाश हो, ईशान में पुष्टि, पूर्व में धनवृद्धि, अग्निकोण में पुत्रनाश, दक्षिण में स्त्री नाश, नैर्ऋत्य में मृत्यु, पश्चिम में सम्पत्ति, वायव्य में शत्रु से पीड़ा, उत्तर में सुख होता है।।१५८।।

रोहिणीभात्कूपचक्रम्—

मध्य	पूर्व	अग्नि	दक्षिण	नैर्ऋत्य	पश्चिम	वायव्य	उत्तर	ईशान	दिशा
१	२	३	५	६	२	२	३	३	नक्षत्र संख्या
शीघ्र जल सुस्वाद	खण्ड जल	सजल	निर्जल	सजल	क्षार जल	पाषाण	समुद्र वत् जल	कटु जल	फल
रोहिणी	मृग आर्द्रा	पुन. पुष्य. श्ले.	म. पू. उ. फा. ह. चि.	स्वा.वि. अनु.ज्ये. मू.पू.षा.	उ.षा. श्र.	धनि. श.	पू. भा. उ. भा. रेवती	अश्वि. भर. कृत्ति.	नक्षत्र नाम

अथ कूपविषये वसिष्ठोक्ति—

ऐश्वर्यं पुत्रहानिश्च स्त्रीनाशो निधन भवेत्।
सम्पच्छत्रुभयं सौख्यं पुष्टिः प्रागदितः क्रमात्।।
मध्ये भागे कृते कूपे धनहानिश्च निश्चयात्।।१५९।।

इसका अर्थ चक्र के अनुसार समझ लेवें।।१५९।।

पूर्व	अग्नि	दक्षिण	नैर्ऋत्य	पश्चिम	वायव्य	उत्तर	ईशान	मध्य	दिशा
धन प्राप्ति	पुत्र नाश	स्त्रीनाश	मरण	संपत्ति	शत्रुभय	सौख्य	पुष्टि	धन नाश	फल

अथ निवारचक्रम—

निवारे पूर्वतस्त्रीणि त्रीणि त्रीणि च सर्वतः।
मध्ये चत्वारि देयानि राहुभाद् गणयेद् बुधः।।१६०।।
मध्ये पूर्वे जलं सौख्यं चोत्तरे धनवर्द्धनम्।
याम्यनैर्ऋत्ययोर्दुःखं भयमग्नौ परेऽनिले।।१६१।।

अब नेवार का विचार कहते हैं। राहु के ऋक्ष से पूर्वादि दिशा में तीन-तीन नक्षत्र स्थापित करे। शुभाशुभ फल का विचार चक्र के अनुसार करे।।१६०-१६१।।

पूर्व	अग्नि	दक्षिण	नैर्ऋत्य	पश्चिम	वायव्य	उत्तर	ईशान	मध्य	दिशा
सुख	भय	दुःख	दुःख	भय	भय	धन	भय	सुख	फल

अथ कोल्हूचक्रम्—

मूले चैकं हृदि सप्त शिखायां नवभं तथा।
रज्जुमध्ये त्रयं दद्यात्कर्तरी सप्त कीर्तिताः।।१६२।।
मूले च प्राणनाशाय हृदयेऽर्थप्रवर्द्धनम्।
शिखामग्निभयं कुर्याद्रज्जुमध्यः शुभावहः।।१६३।।
कर्तरीवृषभादीनां नाशं सम्यग्विचारयेत्।
गर्गाचार्य्येण सम्प्रोक्तं कोल्हूचक्रं विशेषके।।१६४।।

मूल में १ नक्षत्र, हृदय में ७ नक्षत्र और शिखा में ९ नक्षत्र स्थापित करे। फल का विचार चक्र में करे।।१६२-१६४।।

मूल	हृदय	शिखा	रज्जु	कर्तरी	स्थान
१	७	९	३	७	ऋक्ष
प्राणनाश	धनवृद्धि	अग्निमय	शुभ	वृषभनाश	फल

अथ तडाग चक्रम्—

सूर्य्यभाद् गणयेद्यावच्चन्द्रभं सर्वदा बुधैः।
दिक्षु दिक्षु द्वयं न्यस्य मध्ये पञ्च नियोजयेत्।।१६५।।
षड् ऋक्षं वारिवाहे च फलं तस्य विचारयेत्।
पूर्वस्यां वारिशोकः स्यादाग्नेय्यां सलिलं बहु।।१६६।।
दक्षिणस्यां वारिनाशो नैर्ऋत्याममृतं जलम्।
पश्चिमायां जलं स्वादु वायव्ये वारिशोषणम्।।१६७।।
उत्तरस्यां स्थितं तोयमैशान्यां कुत्सितं जलम्।
मध्ये पूर्णजलं स्वादु वारि चामृतमेव च।।१६८।।

सूर्य नक्षत्र से चंद्र नक्षत्र तक गणना कर तडाग चक्र में शुभाशुभ फल का विचार करे। चक्र से अर्थ स्पष्ट है।।१६५-१६८।।

पूर्व	अग्नि	दक्षिण	नैर्ऋत्य	पश्चिम	स्थान
२	२	२	२	२	ऋक्ष
वारि शोक	बहु जल	जल नाश	अमृत जल	स्वादु जल	फल
वायव्य	उत्तर	ईशान	मध्य	वारि वाह	स्थान
२	२	२	५	६	ऋक्ष
जल शोषण	स्थिर जल	कुत्सित जल	पूर्ण	अमृत जल	फल

अथ तडागमुहूर्तः—

रोहिणी चोत्तरात्रीणि पुष्यं मैत्रं च वारुणम्।
पिंत्र्यं च वंसुदैवत्यं भगणो वारिबन्धने।।१६९।।

रोहिणी, तीनों उत्तरा, पुष्य, अनुराधा, पूर्वाषाढ़, मघा, धनिष्ठा ये नक्षत्र वापी आदि में शुभ हैं।

अथ जलाशयारम्भमुहूर्तः—

अनुराधामघाहस्ते रेवतीषूत्तरात्रये।
रोहिणीयुगले पुष्ये धनिष्ठाद्वितये तथा।।१७०।।
पूर्वाषाढ़भिधे ऋक्षे शुभं मासि शुभे दिने।
वापीकूपतडागानामारम्भः शुभदः स्मृतः।।१७१।।

जलाशय के हेतु अनुराधा, मघा, हस्त, रेवती, उत्तरा, तीनों रोहिणी, मृगशिरा, पुष्य, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाषाढ़ ये नक्षत्र श्रेष्ठ हैं तथा शुभ मास और शुभ दिन में वापी, कूप और तालाब का आरम्भ करना चाहिये।।१६९-१७१।।

अथेष्टिकारम्भे सुधालेपेच नक्षत्रादिविचारः—

उत्तराश्विश्रुतौ पुष्ये ज्येष्ठान्ते रोहिणीकरे।
स्थिरेऽङ्गके गुरौ मन्दे इष्टिकारम्भणं चरेत्।।१७२।।
तथा गेहे सुधालेपः इष्टिकारम्भसादिषु।।१७३।।

तीनों उत्तरा, अश्विनी, श्रवण, पुष्य, ज्येष्ठा, रेवती, रोहिणी, हस्तं ये नक्षत्र आदि स्थिर लग्न और रवि, गुरु तथा शनिवार को ईंट बनाने आरम्भ करे और इन्हीं नक्षत्रादिकों में मकान आदि का लेप (छुवाई-पुताई) का आरम्भ भी करना चाहिये।।१७२-१७३।।

अथेष्टिकानिर्माणम्—

पञ्च त्रीणि त्रिकं पञ्च सप्त पञ्चार्कभात्।
सौख्यं मृत्युः क्रमेणैव इष्टिकारम्भणे मतम्।।१७४।।

इसका अर्थ चक्र से जानना चाहिए।।१७४।।

५	३	३	५	७	५	ऋक्ष
सौख्य	मृत्यु	सौख्य	मृत्यु	सौख्य	मृत्यु	फल

इष्टिकायामग्निदाहविचार:—

गिरिवाणमु निर्विधिवाण तथा दुःखदोऽप्यथ लाभरुजोप्यशुभः।
सुखदः खलु इष्टिकाग्निविधौ कुजभादिति श्रेष्ठबुधैः कथितः।१७५।

ईंट में अग्नि लगाने का विचार चक्र में भौम के ऋक्ष से है। इसका भी विचार करना चाहिए।।१७५।।

७	५	७	४	५	ऋक्ष
शोक	लाभ	रोग	भय	सुख	फल

अथ बुध भादिष्टिकानिस्सारणचक्रम्—

त्रिकं पञ्च त्रिकं चैव सप्त पञ्च चतुर्थकम्।
शुभाशुभं क्रमेणैवमिष्टिनिस्सारणं बुधात्।।१७६।।

बुध के ऋक्ष से ईंट वर्तमान नक्षत्र तक निकालने के मुहूर्त का विचार करे। शुभाशुभ फल चक्र के अनुसार जानें।।१७६।।

३	५	३	७	५	४	नक्षत्र
सौख्य	मृत्यु	सौख्य	मृत्यु	सौख्य	मृत्यु	फल

अथ शल्योद्धारार्थमहिवलचक्रम—

अहिचक्रं प्रवक्ष्यामि यथा सर्वज्ञभाषितम्।
द्रव्यं शल्यं तथा शून्यं येन जानन्ति साधकाः।।१७७।।
ऊर्ध्व रेखाष्टकं लेख्यं तिर्यक्पञ्चक्रमेण च।
अहिचक्रं भवत्येवमष्टाविंशतिकोष्ठकम्।।१७८।।
तत्र पौष्णाश्वियाम्यर्क्ष कृत्तिकामघभाग्यभम्।
उत्तराफाल्गुनीलेख्यं पूर्वपंक्त्यां भसप्तकम्।।१७९।।
अहिर्बुध्न्याऽजपादर्क्ष श्नतभं ब्राह्मसार्पभम्।
पुष्यं हस्तं समालेख्यं द्वितीयां पंक्तिसंस्थितम्।।१८०।।
विधिर्विष्णुर्धनिष्ठाख्यं सौम्यं शिवपुनर्वसू।
चित्राभं च तृतीयायां पंक्तौ धिष्णस्य सप्तकम्।।१८१।।

विश्वभं तोयभं मूलं ज्येष्ठां मैत्रविशाखके।
स्वाती पंक्त्या चतुर्थ्यां तु कृत्वा चक्रं विलोकयेत्।।१८२।।

अथ अहिबलचक्र को कहते हैं जिससे द्रव्य, शल्य तथा शून्य के भेद को साधक जान लेवें। ऊपर से नीचे को आठ रेखा खींचे और तिरछी यानी बेंड़ी पाँच रेखा खींचे। इस तरह अट्ठाईस कोठा का सर्पचक्र होगा। उसमें रेवती, अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, मघा पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, ये सात नक्षत्र प्रथम पंक्ति में लिखे। उत्तराभाद्रपद, पूर्वाभाद्रपद, शतभिषा, रोहिणी, आश्लेषा, पुष्य, हस्त, ये सात नक्षत्र द्वितीय पंक्ति में लिखे। अभिजित्, श्रवण, धनिष्ठा, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, चित्रा ये सात नक्षत्र तृतीय पंक्ति में लिखे। उत्तराषाढ़, पूर्वाषःढ़, मूल, ज्येष्ठा, अनुराधा, विशाखा और स्वाती ये सात नक्षत्र चतुर्थ पंक्ति में लिखे।।१७७-१८२।।

द्वारशाखा मघायाम्यं द्वारस्था कृत्तिका मता।
एवं प्रचालिते चक्रे प्रस्तारः पन्नगाकृतिः।।१८३।।
अश्वीशपूर्वाषाढादित्रिकं पञ्चचतुष्टय्।
रेवतीपूर्वाभाद्रेन्दोर्भानि शेषाणि भास्वतः।।१८४।।
उदयादिगता नाड्यो भघ्नाः षष्टयाप्तशेषके।
दिनेन्दुभुक्तियुक्तोऽसौ भवेत्तत्कालचन्द्रमाः।।१८५।।
चन्द्रवत्साधयेत्सूर्य्यमृक्षस्थं चेष्टकालिकम्।
पश्चाद्विलोकयेतौ तु स्वर्क्षे वा चान्यभे स्थितौ।।१८६।।
चन्द्रर्क्षे च यदार्केन्दू तदास्ति निश्चितं निधिः।
भान्वर्क्षेए स्थितौ तौ तु शल्यं भवति नान्यथा।।१८७।।
स्वस्वभे द्वितीयं ज्ञेयन्नास्ति किञ्चिद्विपर्य्यये।
स्थितं न लभते द्रव्यं चन्द्रे क्रूरग्रहान्विते।।१८८।।

इस तरह चक्र का प्रस्तार बनाने से सर्पाकृति होगी। द्वार की शाखा में मघा और भरणी नक्षत्र रहेगा और द्वार में कृत्तिका नक्षत्र रहेगा। अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वाषाढ़, उत्तराषाढ़, अभिजित्,

श्रवण, रेवती, पूर्वाभाद्रपद ये चन्द्रमा के नक्षत्र हैं। इनके अतिरिक्त जो नक्षत्र हैं वे सूर्य के हैं अर्थात् रोहिणी, मृगशिरा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, धनिष्ठा, उत्तराभाद्रपद ये सूर्य के नक्षत्र हैं। उदयादि गत नाड़ियों को २७ से गुणै, ६० से भाग ले; शेष में गत नक्षत्र जोड़ दे तो स्पष्ट चन्द्र तात्कालिक होगा। चन्द्रमा की तरह सूर्य भी तात्कालिक बनावै पीछे स्वऋक्ष में अथवा अन्य ऋक्ष में स्थित होना देखे। चन्द्रमा के नक्षत्र में जो सूर्य और चन्द्रमा हों तो निश्चय द्रव्य है और सूर्य के नक्षत्र में दोनों हों तो शल्य है, इससे अन्यथा नहीं है। अपने-अपने नक्षत्र में हों तो दोनों कहना, कुछ विपरीत हो तो कुछ है। यदि चंद्रमा, क्रूरग्रह से युक्त हो तो स्थित द्रव्य भी नहीं मिले।।१८३-१८८।।

रे.	अ.	भ.	कृत्तिका	म.	पू. फा.	उ. फा.
उ. भ.	पू. भा.	श.	रोहिणी	ऽश्ले.	पु.	ह.
अ.	श्र.	ध.	मृगशिरा	आ.	पु.	चि.
			शरा			
उ. षा.	पू. षा.	मू.	ज्ये.	ऽनु.	वि.	स्वा.

अथ दिकसाधनं—

वृत्ते समभूगतो तु केन्द्रस्थितशङ्कोः क्रमशोः विशत्यपैति।
छायाग्रमिहापरा च पूर्वा ताभ्यां सिद्धतिमेरुदक्च याम्या।।१८९।।

अथ गृहप्रवेशेनक्षत्राणि—

त्र्युत्तरे चानुराधायां रेवत्यां रोहिणीद्वयम्।
चित्रायां प्रविशेद्गेहं द्वारभे तु विशेषतः।।१९०।।

तीनों उत्तरा, अनुराधा, रेवती, रोहिणी, मृगशिरा, चित्रा इन नक्षत्रों में तथा द्वारर्क्ष में विशेष करके गृहप्रवेश शुभ है।।१८९-१९०।।

जीर्णगृहप्रवेशः—

धनिष्ठाद्वितये पुष्ये त्र्युत्तरे रोहिणीद्वये।
चित्रास्वात्यनुराधान्त्ये प्रवेशो जीर्णमन्दिरे।।१९१।।

धनिष्ठा, शतभिषा, पुष्य, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा, चित्रा, स्वाती, अनुराधा, रेवती इन नक्षत्रों में जीर्णगृह में प्रवेश शुभ है।।१९१।।

गृहप्रवेशे तिथिविचारः—

प्रवेशे प्राङ्मुखे पूर्णा नन्दा याम्यमुखे शुभा।
भद्रा प्रत्यङ्मुखेऽथोदङ्मुखे गेहे तथा जया।।१९२।।

पूर्व मुख के गृह में पूर्णा तिथि में, दक्षिण मुख के गृह में नन्दा तिथि में, पश्चिम मुख के गृह में भद्रा तिथि में तथा उत्तर मुख के गृह में जया तिथि में प्रवेश शुभ है।।१९२।।

राजयोगः—

पुष्य ध्रुवेन्दुहरि-सर्प-जलैः सजीवै-
स्तद्वासरेण च कृतं सुतराज्यदं स्यात्।
एभिः कृतं च भवनं सततं शुभं च
लक्ष्म्यायुत विविधमानयशः प्रदं स्यात्।।१९३।।

श्रवण, पूर्वाषाढ़, रोहिणी, तीनों उत्तरा इन नक्षत्रों में और वृहस्पति वार में गृहारम्भ करने से राज्ययोगकारक है। उस घर में उत्पन्न पुत्र को निश्चय राज्य प्राप्त हो तथा गुरुवार से युक्त पूर्वोक्त नक्षत्रों में गृहारम्भ करने से लक्ष्मीयुक्त गृह कहना चाहिये।।१९३।।

गृहदशाज्ञानम्—

अक चट तप यश वर्गाः पूर्वादीनां दिशां ज्ञेयाः।
तेषां वसुशर रस युग शशि-गुणवाहव; क्रमादङ्का।।१९४।।

पूर्व दिशादि से आठ, पाँच, छः, चार, सात, एक तीन, दो ये स्वर हैं। क्रम से रवि, चन्द्रमा, मंगल, बुध शनि, वृहस्पति, राहु, शुक्र ये ग्रह दशापति होंगे। गाँव का स्वर, दिशा का स्वर एकत्र करके आठ से भाग देवै जो शेष बचै सो पूर्वोक्त रव्यादि की दशा होगी।।१९४।।

अथ दशाविचारे विशेषः—

देवालयात्तडागाद्वा ह्या रामाद्वा नृपालयात्।
मुख्यग्रामात्स मीपस्थादेषु चिन्त्या दशा बुधैः।।१९५।।

मुख्य ग्राम से, देवगेह से, तालाब से, बगीचा से, राजा के मकान से इन सबमें जो समीप हो उसीसे घरवाले की दशाका विचार करे।।१९५।।

पुनरपि आय व्यय विचारः—

नामराशेरधीशो यो तस्माच्चिन्त्याः दिशाथ वा।
गृहर्क्ष च गजैस्तष्टमुदितश्च व्ययो बुधैः।।१९६।।

राशि का स्वामी जो ग्रह हो उसकी जो दिशा हो उस दिशा के वर्ग का विधान करै। गृह नक्षत्र को आठ से भाग देवे जो शेष बचे सो व्यय होगा।।१९६।।

अथ सम्मुखाराहुविशेषः—

यस्यां दिशि यदा राहुस्तस्यां द्वारं न कारयेत्।
प्रवेशः सम्मुखे राहौ नैव कार्यः कदाचन।।१९७।।

जिस दिशा में जब राहु रहे उस दिशा में द्वार न बनावे और सम्मुख राहु में गृह प्रवेश न करे।।१९७।।

अथ गृहप्रवेशमुहूर्तः—

आश्लेषां च विशाखया सह मघां पूर्वात्रयं याम्यभं
रिक्तां सूर्यकुजौ विहाय च कुहुं वेश्यप्रवेशः शुभः।
गोसिंहलिघटस्तथैव धवलः पक्षः प्रशस्तोऽधिको
मध्या मन्मथचापमीनवनिता मासास्तु वास्तूदिताः।।१९८।।

आश्लेषा विशाखा मघा तीनों पूर्वा भरणी नक्षत्र, रिक्ता तिथि, रवि, भौमवार, अमावस्या इन सबों को छोड़कर अन्य तिथि नक्षत्रवार में, वृष, सिंह वृश्चिक कुम्भ मिथुन धन मीन कन्या लग्नों में तथा वास्तु के लिये कथित मासों में गृहप्रवेश शुभ है।।१९८।

इति गृहारम्भगृहप्रवेशप्रकरणम्—



अथ प्रकीर्णप्रकरणम्

अथ जलाशयखननमूहूर्तः

चित्रा युगे करपौष्णयुगेनदी मित्रधनोत्तरधातृजलेशे।
पुष्यमघादितिभे शुभवारे चैपु खनेत्सलिलाशयमिष्टम्।।१।।

चित्रा स्वाती हस्त रेवती अश्विनी मृगशिरा अनुराधा धनिष्ठा तीनों उत्तरा रोहिणी शतभिषा पुष्य मघा पुनर्वसु इन नक्षत्रों में शुभग्रहों के वारों में जलाशय खनवाना शुभ है।।१।।

अथ देवादि प्रतिष्ठामुहूर्तः-

प्राजेशशक्रहरिहस्तसमीरणेषु
मूलेन्दुमैत्रगुरुपौष्णाशिवोत्तरेषु
शस्ते दिने शुभतिथौ शशिनि प्रवृद्धे
धन्यां वदिन्त निखिलां शुभदां प्रतिष्ठाम्।।२।।

रोहिणी ज्येष्ठा श्रवण हस्त स्वाती मूल मृगशिरा अनुराधा पुष्य रेवती आर्द्रा तीनों उत्तरा, इन नक्षत्रों में और शुभ ग्रह के दिनों में शुभ तिथि में शुक्लपक्ष में देवादि की प्रतिष्ङ्घा शुभ है।।२।।

विशेष

गीर्वाणाम्बुप्रतिष्ठा-परिणयदहनाधानगेहप्रवेशा-
च्चौलं राज्याभिषेको व्रतमपि शुभदं नैव याम्यायने स्यात्।
नो वा बाल्यास्तवार्धे सुरगुरु सितयोर्नैव केतूदये स्यात्
न्यूने मासेऽधिके वानहि च सुरगुरौ सिंहनक्रस्थिते वा।।३।।

देवता, तड़ाग आदि की प्रतिष्ठा, विवाह, अग्निहोत्र, गृहप्रवेश चूडाकरण, राज्याभिषेक, उपनयन ये कर्म याम्यायन, बृहस्पति शुक्र के अस्त बाल्य वार्धक्य, केतु के उदय, क्षयमास अधिमास तथा सिंह मकरस्थ बृहस्पति इनमें न करना चाहिये।।३।।

पाकारम्भे चुल्हिकास्थापनमुहूर्तः

गृहप्रवेशवारादौ पाकारम्भोऽपि शस्यते।
तत्रैव रविवारेऽपि चुल्हिकास्थापनं शुभम्।।४।।

गृहप्रवेश में कहे हुए दिनादि में प्रथम पाकारम्भ करना शुभ है। तथा गृहप्रवेश मुहूर्त और रविवार में भी चुल्हिका स्थापन शुभ है।।४।।

मार्जनीबन्धनमुहूर्तः

श्रवणादीनि षड्भानि त्यक्त्वाऽर्कशनिमङ्गलान्।
विरिक्तसङ्क्रमे वारे मार्जनीबन्धनं शुभम्।।५।।

नष्टवस्तु प्राप्तिविमर्शः

तिथिवारं च नक्षत्रं प्रहरेण समन्वितम्।
दिक्संख्यया हतञ्चैव सप्तभिर्विभजेत्पुनः।।६।।
एकेन भूतले द्रव्यं द्वये चेद्भाण्डसंस्थितम्।
तृतीये जलमध्यस्थमन्तरिक्षे चतुर्थके।।७।।
तुषस्थं पञ्चमे तु स्यात् षष्ठ गोमयमध्यगम्।
सप्तमे भस्ममध्यस्थमिचत्येतत्प्रश्नलक्षणम्।।८।।

तिथि, चार और नक्षत्र एकत्रित कर और उसमें प्रहर की भी संख्या मिलाकर आठ से गुणाकरे। फिर उसमें सात से भाग देने पर यदि एक शेष बचे तो खोई वस्तु जमीन में गड़ी समझे, दो बचे तो नष्ट वस्तु किसी बर्तन में रखी जाने. तीन शेष बचे तो पानी में समझे, चार शेष बचे तो कहीं आकाश आदि में छिपाई हुई समझ, पाँच शेष बचे तो नष्ट वस्तु भूसी में छिपाई जाने छ शेष बचे तो गोबर में छिपी जाने और सात शेष बचे तो नष्ट वस्तु को राख में छिपाई समझे।।६-८।।

दिवारात्रिमुहूर्ताः

शिवोऽहिमित्र पितरो वस्वम्बू विश्ववेधसः।
विधिरिन्द्रोऽथ शक्राग्नी रक्षोऽब्धीशोऽर्यमा भगः।।९।।
मुहुर्त्तेशा इमे प्रोक्ता दिवा पंचदश क्रमात्।
मुहूर्त्ता रजनौ शम्भुरजैकचरणात्त्रयः।।१०।।

हस्तात्पंचादितिर्जीवो विश्वकौ तक्षमारुतैः।
दिनमानस्य तिथ्यंशो रात्रेरपि मुहूर्तकाः।।११।।
नक्षत्रनाथतुल्येऽस्मिन् स्थितं कुर्यात् स्वभोदितम्।
दिनमध्येऽभिजिन्मध्ये दोषसंघेषु सत्स्वपि।
सर्वं कुर्याच्छुभं कर्म याम्यदिग्गमनं विना।।१२।।

शिव, सर्प, मित्र, पितर, विश्वम्बु, विश्ववेधा, विधि, इन्द्र, शुक्र, अग्नि, रक्ष, अब्धि, ईश, अर्यमा और भग ये दिन के मुहूर्तेश माने गये है । बाकी इन श्लोकों का अभिप्राय निम्नलिखित चक्र से समझ लें।।९-१२।।

१	२	३	४	५	६	७	८
शिव	सर्प	मित्र	पितर	वसु	अम्बु	विश्व	विधि
आर्द्रा	श्लेषा	अनु	मधा	धनि.	पूषा	उषा.	अभि.
रुद्र	अजै	अहि	पूषा	दस्र	यम	अग्नि	ब्रह्मा
आ.	पूषा	उमा	रेवती	अश्वि	भर.	कत्ति.	रोहि.
९	१०	११	१२	१३	१४	१५	स
विधि	इन्द्र	इन्द्र	राक्षस	वरुण	अर्य	भग	मुहूर्त
रोहि	ज्ये.	वि.	मूल	शत	उ.	पू.	नक्षत्र
चन्द्र	आदि	गुरु	वि.	सूर्य,	त्वा	वायु	रा
मृग	पन.	पुष्य	श्रवण	हस्त	चि.	स्वा	नक्षत्र

अथ वारेषु त्याज्यमुहूर्ताः

अर्थमा भानुमद्वारे चन्द्रे हि विधिराक्षसौ।
पित्राग्नी कुजवारे तु चन्द्रपुत्रे तथाभिजित्।।१३।।
पितृब्राह्मौ भृगोवरि राक्षसाम्बू गुरोर्दिने।
रौद्रसार्पौ शनौ प्राज्ञैरिमे त्याज्या मुहूर्त्तकाः।।१४।।

रविवार के दिन उ० फा०, सोमवार को रोहिणी और मूल, मङ्गल वार को मघा तथा कृत्तिका, बुधवार को अभिजित् , गुरुवार को मूल तथा पूर्वाषाढ़, शुक्रवार को मघा तथा रोहिणी और शनिवार को आर्द्रा तथा आश्लेषा नक्षत्र त्याग देना चाहिये।।१३-१४।।

सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	वार
अर्य	ब्रह्मराक्षस	पितृ अग्नि	अभिजि.	राक्ष अबु	पितृ ब्रह्म	शिव सर्प	मु.
उ.फा.	रोहिणी	मघाकृत्ति	अभिजि.	मूल पूषा	मघा रो.	आर्द्रा श्ले	नं.
दिन	दिन	दिन ४	दिन ८	दिन १२	दिन ४८	दिन १।२	दि.
१४	रात्रि	रात्रि ७	रात्रि ७	रात्रि ९	रात्रि ९	रात्रि ४	रा.

अथ मद्यारम्भमुहूर्तः—

रौद्रे पित्र्ये वारुणे पौरुहूते याम्ये सार्पे नैर्ऋते चैव धिष्ण्ये।
पूर्वाख्येपु त्रिष्वपि श्रेष्ठ उक्तो मद्यारभ्भः कालविद्धिः पुराणः।।

आर्द्रा, मघा, शतभिषा, ज्येष्ठा, भरणी, आश्लेषा, मूल और तीनों पूर्वा इन नक्षत्रों में यदि मदिरा बनाने का कार्य किया जाय तो।।१५।।

अथ नूतनवस्त्रधारणमुहूर्ताः—

रोहिणीषु करपञ्चकेऽश्विभे त्र्युत्तरेऽपि च पुनर्वसुद्वये।
रेवतीषु वसुदैवते च भे नव्यवस्त्रपरिधानमिष्यते।।१६।।

रोहिणी, हस्त, चित्रा, स्वाती विशाखा, अनुराधा, अश्विनी, तीनों उत्तरा, पुनर्वसु, पुष्य, रेवती और धनिष्ठा, इन नक्षत्रों में नवीन वस्त्र पहनना उत्तम है।।१६।।

अथ मुक्तासुवर्णादि धारणमुहूर्तः—

नासत्यपौष्णवसुभे करपञ्चके च मार्तण्डभौमसुरमंत्रिशशांकवारे।
मुक्तासुवर्णमणिविद्रुमदंतशंखरक्ताम्बराणिविधृतानिभवंतिसिद्धयः।

अश्विनी, रेवती, धनिष्ठा, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा और अनुराधा इन नक्षत्रों और रवि, भौम, गुरु तथा सोमवार को मोती तथा सुवर्ण के अलंकार, मण्रि, मूँगा, हाथी दाँत तथा शंख की बनी कोई चीज और लाल वस्त्र पहनना सिद्धिदायक है।।१७।।

अथ रोगोत्पतौ विशेषः—

स्वातीश्लेषारौद्रपूर्वात्रयेषु शाक्रे भौमे सूर्यजे सूर्यवारे।
नन्दारिक्तास्वेवरोगस्य चाप्तिर्मृत्युर्ज्ञेयः शंकरैरक्षितोऽपि।।१८।।

स्वाती, आश्लेषा, आर्द्रा तीनों पूर्वा और ज्येष्ठा इन नक्षत्रों में, मङ्गल शनि एवं रविवार में नन्दा और रिक्ता तिथि में रोग उत्पन्न होने से रोगी की शिवजी रक्षा करें तो भी मृत्यु होती है।।१८।।

अथ रोगमुक्तिविचार:-

व्याध्युत्पत्तिर्यस्य पौष्णेशमैत्रे प्राणत्राणं जायते तस्य कृच्छ्रात्।
वैश्वे सौम्ये रोगमुक्तिस्तु मासाद्विंशत्या स्याद्वासराणां मघासु। १९।

रोग उत्पन्न होने के दिन रेवती वा अनुराधा नक्षत्र के होने से रोगी के प्राण कठिनता से बचते हैं। उत्तराषाढ़ वा मृगशिरा के होने से एक महिने तक और मघा के होने से रोगी बीस दिन तक कष्ट भोगता है।।१९।।

पक्षाद्धस्ते वासवे सद्विदैवे मूलाश्विन्योरग्निधिष्णे नवाह्नात्।
याम्ये त्वाष्ट्रे वैष्णवे वारुणे च नैरुज्यं स्यान्नूनमेकादशाहात्। २०।

हस्त नक्षत्र के होने से १५ दिन तक, धनिष्ठा, विशाखा, मूल, अश्विनी और कृत्तिका के होने से ९ दिन तक, भरणी, चित्रा, श्रवण और शतभिषा के होने से ११ दिन तक रोगी कष्ट भोगता है।।२०।।

अहिर्बुध्न्ये तिष्यसंज्ञे सभागे प्रजापत्यादित्ययोः सप्तरात्रात्।
रोगान्मुक्तिर्जायते मानवानां निःसंदिग्धं जल्पितं गर्गमुख्यैः। २१।

उत्तराभाद्रपद, पुष्य, पूर्वाफाल्गुनी, अभिजित् और पुनर्वसु नक्षत्र में रोग उत्पन्न होने से रोगी ७ दिन तक निश्चय कष्ट भोगता है यह गर्ग का मत है।।२१।।

अथ वाणिज्य मुहूर्तः-

अनुराधोत्तरापुष्ये रेवतीरोहिणीमृगे।
हस्तचित्राश्विभे कुर्याद्वाणिज्यं दिवसे शुभे।।२२।।

अनुराधा, तीनों उत्तरा, पुष्य, रेवती, रोहिणी, मृगशिरा, हस्त, चित्रा, अश्विनी और शुभ वार में वाणिज्य कर्म करना उत्तम है।।२२।।

अथ रोगमुक्तिस्नानमुहूर्तः-

इन्दोर्वारे भार्गवे च ध्रुवे च सार्पादित्यस्वातियुक्तेषुभेषु।
पित्र्येचांत्येचैवकुर्यात्कदाचिन्नैवस्नानं रोगमुक्तस्य जन्तोः।।२३।।

सोम, शुक्र, ध्रुवसंज्ञक नक्षत्र अर्थात् रोहिणी, तीनों उत्तरा, आश्लेषा पुनर्वसु तथा स्वाती नक्षत्र में रोगमुक्त मनुष्य को स्नान करना चाहिये। मघा, रेवती नक्षत्र में रोगमुक्त मनुष्य को स्नान करना ठीक नहीं।।२३।।

रोगमुक्तस्नानेलग्नविचारः—

लग्ने चरे सूर्यकुजेज्यवारे रिक्तातिथौ चन्द्रबले च हीने।
केन्द्रत्रिकोणार्थगते च पापे स्नानं हितं रोगविमुक्तिकानाम्।।२४।

ऊपर रोगमुक्त व्यक्ति के लिए नक्षत्र कह आये हैं। अब लग्न बतला रहे हैं- चर लग्न अर्थात् मेष, कर्क, तुला एवं मकर लग्न में रवि, मंगल तथा गुरुवार की रिक्ता तिथि में जब कि चन्द्रमा निर्बल हो और त्रिकोण केन्द्र तथा धन भाव में कोई पाप ग्रह न बैठा हो, उस समय यदि रोगी को स्नान कराया जाय तो अच्छा है।।२४।।

अथ धनुर्विद्यामुहूर्ताः—

अदितिगुरुयमार्कस्वातिचित्राग्निपित्र्ये
ध्रुवहरिवसुमूलाश्वीन्दुछभाग्यर्क्षकेषु।
विशनिशशिवुधेहर्विष्णुवोधेऽपि पौषे-
सुसयथतिथियोगे चापविद्या प्रशस्ता।।२५।।

पुनर्वसु, पुष्य, भरणी, हस्त, स्वाती, चित्रा, कृत्तिका, मघा, तीनों उत्तरा रोहिणी, धनिष्ठा, मूल, अश्विनी, मृगशिरा, पूर्वाफाल्गुनी इन नक्षत्रों में और शनैश्चर, सोम, बुध, विष्णु बोध में, पौष में इनसे वर्जित दिनों में धनुर्विद्या सीखने को प्रारम्भ करना शुभ है।।२५।।

वैद्यक व गारुडी भाषा सीखने का मुहूर्त—

हस्तत्रयेऽनुराधायां पुनर्भे श्रवणत्रये।
मूले चान्त्येऽश्विनीपुष्ये ज्येष्ठाश्लेषार्द्रभे मृगे।।
वैद्यविद्या कुजेब्जेऽर्के ज्येष्ठाहीनेऽथ गारुडी।।२६।।

हस्त, चित्रा, स्वाती, अनुराधा, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, मूल, रेवती, अश्विनी, पुष्य, ज्येष्ठा, आर्द्रा, मृगशिरा, इन नक्षत्रों में और मङ्गल, सोमवार, रविवार में वैद्यक के पढ़ने का प्रारम्भ करे तथा ज्येष्ठा को

छोड़कर और उक्त मुहूर्त में ही गारुडी विद्या अर्थात् साँप आदि विषैल जीवों के काटे हुए को झाड़ना या सर्प पकड़ना सीखना प्रारम्भ करे।।२६।।

फारसी और अरबी भाषा सीखने का मुहूर्त—

ज्येष्ठाश्लेषामघापूर्वा रेवती भरणीद्वये।
विशाखार्द्रोत्तराषाढ़शतभे पापवासरे।।
लग्ने स्थिरे सचन्द्रे च फारसीमारवीं पठेत्।।२७।।

ज्येष्ठा, आश्लेषा, मघा, पूर्वा, रेवती, भरणी, कृत्तिका, विशाखा, आर्द्रा, उत्तराषाढ़ा, शतभिषा इन नक्षत्रों में और पापवारों में तथा स्थिर लग्न सहित चन्द्र में फारसी और अरबी भाषा सीखना आरम्भ करे।।२७।।

रत्न परीक्षा कर्म सीखने का मुहूर्त—

पुनर्भे शतहस्ताद्ये श्रवोज्येष्ठा परीक्षणम्।
अदितिं शतभं हस्तं श्रवणं चेन्द्रभं तथा।।
रत्नानामष्टमीं भूतं हित्वा भौमं शनैश्चरम्।।२८।।

रत्न-परीक्षा के मुहूर्त में पुनर्वसु, शतभिषा, हस्त, श्रवण, ज्येष्ठा, अष्टमी, और चतुर्दशी को छोड़ मंगल और शनैश्चर को वर्जित करके अन्य मुहूर्त में प्रारम्भ करे।।२८।।

शिल्पविद्यारम्भ मुहूर्त—

हस्तत्रये श्रवात्र्यर्क्षे त्र्युत्तरे रोहिणीमृगे।
रेवत्यामश्विनीपुष्यपुनर्वस्वनुराधयोः।।
शस्ते तिथौ शुभे वारे शिल्पविद्यां समारभेत्।।२९।।

हस्त, चित्रा, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा, रेवती अश्विनी, पुष्य, पुनर्वसु और अनुराधा इन नक्षत्रों में शुभ तिथि और शुभ वारों में शिल्पविद्या (कारीगरी) का सीखना शुभ है।।२९।।

कुआँ खुदाने के नक्षत्र और मुहूर्त—

हस्तात्तिस्रो वासवं वारुणं च शैवं पित्र्यं त्रीणि चैवोत्तराणि।
प्राजापत्यं चापि नक्षत्रमाहुः कूपारम्भे श्रेष्ठमाद्यामुनीन्द्राः।।३०।।

हस्त, चित्रा, स्वाती, धनिष्ठा, शतभिषा, आर्द्रा, मघा, और तीनों उत्तरा तथा रोहिणी नक्षत्र में कुआँ खुदवाने के लिये प्राचीन मुनियों ने आज्ञा दी है।।३०।।

द्रव्य देना व स्थापित करना—

साधारणोग्रध्रुवदारुणाख्यैर्धिष्ण्यैर्यदत्र, द्रविणं प्रयुक्तम्।
हस्तेन विन्यस्तवसु प्रनष्टं न लभ्यते तन्नियतं कदाचित्।।३१।।

साधारण संज्ञक, उग्र, ध्रुव तथा दारुण संज्ञक नक्षत्रों में यदि किसी को धन उधार दिया जाता या धरोहर के रूप में रखा जाता है तो वह वहाँ ही नष्ट हो जाता है, देनेवाले को फिर वापस नहीं मिलता।।३१।।

हस्ती लेना वा देना—

हस्तेषु चित्रासु तथाश्विनीषु स्वात्यां च पुष्ये च पुनर्वसौ च।
प्रोक्तानि सर्वाण्यपि कुञ्जराणां कर्माणि गर्गप्रमुखैः शुभानि।३२।

हस्त, चित्रा, अश्विनी, स्वाती, पुष्य, तथा पुनर्वसु इन नक्षत्रों में हाथी खरीदना, बेचना, एक स्थान से दूसरे स्थान को भेजना आदि सभी कार्य प्रशस्त माने गये हैं।।३२।।

घोड़ों का लेना या बेचना—

पुष्यश्रविष्ठाश्विनिसौम्यभेषु पौष्णानिलादित्यकराह्वयेषु।
सवारुणर्क्षेषु बुधैः स्मृतानि सर्वाणि कार्याणि तुरंगमाणाम्।।३३।

पुष्य, धनिष्ठा, अश्विनी, मृगशिरा, स्वाती, पुनर्वसु, हस्त, रेवती, तथा शतभिषा इन नक्षत्रों में घोड़ों के खरीदने-बेचने आदि सभी कार्य उत्तम माने गये हैं।।३३।।

पशुओं के नगर में लाने और भेजने के लिए वर्जित समय

चित्रोत्तरावैष्णवरोहिणीषु चतुर्दशीदर्शदिवाष्टमीषु।
ग्रामप्रवेशं गमनं विदध्याद्धीमान्पशूनां न कदाचिदेव।।३४।।

चित्रा, तीनों उत्तरा श्रवण, रोहिणी, चतुर्दशी, अमावस्या तथा अष्टमी, इन नक्षत्रों तथा इन तिथियों में बुद्धिमान् गो आदि पशुओं को न ग्राम के भीतर लावे और न कहीं बाहर भेजे।।३४।।

गवादि पशुओं के क्रय-विक्रय में वर्जित नक्षत्र—

शाक्रवासवकरेषु विशाखापुष्यभे न च पुनर्वसुभेषु।
अश्विपूषभयुतेषु विधेयो विक्रयक्रयविधिः सुरभीणाम्।।३५।।

ज्येष्ठा, धनिष्ठा, हस्त, विशाखा, पुष्य, पुनर्वसु, अश्विनी तथा रेवती इन नक्षत्रों में गौओं को खरीदना या बेचना ठीक नहीं है।।३५।।

तृष्णकाष्ठादि संग्रहं में वर्जित नक्षत्र—

वासवोत्तरदलादिपञ्चके याम्यदिग्गमनगेहगोपनम्।
प्रेतदाहतृणकाष्ठसंग्रहं शय्यकाविरचनं च वर्जयेत्।।३६।।

धनिष्ठा के उत्तरार्ध यानी अन्तिम दो चरण से लेकर अगले पाँच नक्षत्रों को पंचक कहते हैं। उस पंचक में दक्षिण दिशा की यात्रा, घर छवाना, प्रेत (मृतक) का दाह, तृण तथा काष्ठ का संग्रह और चारपाई बुनाना वर्जित माना गया है।।३६।।

रवैद्राहियाम्यानिलवारुणेन्द्राण्याहुर्जघन्यानि भुजंगदंष्टः।
स वैनतेयेन सुरक्षितोऽपि प्राप्नोति मृत्योर्वदनं मनुष्यः।।३७।।

जिस मनुष्य को कृत्तिका, मूल, मघा, विशाखा, आश्लेषा, रेवती तथा आर्द्रा, नक्षत्र में साँप काट ले तो चाहे गरुड़ स्वयं उस मनुष्य की रक्षा क्यों न कर रहे हों, फिर भी वह नहीं बचता।।३७।।

नृत्यारम्भ का विचार—

हस्तास्तिष्यो वासवं चानुराधाज्येष्ठा पौष्णं वारुणं चोत्तरा च।
पूर्वाचार्यैः कीर्तितश्चन्द्रवर्ती नृत्यारम्भे शोभनो ऋक्षवर्गः।।३८।।

हस्त, पुष्य, धनिष्ठा, अनुराधा, ज्येष्ठा, रेवती, शतभिषा और तीनों उत्तरा इन नक्षत्रों में जब कि चन्द्रमा शुभ हो, उस समय यदि नृत्य सीखना आरम्भ करे तो अच्छा है।।३८।।

राज्याभिषेक नक्षत्र—

मैत्रशाक्रकरपुष्यरोहिणीवैष्णवेषु तिसृषूत्तरासु च।
रेवतीमृगशिराश्विनीषु च क्ष्माभृतां समभिषेक इष्यते।।३९।।

अनुराधा, ज्येष्ठा, हस्त, पुष्य, रोहिणी, श्रवण, तीनों उत्तरा, रेवती, मृगशिरा और अश्विनी इन नक्षत्रों में यदि राजाओं का अभिषेक किया जाय तो उत्तम है।।३९।।

राजदर्शन—

सौम्याश्वितिष्यश्रवणश्रविष्ठाहस्तध्रुवत्वाष्ट्रभपूषभानि।
मित्रेण युक्तानि नरेश्वराणां विलोकने भानि शुभप्रदानि।।४०।।

मृगशिरा, अश्विनी, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा, हस्त, ध्रुवसंज्ञक नक्षत्र, चित्रा, रेवती और अनुराधा इन नक्षत्रों में यदि राजाओं (बड़े आदमी) का दर्शन किया जाय तो अच्छा है।।४०।।

अग्न्याधान मुहूर्त—

पुष्याग्नेयत्र्युत्तरादित्यपौष्णज्येष्ठाचित्रार्कद्विर्देवेन्दुभेषु।
कुर्यादग्न्याधानमाद्यं वसन्तग्रीष्मान्तेष्वेव विप्रादिवर्णाः।।४१।।

पुष्य, कृत्तिका, तीनों उत्तरा, पुनर्वसु, रेवती, ज्येष्ठा, चित्रा, हस्त, विशाखा और मृगशिरा नक्षत्रों में वसन्त और ग्रीष्मऋतु में ही ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्यों को अग्न्याधान करना चाहिये।।४१।।

विशेष—

माघादिपञ्चमासेषु श्रावणे चाश्विने तथा।
कुर्यान्मार्गोत्तमाङ्गेवाऽग्न्याधानं शुक्लपक्षके।।४२।।
पञ्चाङ्गशुद्धदिवसे चन्द्रताराबलान्विते।
चन्द्रे शुद्धियुते लग्ने चाष्टमाद्यविवर्जिते।।४३।।

माघ आदि ५ मासों में, श्रावण, आश्विन और मार्गशीर्ष में शुक्ल पक्ष में शुभ तिथियों में चन्द्र तारा के बल में शुद्धलग्न में और अष्टम तथा लग्न से भिन्न स्थान में चन्द्रमा हो तो अग्न्याधान करना चाहिये।।४२-४३।।

इति प्रकीर्ण प्रकरण।

अथ कृषि-प्रकरण

तत्र हल बीजवपन मुहूर्त–

षष्ठीं चैवाष्टमीं रिक्तां त्यक्त्वार्कशनिमङ्गलान्।
मूलद्वीशमघाक्षिप्रचर - ध्रुवमृदूडुपु।।
मीनयुग्मालिगोकन्याधनुर्लग्ने हलक्रिया।
बीजोप्तिश्र शुभैतेषु द्वीशश्रुत्यम्वुपान् बिना।।१।।

षष्ठी, अष्टमी, रिक्ता तिथि, रवि, शनि, मङ्गलवार इन सर्वों को छोड़कर अन्य तिथि और दिन में मूल, विशाखा, मघा, क्षिप्र, चर, ध्रुव मृदु, संज्ञक नक्षत्रों में मिथुन, वृश्चिक, वृष, कन्या, धनु लग्न में, हल क्रिया (प्रथम हल जोतवाना शुभ है। और विशाखा, श्रवण शतभिषा इन नक्षत्रों को छोड़कर उपरोक्त मुहूर्तों में बीजवपन शुभ है।।१।।

सस्यरोपण-छेदन

बीजोप्तितिथिवारर्क्षलग्नेष्वेव शुभं स्मृतम्।
रोपणं सर्वसस्यानां छेदनं प्रथमं तथा।।२।।

बीजोप्ति तिथि वारादि में सब प्रकार के धान्य के रोपण और छेदन शुभ है।।२।।

खल (खरिहान) स्थान

पुरासन्ने प्रसन्नायां भूमौ कुर्यात् खलं शुभम्।
तत्र स्थाप्यानि सस्यानि मर्दनार्थं शुभे दिने।।३।।

ग्राम के समीप में प्रसन्न भूमि में कणमर्दन करने के लिए खरिहान बनावे। और वहाँ मर्दन (दौनी) करने के लिये धान्य स्थापन करे।।३।।

अथ मेधि (मेढ) स्थापन

वटोदुम्बरनीपानां शाखोटक्दरस्य च।
शाल्मलेर्मुशलेनैव मेधिं कुर्याद् विचक्षणः।।४।।
कपित्थविल्ववंशानां मेधिं नैव शुभावहः।
न पौषे न च रिक्तायां न कुजार्किदिन तथा।।५।।

मृदुक्षिप्रचरर्क्षेषु खाते द्रव्यं नियुज्य च।
सम्पूज्य धान्यबद्धाग्रं मेधिं संस्थापयेद्बुधः।।६।।

बड़, गूलर, कदम्ब साहोर, बैर, सेमर इनका (मेधी) मेढ बनाना चाहिये और कैथ बेल, बाँस का मेढ शुभ नहीं होता है। तथा पौष, रिक्ता, मङ्गल, शनि, इनको छोड़कर बाकी तिथि दिन में और मृदु क्षिप्र चर संज्ञक नक्षत्र में खात खन करके उसमें कुछ द्रव्य देकर पूजन करके मेधी के अग्र में धान्य बाँध-कर स्थापन करे।।४-६।।

धान्यमर्दन—

भाग्येऽर्यम्णे श्रुतौ मूले ब्राह्ममैत्रमघासु च।
वौष्णेन्द्रयोः शुभे वारे शुभं स्याद्धान्यमर्दनम्।।७।।

पूर्वफाल्गुनी, उत्तरफाल्गुनी, श्रवण, मूल, रोहिणी, अनुराधा, मघा, रेवती ज्येष्ठा इन नक्षत्रों में शनि मङ्गल को छोड़कर अन्य दिनों में धान्य मर्दन शुभ है।।७।।

बीजरक्षण—

अजपादान्त्यमूलेन्दुवातहस्तमघासु च।
विश्वब्राह्मे स्थिरे लग्ने बीजं स्थाप्यं शुभे दिने।।८।।

पूर्वभाद्रपदा रेवती, मूल, मृगशिरा, स्वाती, हस्त, मघा, उत्तराषाढ़, रोहिणी इन नक्षत्रों में स्थिर लग्न में शुभ दिन में धान्यादिक बीजधारण करना चाहिये।।८।।

गृहादौ धान्यादिस्थापनम् - धान्यवृद्धिश्च—

मिश्रोग्ररौद्रभुजगेन्द्रविभिन्नभेषु
कर्काजतौलिरहिते च तनौ शुभाहे।
धान्यस्थितिः शुभकरी गदिता ध्रुवेज्य-
द्वीशेन्द्रदस्रचरभेषु च धान्यवृद्धिः।।९।।

मिश्र उग्र सञ्ज्ञक, आर्द्रा, श्लेषा, ज्येष्ठा इनसे भिन्न नक्षत्रों में, कर्क, मेष, तुला से भिन्न लग्नों में शुभ ग्रह के दिन में घर वा बछड़ों में धान्य आदि रखना शुभ है। और ध्रुवसंज्ञक पुष्य, विशाखा, ज्येष्ठा, अश्विनी चर संज्ञक इन नक्षत्रों में वृद्धि के लिये अन्न सवाया लगाना शुभ है।।९।।

अथ अर्घ (अन्नमूल्य) विचार—

समं मृदुक्षिप्रवसुश्रवोऽप्ति मघात्रिपूर्वास्त्रपभं वृहत्स्यात्।
ध्रुवद्विद्वैपादितिभे जघन्यं सार्पाम्बुपार्द्रानिलशाक्रयाम्यम्।।१०।।

मृदु संज्ञक, क्षिप्र संज्ञक धनिष्ठा श्रवण कृत्तिका मघा तीनों पूर्वा मूल ये सम संज्ञक नक्षत्र हैं। और ध्रुवसंज्ञक, विशाखा पुनर्वसु ये बृहत्संज्ञक है। तथा श्लेषा शतभिषा आर्द्रा स्वाती ज्येष्ठा भरणी ये जघन्यसंज्ञक हैं।।१०।।

जघन्येऽर्कस्य सङ्क्रान्तिस्तदान्नस्य महर्घता।
बृहत्संज्ञे समर्घत्वं समत्वं समसंज्ञके।।११।।

जघन्य नक्षत्रों में रवि की संक्रान्ति हो तो अन्न की महँगी (तेजी) होती है बृहत्संज्ञक नक्षत्र में संक्रान्ति हो तो उस महीने में अन्न का भाव समान रहता है।।१०।।

अथ क्रय-विक्रय—

यमाहिशक्राग्निहुताशपूर्वा नेष्टाः क्रये विक्रयणे तु शस्ताः।
पौष्णाश्विचित्राशतविष्णुवाताः क्रये हिता विक्रयणे निषिद्धः।।१२।।

भरणी श्लेषा विशाखा कृत्तिका तीनों पूर्वा क्रय (खरीद करने में अशुभ और विक्रय (बेचने) में शुभ है। तथा रेवती अश्विनी चित्रा श्रवण स्वाती ये क्रय में शुभ और विक्रय में अशुभ हैं।।१२।।

अथ द्रव्यप्रयोग—

ऋणं ग्राह्यं न संक्रान्तौ करे वृद्धौ कुजे रवौ।
न देयं ज्ञे ध्रुवे मिश्रे तीक्ष्णोग्रे विष्टिपातयोः।।१३।।

रवि कुजवार संक्रान्ति दिन हस्त नक्षत्र वृद्धि योग इन में ऋण न ग्रहण करें। बुधवार ध्रुव मिश्र तीक्ष्ण उग्र संज्ञक नक्षत्र और भद्रा, पातयोग इनमें ऋण न लगावे।।१३।।

अथ नवान्नभक्षणमुहूर्त—

वृश्चिकेऽर्के च पूर्वार्धे मृगकुम्भस्थिते रवौ।
सत्तिथौ शुक्लपक्षे च पञ्चम्यन्त सितेतरे। १४।।

मृदुक्षिप्रचरर्क्षेषु सत्तनौ सत्क्षणेषु च।
हुत्वा वह्नौ विधानेन नवान्नं भक्षयेत्सुधीः।।१५।।

वृश्चिक के सूर्य में १५ अंश पर्यंत तथा मकर कुम्भ के सूर्य (माघ फाल्गुन) में शुभ तिथि में शुक्ल पक्ष में तथा पञ्चमी पर्यंत कृष्ण पक्ष में भी मृदु क्षिप्र चर संज्ञक नक्षत्रों में अग्नि में विधिपूर्वक हवन करके नवान्न भक्षण करना चाहिये।।१४-१५।।

निषेध—

तुलाचापद्विद्वैवार्कं चैत्रं नन्दां त्रयोदशीम्।
जन्मर्क्षं शयनं विष्णोः शनिशुक्रकुजान् बिना।।१६।।

तुला धनु विशाखा इनमें स्थित रवि, चैत्र, मास, नन्दा त्रयोदशी तिथि, जन्मतारा हरिशयन शनि मङ्गल शुक्रवार इनको छोड़कर नवान्न भक्षण शुभ है।।१६।।

होमाहुति मुहूर्त—

सैकातिथिर्वारयुता कृताप्ता शेषे गुणेऽभ्रे भुवि वह्निवासः।
सौख्याय होमे शशियुग्मशेषे प्राणार्थनाशौ दिवि भूतले च।।१७।।

शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से तिथि संख्या गिनकर १ जोड़ दे फिर उसमें रव्यादि वार संख्या जोड़कर ४ से भाग देने से ०, ३ शेष बचे तो पृथ्वी में अग्नि का वास रहता है उसमें होम करने से सुख होता है। और १, २ शेष बचे तो क्रम से आकाश और पाताल में अग्निवास रहता है उसमें होम करने से प्राण और धन का नाश होता है।।१७।।

अथ महारुद्रादौ शिववासफलम्—

तिथिं च द्विगुणीकृत्य बाणैः संयोजयेत्ततः।
सप्तभिश्च हरेद्भागं शिववासं समुद्दिशेत्।।१८।।
एकेन वासः कैलाशे द्वितीये गौरिसन्निधौ।
तृतीये वृषभारूढः सभायां च चतुष्टये।।१९।।
पञ्चमे भोजने चैव क्रीडायां षण्मिते तथा।
स्मशाने सप्तशेषे च शिववास इतीरितः।।२०।।

कैलाशे लभते सौख्यं गौर्या च सुखसम्पदः।
वृषभेऽभीष्टसिद्धिः स्यात् सभा सन्तापकारिणी।।२१।।
भोजने च भवेत् पीडा क्रीडायां कष्टमेव च।
श्मशाने मरणं ज्ञेयं फलमेवं विचारयेत्।।२२।।

स्पष्टार्थ—

शिववास शुभ तिथि चक्र—

तिथि	२	५	५	७	९	१०	१०	१४
कृष्णपक्ष तिथि	१	४	५	६	८	११	१२	२०

अथ पशुपालन—

लग्ने शुभे चाष्टमशुद्धिसंयुते रक्षा पशूनां निजयोनिभे चरे।
रिक्ताष्टमीदर्शकुजश्रवोध्रुवत्वाष्ट्रेषु यानं स्थितिवेशनं न सत्।।२३।।

अष्टम शुद्धि सहित शुभ लग्न में अपने योनि नक्षत्र (विवाह प्रकरणोक्त) में रिक्ता अष्टमी अमावस्या मङ्गल श्रवण ध्रुव संज्ञक चित्रा इनको छोड़कर बाकी तिथि नक्षत्रों में पशु की रक्षा (पालन) करना शुभ है।।२३।।

गजाश्वारोहणादि—

क्षिप्रान्त्यवस्विन्दुमरुज्जलेशादित्येष्वरिक्तारदिने प्रशस्तम्।
स्याद्वाजिकृत्यं त्वथ हस्तिकार्यं कुर्मान्मृदुक्षिप्रचरेषु विद्वान्।।२४।।

क्षिप्रं संज्ञक रेवती धनिष्ठा मृगशिरा स्वाती पूर्वाषाढ़ पुनर्वसु नक्षत्रों में, रिक्ता मङ्गल को छोड़कर बाकी तिथि दिन में घोड़ा के सम्बन्धी सब कार्य शुभ है। मृदुक्षिप्र चर संज्ञक नक्षत्रों में, हस्ति (हाथी) सम्बन्धी कार्य करे।।२४।।

(इति कृषि-प्रकरण)

अथ यात्रा प्रकरण

धनुर्मेषसिंहेषु यात्रा प्रशस्ता शनिज्ञोशनोराशिगे चैव मध्या।
रवौ कर्कमीनालिसंस्थेऽतिदीर्घाजनुःपञ्चसप्तत्रितारश्च नेष्टाः।।१।।

धन मेष, और सिंह के सूर्य में यात्रा उत्तम और मकर, कुम्भ, मिथुन, कन्या, वृष और तुला के सूर्यो में दीर्घ यात्रा जाननी चाहिये अर्थात् यात्रा में बहुत दिन लगे। यात्रा में पहली और पाँचवीं, सातवीं और तीसरी तारा निषिद्ध है।।१।।

न षष्ठी च द्वादशी नाष्टमी नो सिताद्या तिथिः पूर्णिमामा न रिक्ता।
हयादित्यमित्रेन्दुजीवान्त्यहस्तश्रवोवासवैरेव यात्रा प्रशस्ता।।२।।

छठ, द्वादशी, अष्टमी और शुक्लपक्ष की प्रतिपदा पूर्णमासी अमावस्या, रिक्ता, ४, ९,१३, ये तिथियँ यात्रा में वर्जित है और अश्विनी, पुनर्वसु, अनुराधा, मृगशिरा, पुष्य, रेवती, हस्त, श्रवण और धनिष्ठा ये नक्षत्र यात्रा में शुभ हैं।।

अश्विनी रेवती ज्येष्ठा पुष्यो हस्तः पुनर्वसुः।
मैत्रं मृगशिरो मूलं यात्रायामुत्तमाः स्मृताः।।३।।

अश्विनी, रेवती, ज्येष्ठा, पुष्य, हस्त, पुनर्वसु, अनुराधा मृगशिरा, मूल ये यात्रा में उत्तम हैं।।३।।

यात्रा में अशुभ नक्षत्र—

भरणी कृत्तिकाऽश्लेषा विशाखा चोत्तरात्रयम्।
मघाऽऽर्द्रा चाशुभा ज्ञेयास्तथा चान्याश्च मध्यमाः।।४।।

भरणी, कृत्तिका, श्लेषा, विशाखा, तीनों उत्तरा, मघा, आर्द्रा ये यात्रा में अशुभ हैं। और शेष मध्यम हैं।।४।।

अथ सर्वदिग्गमनार्ह नक्षत्र—

कराश्विनीचान्द्रधनिष्ठमैत्रैः पौष्णामाचार्यचतुर्मुचैश्च।
प्रयाति सर्वा ककुभं मनस्वी नरःकृतार्थो गृहमेति भूयः।।५।।

हस्त, अश्विनी, मृगशिरा, धनिष्ठा, अनुराधा, रेवती, पुष्य, श्रवण इन सर्वदिग्द्वार नक्षत्रों में सब दिशाओं में जाने से मनुष्य कृतकार्य होकर सकुशल घर आता है ।।५।।

यात्रा में विहित लग्न—

कन्यायां मिथुने लग्ने मकरे च तुलाधरे।
११ **यात्रा चन्द्रबले कार्या शकुनञ्च विचारयेत्।।६।।**

कन्या, मिथुन, मकर, तुला इन लग्नों में चन्द्रमा का बल देखकर यात्रा करे और शकुन विचार करे।।६।।

यात्रा में वर्ज्य—

जन्मताराष्टमे चन्द्रे संक्रान्तौ सूर्यगे विधौ।
भद्रागण्डान्तरिक्तासु षष्ठयां नैव व्रजेत्कचित्।।७।।
द्वगदश्यामपि चाष्टम्यां न गच्छेत्प्रस्थितोऽपि सन्।
जन्ममासे न गन्तव्यं राज्ञा विजयमिच्छता।।८।।

जन्मतारा, अष्टम चन्द्र, संक्रान्ति दिन (उपकक्षण से मासान्त और मासादि दिन) अमावस्या भद्रा, गण्डान्त, रिक्ता और षष्ठी में कदापि यात्रा न करे, तथा द्वादशी, अष्टमी और जन्म मास में प्रस्थान करने पर भी विजय चाहनेवाला यात्रा न करे।।७-८।।

लग्नशुद्धि—

केन्द्रत्रिकोणद्विगताश्च सौम्यास्तृतीयलाभारिगताश्च पापाः।
एवं यदि स्यादूगमने नरस्य तदार्थसिद्धिः पुनरागमश्च।।९।।

शुभग्रह केन्द्र (१।४।७।१०) त्रिकोण (५।९) और २ इन स्थानों में हों और पापग्रह ३।११।६ इन स्थानों में हों तो ऐसे लग्न में यात्रा करने से अर्थसिद्धि सहित भवन में सकुशल आता है।।९।।

अथ सर्वाङ्गज्ञान—

तिथिं वारञ्च नक्षत्रमेकीकृत्य त्रिधा पुनः।
द्वित्रिचतुर्भिर्गुणितं रससप्ताष्टभाजितम्।।१०।।
आदिशून्ये भवेद्धानिर्मध्यशून्ये दरिद्रता।
अन्त्यशून्ये भवेन्मृत्युः सर्वाङ्गी विजयी भवेत्।।११।।

शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से तिथि संख्या, रव्यादि दिन संख्या और अश्विनी से नक्षत्र संख्या जो हो सबका योग करके ३ जगह धरे और शुभ से २, ३, ४ से गुणा करके ६, ७, ८ से भाग देने से प्रथम स्थान में शून्य हो तो हानि, मध्य में शून्य हो तो विजयी होता है। यह युद्ध-यात्रा में विचार करना चाहिये।।१०-११।।

कुम्भकुम्भांशौ त्याज्यौ सर्वथा यत्नतो बुधैः।
तत्र प्रयातुर्नृपतेरर्थनाशः पदे पदे।।१२।।

कुम्भलग्न और कुम्भ का नवांश यात्रा में अवश्य त्याग करे क्योंकि उसमें यात्रा करने से पद-पद में अर्थनाश होता है।।१२।।

त्र्यहं क्षीरं च पञ्चाहं क्षौरं सप्तदिनं रतम्।
वर्ज्यं यात्रादिनात्पूर्वमशक्तस्तद्दिनेऽपि च।।१३।।

यात्रा दिन से तीन दिन पूर्व दूध, ५ दिन पूर्व क्षौर और सात दिन पूर्व मैथुन त्याग करे। ऐसा न हो सके तो यात्रा के दिन अवश्य त्याग करे।।१३।।

सम्मुखे दक्षिणे शुक्रे युद्धयात्रां विवर्जयेत्।
रेवत्यादेर्मृगं यावदन्धः शुक्रो न दोषकृत्।।१४।।

सम्मुख और दक्षिण शुभ में युद्धयात्रा न करे, परञ्च रेवती से मृगशिरा पर्यन्त शुक्र अन्ध रहता है, उसमें सम्मुख शुक्र दोषकारक नहीं होता।।१४।।

यात्रा में प्रशस्त लग्न—

दिग्द्वारमे लग्नगते प्रशस्ता यात्रार्थदात्री जयकारिणी च।
हानिं विनाशं रिपुतो भयं च तुर्यात्तथादिक्प्रतिलोमग्ने।।१५।।

दिग्द्वार राशि ("मेष सिंह धनु पूर्वे चन्द्र" इत्यादि) लग्न में यात्रा प्रशस्त है और धन-जय को देनेवाली होती है। पृष्ठ लग्न में (जैसे मेष लग्न में पश्चिम दिशा जाने में) हानि, धननाश और शत्रु से भय होता है।।१५।।

समयफल—

उषःकालो विना पूर्वां गोधूलिः पश्चिमां विना।
विनोत्तरं निशीथः स्याद्याने याम्यां विनाऽभिजित्।।१६।।

उषःकाल में पूर्व दिशा में न जाय, तथा गोधूलि में पश्चिम न जाय, दोपहर रात्रि में उत्तर न जाय और अभिजित् में दक्षिण में न जाय ।।१६।।

परिहार—

सम्मुखस्थः शशी हन्ति दोषं तिथिभवारजम्।
सर्वे दोषा विनश्यन्ति मनश्शुद्धिर्यदा नृणाम्।।१७।।

यदि चंद्रमा सम्मुख रहे तो तिथि, नक्षत्र, वार सम्बन्धी सब दोषों का नाश हो जाता है। और यदि मनःशुद्धि हो तो सब दोषों का नाश होता है।।१७।।

पुरात्परे यदैकस्मिन् दिने यात्राप्रवेशकौ।
तदा तु योगिनीशूलप्रतिशुक्रान्न चिन्तयेत्।।१८।।

यदि एक ही दिन में अपने स्थान से यात्रा करके गंतव्य स्थान में पहुँच सके तो दिक्शूल, योगिनी, संमुख शुक्र आदि का विचार नहीं करना चाहिये।।१८।।

सर्वारम्भ लग्नशुद्धि—

सर्वकर्माणि कार्याणि शुभे लग्ने शुभांशके।
त्रिलाभारिगतैः पापैः शुभैः केन्द्रत्रिकोणगैः।।१९।।

शुभ राशि के लग्न में, शुभ राशि के नवांश में, पापग्रह ३, ६, ११ स्थान में, तथा शुभग्रह १ । ४ । ७ । १० । ५ । ९ स्थान में हों तो सब कार्य का आरम्भ करना शुभ है।।१९।।

अथ सर्वारम्भमुहूर्त

व्ययाष्टशुद्धोपचये लग्नगे शुभदृग्युते।
चन्द्रे त्रिषड्दशायस्थे सर्वारम्भः प्रसिद्ध्यति।।२०।।

जन्म राशि वा जन्म लग्न से उपचय (३ । ६ । १० । ११) राशि लग्न में हो और द्वादश तथा अष्टम स्थान शुद्ध (ग्रहवर्जित) हो और चन्द्रमा ३ । ६ । १० । ११ इन स्थानों में हो तो सभी कार्य का आरम्भ शुभ होता है।।२०।।

यात्रा काल के शुभाशुभ नक्षत्र

अश्विनी तु शुभा प्रोक्ता भरणी नाशकारिणी।
कार्य्यघ्नी कृत्तिका चोक्ता रोहिणी सिद्धिदा बुधैः।।२१।।
मृगः शुभ्रस्ततश्चार्द्रा मध्यमा च पुनर्वसुः।
पुष्यः शुभः सार्पमघापूर्वाश्च भयमृत्युदाः।।२२।।
उत्तराहस्तचित्रास्तु विद्यालक्ष्मिशुभप्रदाः।
स्वातीविशाखे त्वशुभे मैत्रं सर्वार्थसिद्धिदम्।।२३।।

ज्येष्ठा मूलं क्रमात्तोयं क्षयनाशार्थहानिदम्।
विश्वब्रह्मविष्णवश्च बुद्धिवृद्धिसुखप्रदाः।।२४।।
वासवं वारुणं शैवं शुभं भद्रमृतिप्रदम्।
उत्तराभाद्रकं श्रीदं रेवती कामदायिका।।२५।।

अश्विनी शुभ, भरणी नाश करनेवाली, कृत्तिका काम बिगाड़ने वाली, रोहिणी सिद्धिदायिनी, मृगशिरा शुभ, आर्द्रा मध्यम, पुनर्वसु तथा पुष्य शुभ, आश्लेषा सुखदायक, मघा विनाशकारी, पूर्वा मृत्युदायक, उत्तरा हस्त तथा चित्रा ये तीनों क्रमशः विद्या लक्ष्मी तथा मंगलदायक, स्वाती और विशाखा अशुभ, अनुराधा सर्वसिद्धिदायक, ज्येष्ठा, मूल तथा पूर्वाषाढ़ क्रम से क्षय, नाश और हानिदायक है। उत्तराषाढ़, अभिजित् तथा श्रवण क्रम से बुद्धिदायक वृद्धिदायक और सुख प्रदान करनेवाले हैं। धनिष्ठा शतभिषा और पूर्वाभाद्रपद ये क्रम से शुभदायक, कल्याणकारी और मृत्युदायक हैं। उत्तराभाद्रपद लक्ष्मीदायक और रेवती मनःकामना को पूर्ण करनेवाली है।।२१-२५।।

इति यात्रा प्रकरण।

अथ दीक्षा प्रकरण

दिव्यज्ञानं यतो दद्यात् कुर्यात् पापस्य संक्षयम्।
तस्माद् दीक्षेति सा प्रोक्ता मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः।।१।।
जपपूजादिकं सर्व कार्य दीक्षायुतैर्नरैः।
अदीक्षिता ये कुर्वन्ति जपपूजादिकाः क्रियाः।।२।।
फलं नैव भवेत्तेषां शिलायामुप्तबीजवत्।
तस्माद्दीक्षां प्रगृह्णीयाद् गुरोर्दीक्षाविशारदात्।।३।।

दिव्य ज्ञान देने तथा पाप को क्षय करने के कारण मन्त्र का नाम 'दीक्षा' मुनियों ने कहा है। जप पूजादि कर्म दीक्षायुक्त मनुष्य को ही करना चाहिये। बिना दीक्षा लिये जो जप पूजादि कर्म करता है वह पत्थर पर बोए बीज के समान निष्फल हो जाता है। इसलिये दीक्षाविषय में विशारद गुरु से दीक्षा अवश्य ग्रहण करनी चाहिये।।१-३।।

दीक्षा ग्रहण का मुहूर्त—

मासेष्वाश्विनतो हि षट्सु पुरतः सुश्रावणे माधवे।
भद्रा-पूर्ण-त्रयोदशीशुभतिथौ शुक्रेन्दुजेन्दौ गुरौ।।
रोहिण्युत्तरशाक्र - शङ्करमरुत्पुष्यद्विदैवाश्विनी।
विष्णुश्चन्द्रबले सुलग्नसमये दीक्षा बुधैः शस्यते।।४।।

आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष, पौष, माघ, फाल्गुन, श्रावण, वैशाख इन मासों में भद्रा (२, ७, १२) पूर्णा (५, १०, १५), १३ इन शुभ तिथियों में शुक्र, बुध, सोम और गुरुवार में, रोहिणी, उत्तरा ३, ज्येष्ठा, आर्द्रा, स्वाती, पुष्य, विशाखा, अश्विनी और श्रवण नक्षत्रों में चन्द्र तारानुकूल होनेपर सुलग्न में मन्त्र ग्रहण करना प्रशस्त है।।४।।

निषिद्ध मासों में भी विशेषता—

चैत्रे रामनवम्यां च ज्येष्ठे च निर्जलादिने।
ग्रहणे सर्वकाले च दीक्षादानं प्रशस्यते।।५।।

चैत्र शुक्ल रामनवमी में, ज्येष्ठमास निर्जला (शुक्ल ११) में और किसी भी मास में ग्रहण हो तो ग्रहण काल में मन्त्र ग्रहण करना प्रशस्त है।।५।।

कार्तिके नवमी शुक्ला मार्ग शीर्ष तृतीयका।
पौषे च नवमी शुक्ला चैत्रे कामचतुर्दशी।।६।।
वैशाखे त्वक्षया शस्ता ज्येष्ठे दशहरा तिथिः।
आषाढ़े पञ्चमी शुक्ला श्रावणे कृष्णपञ्चमी।।७।।

कार्तिकशुक्ल ९, मार्गशुक्ल ३, पौषशुक्ल ९, चैत्रशुक्ल १३, १४, वैशाखशुक्ल ३, ज्येष्ठशुक्ल १०, आषाढ़शुक्ल ५, और श्रावणकृष्ण ५ ये भी मन्त्र ग्रहण में प्रशस्त है।।६-७।।

इति दीक्षाप्रकरण।

अथ संक्रान्तिप्रकरण

ग्रहों के एक राशि से दूसरी राशि में प्रवेश करने को संक्रान्ति कहते हैं। उनमें सूर्य की संक्रान्ति विशेष पुण्यप्रद कही गई है।

संक्रान्ति काल—

त्रुटेः सहस्त्रभागो यः स कालो रविसंक्रमः।
ब्रह्मापि तं न जानाति किं पुनः प्राकृतो जनः।।१।।

त्रुटिकाल का हजारवाँ भाग रवि का संक्रम काल होता है, उस काल को ब्रह्मा भी नहीं जानते फिर प्राकृतिक मनुष्यों की तो बात ही क्या है।।१।।

तस्मात् मुनीन्द्रैः संक्रातेरर्वाक् षोडशनाडिकाः।
पश्चात् षोडश संप्रोक्ता स्थूलाः पुण्यतमास्तथा।।२।।

इसलिये मुनीन्द्रों ने संक्रान्ति काल से १६ घड़ी पूर्व और १६ घड़ी पश्चात् पुण्यकाल कहा है।।२।।

मुहूर्तचिन्तामणौ—

संक्रान्तिकालादुभयत्रनाडिकाः पुण्यामताः षोडश षोडशोष्णगोः।
निशीथतोऽर्घागपरत्र संक्रमे पूर्वापराहान्तिमपूर्वभागयोः।।३।।
पूर्णे निशीथे यदि संक्रमः स्याद् दिनद्वयं पुण्यमथोदयास्तात्।
पूर्व परस्तायदि पाच्चसौक्ष्चाधने दिने पूर्वपरे तु पुण्ये।।४।।

संक्रान्तिकाल से पूर्व और पश्चात् १६, १६ घड़ी पुण्यकाल होता है। मध्य रात्रि से पूर्व (रात्रि के पूर्वार्ध में) संक्रान्ति हो तो पूर्व दिन के मध्याहोत्तर में और रात्रि के उत्तरार्द्ध में संक्रान्ति हो तो अग्रिम दिन के पूर्वाह्न में पुण्यकाल होता है। यदि ठीक मध्य रात्रि में संक्रान्ति हो तो पूर्व दिन के उत्तरार्ध और अग्रिम दिन के पूर्वार्द्ध दोनों दिन पुण्यकाल होता है अर्थात् उस स्थिति में दोनों दिन स्नान दान का समान ही फल कहा गया है। विशेषता यह है कि-सायं सन्ध्या के बाद और प्रातः सन्ध्या से पूर्व (रात्रि भर में) यदि कर्क की संक्रान्ति हो तो पूर्वदिन के उत्तरार्ध में और रात्रि भर में कभी भी मकर की संक्रान्ति हो तो अग्रिम दिन के पूर्वभाग में पुण्यकाल होता है।।३-४।।

संध्या समय में विशेषता—

सन्ध्या त्रिनाडीप्रमितार्कविम्बादर्घोदितास्तादध ऊर्ध्वमत्र।
चेद्याम्य-सौम्ये अयने क्रमात् स्तः पुण्यौ तदानीं परपूर्वघस्त्रौ।।५।।

सूर्य के अर्धबिम्बास्त के बाद ३ घड़ी सायं सन्ध्या कहलाती है उस समय यदि मकर संक्रान्ति हो तो पूर्व दिन के उत्तरार्ध में ही पुण्यकाल होता है। एवं सूर्य के अर्ध बिम्बोदय से पूर्व ३ घड़ी प्रातः सन्ध्या मानी जाती है। उस समय में कर्क की संक्रान्ति हो तो अग्रिम दिन ही पूर्वाह्न में पुण्यकाल होता है।।५।।

पुनः विशेषता—

त्रिंशत् कर्कटके चाद्याः मकरे तु दशाधिका।
पश्चात् पुण्यतमाः प्रोक्ता घटिका रविसंक्रमे।।६।।

कर्क की संक्रान्ति से ३० घड़ी पूर्व से और मकर की संक्रान्ति से पश्चात् की ४० घड़ी पर्यन्त पुण्यकाल कहा गया है।।६।।

संक्रान्ति में स्नानादि दिन में ही प्रशस्त है—

अहःसंक्रमणे पुण्यमहः सर्व प्रकीर्तितम्।
रात्रौ संक्रमणे पुण्यं दिनार्ध स्नानदानयोः।।७।।

दिन में संक्रान्ति हो तो दिनभर पुण्यकाल माना जाता है। रात्रि में संक्रान्ति हो तो समीप के दिनार्ध में स्नान दान करना चाहिये।।७।।

या याः सन्निहिता नाड्यस्तास्ताः पुण्यतमाः स्मृताः।
रवेः संक्रमणे प्रोक्ता ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः।।८।।

रवि की संक्रान्ति और सूर्य-चन्द्र के ग्रहणकाल के जितना समीप काल होता है उतना ही अधिक पुण्यतम कहा गया है।।८।।

मेष की संक्रान्तिं से जन्मलग्न वश-फल—

जन्मोदयाद्भास्वदजप्रवेशलग्नं हि यद्भावगतं शुभाढ्यम्।
तद्भाववृद्धि प्रकरोति तस्मिन् वर्षे नृणां पापयुतं च हानिम्।।९।।

मेष संक्रान्ति काल में जो लग्न हो वह जगल्लग्न कहा जाता है वह अपनी जन्मलग्न से जिस भाव में पड़े और यदि शुभ ग्रह से युक्त दृष्ट हो तो उस भाव की पुष्टि तथा पापग्रह से युत दृष्ट हो तो उस भाव की हानि होती है।।१०।।

विशेषफलम्—

जन्मोदये देहसुखं धनेऽर्थं लाभस्तृतीये च सहोत्थवृद्धिः।
तुर्ये सुहृत्सौख्यमथात्मजाप्तिः पुत्रेऽथ षष्ठेऽरिपराजयः स्यात्।१०।

स्त्रीसौख्याप्तिर्भवति मदने मृत्युरुग् भीश्च रन्ध्रे।
धर्मार्थाप्तिस्तपसि दशमे वित्तसौख्ये पदाप्तिः।।११।।
लाभे लाभः सुखधनचयो दुःखदारिद्र्यमन्ते।
पुंसो भेषे प्रविशति रवौ जन्मलग्नाद् विलग्ने।।१२।।

मेष संक्रान्ति लग्न - यदि जन्म लग्न में हो तो उस वर्ष में शरीर सुख, द्वितीय भाव में हो तो धन लाभ, तृतीय भाव में हो तो सहोदर आदि को सुख, चतुर्थ भाव मे हो तो मित्रादि बन्धुजनों से सुख, पञ्चम भाव में हो तो पुत्र सुख, षष्ठ भाव में हो तो शत्रु से पराजय, सप्तम भाव में हो तो स्त्री सुख, अष्टम भाव में हो तो मृत्यु या रोगभय, नवम भाव में हो तो धर्म और धन का लाभ, दशम भाव में हो तो धन, सुख और स्थान की प्राप्ति, एकादश भाव में हो तो सब प्रकार का लाभ धन और सुख की वृद्धि और द्वादश भाव में जन्मलग्न पड़े तो दुःख और धनहानि होती है।।१०-१२।।

वारतः संक्रान्तिफलम्—

रविरविजभौमवारे संक्रमणे दिनकरस्य सति मासे।
पित्त-कफानिलजामयनरपति - कलहस्त्वनावृष्टिः।।१३।।
बुधगुरु-चन्द्र-सिताहे रविसंक्रान्तावनामयं नृणाम्।
क्षितिपतिनिकरक्षेमं सस्यविवृद्धिर्विधर्मिणां पीड़ा।।१४।।

रवि शनि या मङ्गलवार में सूर्य की संक्रान्ति हो तो उस मास में पित्त, कफ और वात के प्रकोप से प्राणियों को पीड़ा, राजाओं में कलह और अवृष्टि से दुर्भिक्ष होने की अधिक सम्भावना होती है। यदि बुध, गुरु, सोम या शुक्रवार में रवि की संक्रान्ति हो तो मानव समाज में अरोग्य-स्वास्थ्य और राजाओं में परस्पर प्रेम और अन्नादि की समृद्धि होती है, एवं पापकर्म करनेवालों को हानि होती है।।१३-१४।।

संक्रान्तितः जन्मनक्षत्रफलम्—

संक्रान्तिधिष्ण्याधरधिष्ण्यतस्त्रिमे स्वभे निरुक्तं गमनंततोऽङ्गमे।
सुखं त्रिभे पीडनमङ्गभेंऽशुकं त्रिभेऽर्थहानिः रसभे धनागमः।।१५।।

जिस (दैनिक चन्द्र) नक्षत्र में संक्रान्ति हो तो उसके पूर्व के नक्षत्र से ३ नक्षत्र में अपना जन्म नक्षत्र हो तो उस मास में यात्रा करनी पड़ती है, उसके बाद के ६ नक्षत्रों में जन्म नक्षत्र होने से सुख, उसके आगे ३ नक्षत्र में पीड़ा, उसके आगे ६ नक्षत्रों में वस्त्र लाभ, उसके आगे के ३ नक्षत्रों में धन हानि, तथा उसके बाद के ६ नक्षत्रों में जन्म नक्षत्र पड़ने से उस मास में सुख होता है।।१५।।

संक्रान्तिनामानि—

मकरे रविसंक्रान्तिर्भवेत् सौम्यायनाभिधम्।
कर्क याम्यायनं प्रोक्तं दिनाद्यं देवदैत्योः।।१६।।
षडसीत्याननं चाप-नृयुक्कन्याझषे भवेत्।
तुलाजे विषुवं विष्णुपदं सिंहालिगोघटे।।१७।।

मकर की संक्रान्ति का नाम सौम्यायन कर्क की संक्रान्ति का नाम याम्यायन है मकर देवता का दिनादि तथा कर्क में दैत्यों का दिनादि कहा गया है। धनु, मिथुन, कन्या और मीन की संक्रान्ति का नाम षडसीत्यानन; तुला और मेष की संक्रान्ति का नाम विषुव और वृष, सिंह वृश्चिक एवं कुम्भ के रवि संक्रमण का नाम विष्णुपद है।।१६-१७।।

अत्र पुण्यकाले विशेष—

याम्यायने विष्णुपदे चाद्या मध्यास्तुलाजयोः।
षडशीत्यानने सौम्ये परा नाड्योऽन्ति पुण्यदाः।।१८।।

संक्रान्ति काल से पूर्व १६ घड़ी और पश्चात् १६ घड़ी जो पुण्यकाल कहा गया है, उनमें - याम्यायन और विष्णुपद नाम की संक्रान्ति में आरम्भ के तृतीयांश काल में; तुला और मेष (विषुव) संक्रान्ति के मध्यभाग में और षडसीत्यानन तथा सौम्यायन संक्रान्ति के अंतिम तृतीय भाग में विशेष पुण्य कहा गया है।।१८।।

अथ मेषगतरवौ विशेषः—

मसूरं निम्बपत्राभ्यां योऽत्ति मेषगते रवौ।
अतिरोषान्वितस्तस्य तक्षकः किं करिष्यति।।१९।।

मेषार्क संक्रान्ति के दिन जो कोई निम्ब के दो पत्र के साथ मसूर खाता है उसका अन्य सर्प की तो बात ही क्या, तक्षक भी कुछ नहीं कर सकता है। कोई इसका अर्थ करते हैं कि जब तक सूर्य मेष राशि में रहे तबतक प्रति दिन जो दो निम्ब के पत्र के साथ मसूर भक्षण करता है उसको एक वर्ष तक सर्प के बिष का कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता है।।१९।।

वारानुसारेण संक्रान्तिनामानि—

घोरा रवौ ध्वांक्ष्यभृतद्युतौ चसंक्रान्तिभौमे च महोदरी स्यात्।
मन्दाकिनी ज्ञे च गुरौ च मन्दा मिश्रा भृगौ राक्षसिकार्कपुत्रे।।२०।।

रविवार को पड़ी संक्रान्ति घोरा सोमवार की संक्रान्ति ध्वांक्षी भौमवार की संक्रान्ति महोदरी, बुधवार की संक्रान्ति मन्दाकिनी गुरुवार की संक्रान्ति मंदा, शुक्रवार की संक्रान्ति मिश्रा और शनिवार की संक्रान्ति राक्षसी कहलाती है।।२०।।

संक्रान्तिनक्षयोर्सम्बन्ध—

उग्रक्षिप्रचरे — मैत्रध्रुवमिश्राख्यवारुणै।
ऋक्षैः संक्रान्तिरर्कस्य घोराद्या क्रमशो भवत्।।२१।।

घोरा संक्रान्ति में उग्रसंज्ञक नक्षत्र, ध्वांक्षी में क्षिप्रसंज्ञक नक्षत्र, महोदरी संक्रान्ति में चरसंज्ञक नक्षत्र, मन्दाकिनी संक्रान्ति में मैत्र संज्ञक नक्षत्र, मंदा संक्रान्ति में ध्रुवसंज्ञक नक्षत्र, मिश्रसं क्रान्ति में मिश्रसंज्ञक नक्षत्र तथा राक्षसी संक्रान्ति में दारुण संज्ञक नक्षत्र रहते हैं।।२१।।

फलम्—

ध्वांक्षी वैश्यान् सुखयति महोदर्यलं चौरसार्थान्
घोरा शूद्रानथ नरपतिनेव मन्दाकिनी च।
मन्दाख्या च द्विजवरगणान्मिश्राकाख्या पशूञ्च
चांडालान्तां प्रकृतिमखिलां राक्षसी संज्ञिता च।।२२।।

ध्वांक्षी संक्रान्ति वैश्यों को, महोदरी चोरों को, घोरा शूद्रों को मन्दाकिनी राजाओं को, मंदा संक्रान्ति ब्राह्मणों को, मिश्रा पशुओं को और राक्षसी चाण्डाल आदि जाति बालोंको सुखी रखती है।।२२।।

कालफलम्—

पूर्वाह्णकाले नृपतिं द्विजेन्द्रान्मध्ये दिने चाथ विशोऽपराह्णे।
शूद्रान् रवावस्तमिते प्रदोषे पिशाचकान् रात्रिचरान्निशीथे। २३।
बटादिकाञ्चापररात्रिकाले प्रत्यूषकाले पशुपालकाञ्च।
संक्रान्तिरर्कस्य समस्तलिंगान् प्रभातसन्ध्यासमये निहन्ति।।२४।।

पूर्वाह्न समय में यदि संक्रान्ति लगे तो राजाओं को और विप्रों को, दोपहर को लगे तो वैश्यों को, दोपहर के बाद लगे तो शूद्रों को, प्रदोष में लगे तो पिशाचों को, रात्रि में लगे तो राक्षसों को, रात्रि के परभाग में संक्रान्ति लगे तो नटों को और रात्रि के पिछले पहर में संक्रान्ति लगे तो पशु पालनेवालों को दुःख देती है। यदि संक्रान्ति और समय न लगकर सबेरे सूर्योदय के समय लगे तो वह बहुरूपियों को नष्ट करती है।।२३-२४।।

संक्रान्तिमुखम्

अर्के शुक्रे मुखं पूर्वे सौम्ये भौमे च दक्षिणे।
शनौ चन्द्रे मुखं पश्चाद् गुरौ चैवोत्तर मुखम्।।२५।।

रवि और शुक्रवार को जो संक्रान्ति लगती है उसका मुख पूर्व दिशा की ओर रहता है बुध तथा भौमवार को लगी संक्रान्ति का मुख दक्षिण को होता है शनि और सोमवार को लगी संक्रान्ति का मुख पश्चिम को रहता है और गुरुवार को लगी संक्रान्ति का मुख उत्तर दिशा में रहता है।।२५।।

वार एवं नक्षत्रों से फल जानने की विधि—

वा.	नक्षत्र	नाम	फल	काल	फल	मुख
र.	उग्र	घोरा	शूद्रों को सुख	पूर्वाह्न	विप्र राजाको दुःख	पूर्व को मुख
सो.	क्षिप्र.	ध्वांक्षा	वैश्यों को सुख	मध्याह्न	वैश्यों को दुःख	पश्चिम को मुख
भौ.	चर.	महोद.	चोरों को सुख	अपराह्न	शूद्रों को दुःख	दक्षिण को मुख
बु.	मैत्र	नंदा.	राजाओं को सुख	प्रदोष	पिशाचों को दुःख	दक्षिण को मुख
गु.	ध्रुव	मन्दा	ब्राह्मणों को सुख	अर्द्धरात्रि	राक्षसों को दुःख	उत्तर को मुख
शु.	मिश्र	मिश्रा	पशुओं को सुख	अपरार्ध	नटादिकों को दुःख	पूर्व को मुख
श.	दारुण	राक्षस	चांडालों को सुख	प्रत्यूषका.	पशुपालकों को दुःख	पश्चिम को मुख

अथ करणे संक्रान्तिमुखम्—

बवे पूर्वमुखं चोक्तं बालवे यमदिङ्मुखम्।
कौलवे पश्चिममुखं तैतिले चोत्तरमुखम्।।२६।।
गरे वायव्यदिग्वक्त्रं वणिज्याग्नेयदिङ्मुखम्।
भद्रायामीशदिग्वक्त्रं शकुनौ नैर्ऋते मुखम्।।२७।।
चतुष्पदे च पाताले नागे चोर्ध्वमुखी भवेत्।
किंस्तुघ्ने सर्वदिग्वक्त्रं संक्रांतिमुखलक्षणम्।।२८।।

बवकरण में लगी संक्रान्ति का मुख पूर्व को, वालव करण में लगी संक्रान्ति का मुख दक्षिण को, कौलव करण में लगी संक्रान्ति का मुख पश्चिम को, तैतिल करण में लगी संक्रान्ति का मुख उत्तर को, गर करण में लगी संक्राति का मुख वायव्य दिशा को, वणिज करण में लगी संक्रान्ति का आग्नेय को, वृष्टि करण में लगी संक्राति का ईशानकोण को और शकुनिकरण में लगी संक्राति का मुख नैऋत्य कोण में रहता है। चतुष्पद करण में लगी संक्रान्ति का सुख पाताल में, नाग में लगी संक्रान्ति का मुख ऊपर को और किंतुध करण मै लगी संक्राति का मुख चारों दिशाओं में रहता है।।२६-२८।।

वारे संक्रान्ति दृष्टिः—

चन्द्रे गुरौ चैव ह्यीशकोणे सूर्ये सिते नैर्ऋतिकौणदृष्टिः।
धात्रीसुते दृक् कथिता च वायौ बुधे शनौरुद्रदिशीक्षणं भवेत्।।२९।।

सोम तथा गुरुवार की दृष्टि ईशानकोण में, रवि तथा शुक्रवार की संक्रान्ति की दृष्टि नैर्ऋत्यकोण में, मंगल की संक्रान्ति दृष्टि वायव्यकोण में बुध तथा शनि की संक्रान्ति की दृष्टि ईशानकोण में रहती है।।२९।।

अथ संक्रान्ति गमनम्—

मन्दे चन्द्रे गमः सौम्ये बुध भौमे च वारुणे।
रवौ शुक्र गमो याम्ये गुरौ प्राग्गमंन स्मृतम्।।३०।।

शनि तथा सोमवार की संक्रान्ति का गमन उत्तर दिशा में बुध और मंगलवार ती संक्रान्ति का गमन पश्चिम दिशा, रवि और शुक्रवार की संक्रान्ति

का गमन दक्षिण में और शनि तथा गुरुवार की संक्रान्ति का गमन पूर्व दिशा में होता है ।।३०।।

स्थितिः—

चतुष्पदे तैतिलनागयोश्च सुप्तो रविः संक्रमणं करोति।
विद्याद्बवाख्ये च गराह्वयेवा सवालवाख्ये स्थित एव विष्टौ।।३१।।

चतुष्पद, तैतिल और बनाग करण में सूर्य सोता हुआ संक्रमण करता है या यह संक्रान्ति सोयी रहती है। बव, गर बालव और वृष्टि करण की संक्रान्ति बैठी रहती है।।३१।।

फलम्—

किंस्तुघ्ननाम्नि शकुनौ वणिकौलवाख्ये
चोर्ध्व स्थितस्य खलु संक्रमणं रवेः स्यात्।
धान्यार्थवृष्टिषु भवेत् क्रमशस्त्वनिष्ट-
मध्येष्टेति मुनयः प्रवदंति पूर्वे।।३२।।

वव करण की संक्रान्ति का फल मध्यम, बालवकी संक्रान्तिका फल भी मध्यम, कौलव का फल मँहगा; तैतिल का फल सस्ता, गरका मध्यम वणिज् का महँगा, विष्टि का मध्यम, शकुनि का महँगा चतुष्पद का सस्ता, नागकरणका सस्ता और किंस्तुकरणके संक्रान्तिका फल महँगा है ।

वाहनम्—

सिंहो व्याघ्रा वराहश्च गर्दभः कुंजरस्तथा।
महिषी घोटकः श्वा च छागो वृषभकुक्कुटौ।।३३।।
गजो वाजी वृषो मेषा खरोष्ट्रौ केसरी क्रमात्।
शार्दूलमहिषोव्याघ्रवानराश्च ववादितः।।३४।।

ववकरण की संक्रान्ति का वाहन सिंह, बालवनी संक्रान्ति का वाहन व्याघ्र, कौशल करण की संक्रान्ति का बाहन वराह, तैतिल की संक्रान्ति वाहन गवा, गर की संक्रान्ति का वाहन हाथी, वणिज की संक्रान्ति का वाहन महिषी, विष्टि की संक्रान्ति का वाहन घोड़ा, शकुनि करण की संक्रान्ति का वाहन कुत्ता और चतुष्पद करण की संक्रान्तिका वाहन छाग है। नाग की संक्रान्ति का वाहन

बैल, किंस्तुघ्न की संक्रान्ति का वाहन मुर्गा है। उसी तरह बव आदि ग्यारहों संक्रान्तियों के क्रमशः ये उपवाहन हैं । जैसे- गज, अश्व, बैल, मेष, गधा, ऊँट, सिंह, व्याघ्र, भैंसा, व्याघ्र और वानर।।३३-३४।।

वाहनफलम्—

गजे लक्ष्मीवृषे स्थैर्य घोटके वाहने तथा।
सिंहे व्याघ्रे भयं प्रोक्तं सुभिक्षं गर्दभे शुनि।।३५।।

यदि संक्रान्ति का वाहन हाथी हो तो लक्ष्मी, वृष हो तो स्थिरता अश्व वाहन होने पर स्थिरता, सिंह तथा व्याघ्र वाहन होने पर भय गधे और कुत्ते के वाहन होने पर सुभिक्ष होता है।।३५।।

फलम्—

वाराहे महती पीड़ा जायते भेषवाहने।
महिष्यां च भवेत् क्लेशः कुक्कुटे मृत्युरेव च।।३६।।

वराह तथा मेष के वाहन रहने पर अतिशय पीड़ा, भैंस के वाहन रहने पर क्लेश और मुर्गा के वाहन रहने पर मृत्यु होती है।।३६।।

वस्त्रम्—

श्वेतपीतहरितं च पांडुरं रक्तश्याममसितं बहुवर्णम्।
कंबलो विवसनं घनवर्णान्यं शुकानि च बवादितः क्रमात्।।३७।।

वव आदि बारहों संक्रान्तियों का क्रमशः श्वेत, पीत, हरित, पांडुर, रक्त, श्याम, कला, कई रंगो का कम्बल, नंगा और मेघवर्ण क्रमशः ये वस्त्र होते हैं।।३७।।

आयुधभ्—

भुशुण्डी च गदाखङ्गदण्डकोदंडतोमराः।
कुन्तपाशांकुशास्त्रं च वाणश्चैवायुधं ववात्।।३८।।

उसी प्रकार ववादि संक्रान्तियों के क्रमशः गदा, खड्ग, दंड, धनुष, तोमर कुन्त (भाला) पाश, अंकुश, अस्त्र और बाण ये आयुध होते हैं।।३८।।

भोजनपात्रम्—

सौवर्ण राजतं ताम्रं कास्यं लोहं च खर्परम्।
पत्रं वस्त्रं करो भूमिः काष्टपात्रं बवादितः।।३९।।

बवादि संक्रान्तियों के क्रम से ये भोजन पात्र होते हैं। जैसे सुवर्ण, चाँदी, ताम्र, काँसा, लोहा, खप्पर, पत्र, वस्त्र, हाथ, भूमि और काष्ठपात्र।।३९।।

भक्ष्यपदार्थानि—

अन्नं च पायसं भक्ष्यं पक्वान्नं च पयो दधि।
चित्रान्नं गुड़मध्वाज्यं शर्करा तु ववादितः।।४०।।

बव आदि ग्यारहों संक्रान्तियों के क्रमशः ये भक्ष्य पदार्थ होते हैं। जैसे - अन्न, खीर, पकवान, भक्ष्य, दुध, दही, विचित्र प्रकार का अन्न, गुड़, शहद, घी और चीनी।।४०।।

गन्धम्—

कस्तूरी कुम्कुमं चैव चन्दनं मृत्तिका तथा।
सिन्दूरमगुरुश्चैव कपूर्रच ववादितः।।४१।।

बवादि ग्यारहों संक्रान्तियों के क्रमशः ये गन्ध द्रव्य होते हैं। जैसे-कस्तूरी, केसर, चंदन, मिट्टी, सिन्दूर अगर और कपूर, फिर कस्तूरी, केसर, चंदन और मिट्टी।।४१।।

जातिः—

देवभूताहिविहगाः पशवो मृग एव च।
ब्रह्मक्षत्रियविट्शूद्रमिश्राजातिर्बवादितः।।४२।।

बावादि ग्यारहों संक्रान्तियों को क्रमशः ये जातियाँ होती हैं। जैसे देव, भूत, सर्प, पक्षी, मृग, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और मिश्र।।४२।।

पुष्पम्—

पुन्नागजातीवकुलाश्च केतकी विल्वस्तथार्कः कमलं च दूर्वा।
मल्ली तथा पाटलिका जपा च बवादिपुष्पाणि च योजयेत्तु।४३।

बवादि ग्यारहों संक्रान्तियों के क्रमशः ये पुष्प होते हैं। जैसे- पुन्नाग, जुही, मौलसिरी, केतकी, बेला, दुपहरिया, कमल, दूब, मालती, पाटला (पाटल) और जपा (अढ़ौल)।।४३।।

भूषणानि—

नुपुरं कंकण मुक्ता विद्रुमं मुकुटं मणिम्।
गुञ्जा वराटकं नीलं गारुत्मं रुक्मकं बवात्।।४४।।

बव आदि ग्यारह संक्रान्तियों के क्रमशः ये आभूषण होते हैं। जैसे- नूपुर, कंकर्ण, मोती, मूँगा, मुकुट, मणि, घुँमची, कौड़ी, नीलम, गारुत्मकमणि और सुवर्ण।।४४।।

कंचुकी—

विचित्रवर्णाशुकभूर्जपत्रका सिता तथा पाटलनीलवर्णा।
कृष्णाजिनं चर्म च बल्कलपांडुरा बवादितश्चैव तु कंचुकीस्यात्।।४५।।

बवादि ग्यारहो संक्रान्तियों के क्रमशः ये कंचुकी होते हैं। जैसे- विचित्र वर्ण का अंकुश (वस्त्र), भोजपत्र, सफेद गुलाबी, नीली, काली, चर्म, बल्कल और पांडुर।।४५।।

वयः—

शिशुः कुमारी च गतालका युवा प्रौढा प्रगल्भाथ ततश्च वृद्धा।
वंध्यातिवंध्या च सुतार्थिनी च प्रव्राजिका चैव फलं शुभं बवात्।।४६।।

बवादि ग्यारहो संक्रान्तियों की, क्रमशः यह वय होती है, जैसे- शिशु, कुमारी, गतालका, युवा, प्रौढा, तेजस्विनी, वृद्धा, वन्ध्या, अतिवन्ध्या, पुत्रार्थिनी और संन्यासिनी।।४६।।

पंथा च भोगो रतिहास्यदुर्मुखी ज्वरान्विता भुक्ति सुकंपिता मृता।
ध्यानस्थिता कर्कशवृद्धरूपिणी बवाद्यवस्थाः कथिता मुनीन्द्रैः।।४७।।

बवादि ग्यारहों संक्रान्तियों को क्रमशः ये अवस्थायें होती हैं। जैसे- पंथ, भोग, रति हास्य, दुर्मुखी, ज्वर, भुक्ति, कम्पिता, मृता, ध्यानस्थिता और कर्कशा वृद्धा।।४७।।

वाहनादि फलम्—

वाहनादिकवस्तूनां संक्रमात्तु विनाशताम्।
यत्तस्या योग्यवस्तु स्यात्तस्य स्यात्तु महद्भयम्।।४८।।

ऊपर वाहन आदि जिन वस्तुओं को गिनाया है, उन पर संक्रान्ति पढ़ने से उनका नाश होता है या उन वस्तुओं के नष्ट होने का भय बना रहता है।।४८।।

संक्रान्तिमूर्तिभेदफलञ्च—

संक्रांतौ मूर्तिमेदा हरिपवनयमे बारुणे सार्परोद्रै
एषां पंचेंदुसंज्ञा गुरुमरपितृमे चोग्निदस्त्रे च सौम्ये।
त्वाष्ट्रे मैत्रे च मूले श्रुति चरमर्क्षे च पूर्वासु त्रिंशत।
ब्राह्मेऽदित्ये द्विदैवे भवति शरकृता उत्तरात्रीणि ऋक्षम्।।४९।।
बाणवेदैः समर्ध स्यान्मध्यस्थं व्योमरामयोः।
मूर्तौ षंचदशे याते दुर्भिक्षं च प्राजयते।।५०।।

हरि (इन्द्र) ज्येष्ठा, स्वाती, भरणी, शतभिषा, आश्लेषा तथा आर्द्रा, इन नक्षत्रों में होने वाली संक्रान्ति की १५ मुहूर्त की रहती है, जो दुर्भिक्ष करती है। पुष्य, हस्त, मघा, कृत्तिका, अश्विनी, मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, मूल, श्रवण, धनिष्ठा, रेवती, तीनों पूर्वा में जो संक्रान्ति पड़ती है वह ३० मुहूर्त की होती है, इसका फल साधारण ही होता है। रोहिणी, पुनर्वसु, विशाखा और तीनों उत्तरा में जो संक्रान्ति पड़ती है वह ४५ मुहूर्त की होती है और यह संक्रान्ति लोगों को स्वस्थता प्रदान करती है।।४९-५०।।

अन्यच्च—

पूर्वसंक्रान्तिनक्षत्रात्परसंक्रान्तिऋक्षकम्।
द्वित्रिसंख्या समर्घं स्याच्चतुः पंचमहर्घता।।५१।।

पूर्व संक्रान्ति के नक्षत्र से वर्तमान संक्रान्ति के नक्षत्र तक गिने। यदि पूर्व संक्रान्ति के नक्षत्र से वर्तमान संक्रान्ति के नक्षत्र में केवल दो या तीन नक्षत्र का अन्तर हो तो चीजों का मूल्य सस्ता हो और यदि चार नक्षत्र का अन्तर पड़ जाय तो मँहगाई होगी ऐसा जाने।।५१।।

अथ धान्यविचारः—

संक्रान्तिनाडीनवमिश्रिता च सप्ताहता पावकभाजिता च।
रूपे समर्घं द्वितपे च साम्ये शून्ये महर्घं मुनियो वदन्ति।।५२।।

करण में संक्रान्ति का मुख इत्यादि की रीति इस कोष्ठक के अनुसार जानें।

कारण	वव	बालव	कौलव	तैतिल	गर	बणिज	विष्टि	शकुनी	चतुष्पद	नाग	किस्तुघ्न
	पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर	वायव्य	आग्नेय	ईशान	नैर्ऋत्य	पाताल	ऊर्ध्व	सर्वदि
मुख	मुखी	मुखी	मुखी	मुख	मु.	मु.	मु.	मु.	मु.	मु.	मु.
दृष्टि	सीम	अग्नि	रवि	नैर्ऋत्य	मङ्गल	वायव्य	बुध	ईशान में	.	.	.
गमन	गुरु	कोण में	शुक्र	में	रवि	में	शनि	पूर्व	.	.	.
स्थिति	शनि	उत्तर	बुध	पश्चिम	शुक्र	दक्षिण	गुरु	सोती		सोती	खड़ी
फल	सोम	बैठी	भौम	बैठी	बैठी	बैठी	बैठी		सोती		महंगी
वाहन	बैठी	मध्यम	सोती	सस्यता	मध्यम	महँगा	मध्यम	महँगा	सस्ता	सस्ता	मुर्गा
उपवाहन	मध्यम	व्याघ्र	महंगा	गधा	हाथी	भैंस	मध्यम	कुत्ता	मेंढ़क	बैल	
फल	सिंह	अश्व	वाराह	मेंढ़क	गधा	ऊँट	घोड़ा	व्याघ्र	भैंसा	व्याघ्र	बानर
वस्त्र	गज	अश्व	बैल	सुभिक्ष	लक्ष्मी	क्लेश	सुख	स्थिर	क्लेश	स्थिर	मृत्यु
आयुध	भय	भय	पीड़ा	पांडुर	लाल	नीला	काला		कंबल	सफेद	धूम्र
पात्र	श्वेत	पीला	हरा	दण्ड	धनुष	तोमर		छींट	अंकुश	तेगा	वाण
भक्ष्य	भुशुंडी	गदा	खड्ग	कांसा	लोहा	ठीकरा	भाला	पाश		भूमि	काष्ठ
लेपन	सुवर्ण	चांदी	तांबा	पक्वान	दूध,	दधि	पत्ता	कपड़ा	कर	घी	
वर्ण	अन्न	पायरा	भक्ष्य	मिट्टी	गोरोचन	का. चन्दन	खिचड़ी	गुड़	मधु	अगर	शङ्कर
पुष्प	कस्तूरी	कुंकुम	चन्दन	पशु	मृग		हल्दी	कागज	सिन्दूर	वर्णशंकर	कपूर
भूषण	देव	भूत	सर्प	कतकी	बैल	ब्राह्मण	क्षत्री	वैश्य	शूद्र		अन्त्य
कंचुकी	पुन्नाम	चमेली	वकुल	भूंगा		मन्दार	कमल	दूध	मल्ली	पाटल	जपा
वय	नुपुर	कंकण	मोती	भोजपत्र	मुकुट	मणि	गुञ्जा	कौड़ी	निमल	पुन्नाग	सोना
अवस्था	विचित्र	पत्तकी	हरी		सफेद	गुलाबी	नीली	काली	चर्म	बिल्कुल	पाण्डुर
	बाल	कुमारी	गलात	युवा	प्रौढा	तेजस्वी	बृद्धा	बंध्या	अतिबंध्या	पुत्रार्थी	संन्यासी
	पन्थ	भोग	रीति	हास्य	ढ. मु.	ज्वर	भुक्ति	कंपिता	मृता	ध्यान	कर्कश

वर्तमान संक्रान्ति की जितनी घटियाँ हों उनमें नौ और मिलावे फिर ३ से भाग देने पर यदि एक शेष बचे तो उत्तम, दो बचे तो मध्यम और कुछ भी न बचे तो चीजें मँहगी होंगी।।५२।।

अथ संक्रान्तिनक्षत्रफलम्

संक्रान्त्या क्रांतनक्षत्राद् गणयेज्जन्मभभावधि
त्रिकं षट्कं त्रिकं षट्कं त्रिकं षट्कं पुनः पुनः।
पंथा भोगो व्यथा वस्त्रं हानिश्च विपुलं धनम्।।५३।।

मनुष्य के लिए संक्रान्ति का शुभाशुभ फल जानना हो तो जिस नक्षत्र पर संक्रान्ति के नक्षत्र से उस मनुष्य के जन्मनक्षत्र तक गिने। उन दोनों नक्षत्रों में क्रमशः तीन नक्षत्र के अन्तर में परदेश गमन, फिर छः नक्षत्र तक सुख भोग, फिर तीन नक्षत्र तक कष्ट सहन, छः नक्षत्र तक वस्त्र प्राप्ति फिर तीन नक्षत्र तक हानि और शेष छः नक्षत्र तक धन की प्राप्ति होती है।।५३।।

अथ वारेतिथौ च संक्रान्तिफलम्—

यस्य जन्मर्क्षमासाहतिथौ संक्रमणं भवेत्।
तन्मासाभ्यंतरे तस्य वैरं क्लेशो धनक्षयः।।५४।।

जिस मनुष्य के जन्म नक्षत्र पर संक्रान्ति हो तो महीने के भीतर ही लोगों से वैर हो, जन्मवार पर संक्रान्ति हो तो कष्ट हो, और जन्म तिथि पर संक्रान्ति पड़े तो धन का विनाश हो।।५४।।

अथ संक्रान्तिस्वरूपम—

षष्टियोजनविस्तीर्णा संक्रान्तिः पुरुषाकृतिः।
एकवक्त्रा नवभुजा लम्वोष्ठी दीर्घनासिका।।५५।।
पृष्ठे लोकान् भ्रमत्येव गृहीत्वा खर्परं करे।
एवं संक्रमणे तस्याः फलं प्रोक्तं मनीषिभिः।।५६।।

अब संक्रान्ति का स्वरूप बताते हुए कहते हैं, कि संक्रान्ति साठ योजन की लम्बी चौड़ी होती है, पुरुष के समान उसकी आकृति होती है, उसके एक मुख रहता है और नौ भुजायें होती है लंबे-लंबे उसके होठ होते हैं, लम्बी नाक होती है, वह देखती तो पीछे की तरफ है, पर चलती है आगे, वह हाथ में

खप्पर लिए चक्कर मारती रहती है। इस प्रकार संक्रान्ति का स्वरुप प्राचीन ऋषियों ने कहा है।।५५-५६।।

चन्द्रात्संक्रान्तिवर्ण तत्फलश्च—

भेषालिकर्के च तथैव रक्तं चापे च मीने तुले च पीतम्।
श्वेतं वृषे स्त्रीमिथुने च चन्द्रे कृष्णे च नक्रेऽथ घटे च सिंहे।।५७।।
रक्ते फलं भवेद् दुखं श्वेते चैव सुखं शुभम्।
पीते श्रीस्तु तथा प्रोक्ता श्यामे मृत्युर्न संशयः।।५८।।

यदि मेष, वृश्चिक तथा कर्कराशिस्थ चन्द्रमा के होने पर संक्रान्ति हो तो उसका वर्ण लाल होता है। धन, मीन, और तुला राशि पर चन्द्रमा के रहते संक्रान्ति का रंग पीला होता है। वृष कन्या और मिथुन राशि पर चन्द्रमा के रहते संक्रान्ति पड़े तो उस संक्रान्ति का वर्ण श्वेत होता है। मकर, कुम्भ और सिंहस्थ चन्द्रमा में संक्रान्ति पड़े तो उस संक्रान्ति का वर्ण काला होता है। रक्त संक्रान्ति का फल युद्ध, श्वेत में सुख, पीत में लक्ष्मीप्राप्ति और श्याम संकांति का फल मृत्यु है।।५७-५८।।

राशिगतचन्द्रात्संक्रान्तिफलम्—

याद्दशेन हिमरश्मिमालिना संक्रभो भवति तिग्मरोचिपा।
ताद्दशं फलमवाप्नुयान्नरः साध्वसाध्वपि वशेन शीतगोः।।५९।।

जिस प्रकार के चन्द्रमा पर से सूर्य की संक्रान्ति होती है अर्थात् चन्द्रमा जिस तरह का फलदायक रहता है, तो वह सूर्य संक्रांति भी उसी प्रकार शुभ या अशुभ फल प्रदान करती है।।५९।।

संक्रान्तेः पुण्यकालः—

पूर्वतोऽपि हि रवेश्च संक्रमात्पुण्यकालघटिकास्तु पोडशः।
अर्धरात्रिसमयादनंतरं संक्रमे परदिनं हि पुण्यदम्।।६०।

प्रत्येक सूर्य की संक्रान्ति का पुण्यकाल सोलह घड़ी होता है। यदि पूर्व रात्रि में संक्रान्ति लगती है तो भी पूर्व दिन पुण्यकाल होता है। और यदि आधी रात के बाद लगती हो तो दूसरे दिन पुण्यकाल माना जाता है।।६०।।

इति संक्रान्ति प्रकरणम् ।

अथ ग्रहणप्रकरणम्

चन्द्रग्रहणम्—

भानोः पंचदशे ऋक्षे चन्द्रमा यदि तिष्ठति।
पौर्णमास्यां निशाशेषे चन्द्रग्रहणमादिशेत्।।१।।

यदि सूर्य के नक्षत्र से ठीक पन्द्रहवें नक्षत्र पर चन्द्रमा बैठा हो तो पूर्णिमा की रात्रि के पिछले पहर में चन्द्रग्रहण लगता है।।१।।

सूर्यग्रहणम्—

विधुमग्रस्तनक्षत्रात्षोडशं यदि सूर्यभम्।
अमांवस्यां दिवाशेषे सूर्यग्रहणमादिशेत्।।२।।

साधारणतः अमावस्या को सूर्य और चन्द्रमा एक राशि पर आ जाते हैं, लेकिन यदि चन्द्र ग्रहण के आगे अमावस्या को चन्द्र नक्षत्र से सूर्य नक्षत्र १६ वाँ हो तो अमावस्या और प्रतिपदा की सन्धि में सूर्य ग्रहण होता है।।२।।

राशितः ग्रहणशुभाशुभफलम्—

त्रिषड्दशायेषु गते नराणां शुभप्रदं स्यात् ग्रहणं रवीन्दोः।
द्विसप्तनंदेषु च मध्यमं स्याच्छेषेष्वनिष्टं मुनयो वदन्ति।।३।।

जिस मनुष्य की जन्मराशि से तीसरी, छठीं, दसवीं तथा ग्यारहवीं राशि पर ग्रहण पड़े तो शुभ फल होता है। जिसकी जन्म राशि से दूसरी सातवीं तथा नवीं राशि पर ग्रहण पड़े तो मध्यम फल होता है। इनके अतिरिक्त पहली, चौथी, आठवीं, पाँचवीं तथा बारहवीं राशि पर ग्रहण पड़े तो अच्छा फल नहीं होता है।।३।।

अन्यमते—

ग्रासात्तृतीयोऽष्टमगश्चतुर्थस्तथाऽऽयसंस्थः शुभदः स्वराशेः।
ग्रासाद्रविः पंचनवर्त्तुमध्यस्ततोऽधमश्चेति बुधैर्निरुक्तम्।४।

अपनी राशि से तीसरी, आठवीं, चौथी, और ग्यारहवीं राशि पर ग्रहण पड़े तो उत्तम, पाँचवीं, नवीं तथा छठीं राशि पर ग्रहण हो तो मध्यम और पहली, दूसरी, सातवीं तथा बारहवीं राशि पर ग्रहण पड़े तो अधम फल होता है।।४।।

इति ग्रहणप्रकरणम्।

अथ गोचरप्रकरणम्

रविफलम्

स्थानं जन्मनि नाशयेद्दिनेकरः कुर्याद् द्वितीये भयं
दुश्चिक्ये श्रियमातनीति, हिबुके मानक्षयं यच्छति।
दैन्यं पंचमगः करोति रिपुहा पष्ठेऽर्थहा सप्तमे
पीडामष्टमगः करोति पुरुषं कांतिक्षयं धर्मगः।।१।।
कर्मसिद्धिजनकस्तु कर्मगो वित्तलाभकृदथायसंस्थितः।
द्रव्यहानिजनितां महापदं यच्छति व्ययगतो दिवाकरः।।२।।

चारवस—जब ग्रह राशि में प्रवेश करता है, तो अपनी—अपनी जन्म राशि से भिन्न भिन्न फल देता है, उसको ग्रह गोचर फल कहते हैं। उनमें प्रथम सूर्य के गोचर फल— सूर्य जन्मराशि में प्रवेश करे तो स्थान की हानि, जन्मराशि से द्वितीय राशि में हो तो भय, तृतीय राशि में सम्पत्ति की वृद्धि, चतुर्थ में मानहानि, पञ्चम में दीनता, षष्ठ में शत्रुओं का नाश, सप्तम में धन हानि, अष्टम में पीड़ा, नवम में कान्तिक्षय, दशम में कार्य की सिद्धि, एकादश में धनलाभ और द्वादश में धनहानि से कष्ट होता है।।१-२।।

चन्द्रफलम्—

जन्मन्यन्नं दिशति हिमगुर्वित्तनाशं द्वितीये
दद्याद् द्रव्यं सहजभवने कुक्षिरोगं चतुर्थे।
कार्यभ्रंशं तनयगृहगो वित्तलाभं च षष्ठे
द्यूने द्रव्यं युवतिसहितं मृत्युभस्थेऽपमृत्युः।।३।।
नृपभयं कुरुते नवमः शशी दशमधामगतस्तु महत्सुखम्।
विविधमायगतः कुरुते धनं व्ययगतश्चरुजं च धनक्षयम्।।४।।

चारवशं जन्मराशि में (१) चन्द्र हो तो अन्नलाभ, २ धनहानि, ३ द्रव्य लाभ, ४ कुक्षि रोग, ५ कार्य हानि, ६ धन लाभ, ७ द्रव्यलाभ, ८ अल्पमृत्यु (कष्ट—अपमानादि), ९ राजभय, १० महासुख, ११ अनेक लाभ और १२ में रोग और धन की हानि होती है।।३-४।।

भौमफलम्—

प्रथमगृहगः क्षोणीसूनुः करोत्यरिजं भयं
क्षपयति धनं वित्तस्थाने तृतीयगतोऽर्थदः।
अरिभयकरः पाताले द्रव्यं क्षिणोति च पञ्चमे
रिपुगृहगतः कुर्याद्वित्तं रूजं मदनस्थितः।।५।।
जनयति निधनस्थो शत्रुबाधां धराजो
दिशति नवमसंस्थः कार्यपीडामतीव।
शुभमपि दशमस्थो लाभगो भूरिलाभं
व्ययभवनगतोऽसौ व्याधिमर्थस्य नाशम्।।६।।

मङ्गल जन्मराशि (१) में शत्रुभय, २ धन हानि, ३ धन लाभ, ४ शत्रु भय, ५ धन हानि, ६ धन लाभ, ७ रोग, ८ शत्रु बाधा, ९ कार्य हानि, १० शुभ, ११ अधिक लाभ और १२ में तो व्याधि और धनहानि कारक होता है।।५-६।।

बुधफलम्—

बुधः प्रथमधामगो दिशति बन्धमर्थ धने
धनं रिपुभयान्वितं सहजगश्चतुर्थेऽर्थदः।
अनिर्वृतिकरो भवेत् तनयगोऽरिगः स्थानहा
करोति मदनस्थितो बहुविधा शरीरापदम्।।७।।
अष्टमे शशिसुतो धनवृद्धिं धर्मगस्तु महतीं धनहानिम्।
कर्मगः सुखमुपान्त्यगतोऽर्थं द्वादशे दिशति वित्तविनाशम्।।८।।

बुध जन्मराशि (१) में बन्धन, २ धन लाभ, ३ धन लाभ और शत्रुभय, ४ धनलाभ, ५ वैराग्य, ६ स्थान लाभ, ७ शरीर पीड़ा, ८ धन वृद्धि, ९ धन हानि, १० सुख, ११ धन लाभ, १२ धनहानि कारक होता है।।७-८।।

गुरुफलम्—

भयं जन्मन्यार्यो जनयति धने चार्थमतुलं
तृतीयेऽङ्गक्लेशं दिशति च चतुर्थेविलयम्।

सुखं पुत्रस्थाने रुजमथ च कुर्यादरिगृहे-
धनस्याप्ति द्यूने धननिचयनाशं च निधने।।९।।
धर्मगतो धनवृद्धिकरः स्यात् प्रीतिहरो दशमेऽमरपूज्यः।
स्थानधनानि ददाति च लाभे द्वादशगस्तनुमानसपीड़ा।।१०।।

बृहस्पति जन्म राशि से क्रमशः—१ भय, २ धन लाभ, ३ क्लेश, ४ धन हानि, ५ सुख, ६ रोग भय, ७ धन लाभ, ८ धन नाश, ९ धन वृद्धि, १० कलह, ११ स्थान और धनलाभ, १२ शारीरिक और मानसिक पीड़ा कारक होता है।।९-१०।।

शुक्रफलम्—

जन्मन्यरिक्षयकरो भृगुजोऽर्थदोऽर्थे
दुश्चिक्यगः सुखकरो धनदश्चतुर्थे।
स्यात् पुत्रकृत् तनयगोऽरिगतोरिवृद्धिं
शोकप्रदो मदनगो निधनेऽर्थदाता।।११।।
जनयति विविधाम्वराणि धर्मे न सुखकरो दशमे स्थितश्च शुक्रः।
धननिचयकरःस लाभ संस्थो व्ययभवने च गतोऽपि द्रव्यनाशम्।।१२।।

शुक्र—क्रमशः जन्मराशि से—१ शत्रु नाश, २ धन लाभ, ३ सुख, ४ धन, ५ पुत्र सुख, ६ शत्रु वृद्धि, ७ शोक, ८ धन लाभ, ९ वस्त्र लाभ, १० सुख हानि, ११ अत्यन्त धन लाभ, १२ धन नाश कारक होता है।।११-१२।।

शनिफलम्—

चित्तभ्रंशं दिनकरसुतो जन्मराशिं प्रपन्नो
वित्ते संस्थो धनहरणकृद् वित्तलाभं तृतीये।
पाताले शत्रुवृद्धिं सुतभवनगतः पुत्रभृत्यार्थनाशं
षष्ठस्थानेऽर्थलाभं जनयतिमदने दोषसंघं तथार्किः।।१३।।
शरीरपीड़ा निधने च धर्मे धनक्षयं कर्मणि दौर्मनस्यम्।
उपान्त्यगो वित्तमनर्थमन्त्ये शनिर्ददातीति फलानि गोचरे।।१४।।

शनि क्रमशः जन्म राशि से– १ चित्त में विक्षेप, २ धन हानि, ३ लाभ, ४ शत्रु वृद्धि, ५ पुत्र नौकर और धन की हानि, ६ धन लाभ, ७ दोष, ८ शरीर पीड़ा, ९ धन हानि, १० वैमनस्य, ११ धन लाभ, १२ अनर्थ फल देता है।।१३-१४।।

राहुकेतुफलम्–

राहुर्जन्मतो भयं च कलहं सौभाग्यमानक्षयम्
चित्तभ्रंशमहत्सुखं नृपमयं चार्थक्षयं यच्छति।
सन्तापं कलहं च वित्तमधिकं शीघ्रं विनाशं नृणां
केतुस्तत्फलमेव राशिषु ददात्युक्तं च गर्गादिभिः।।१५।।

राहु और केतु क्रम से जन्मराशि से १ भय, २ कलह, ३ सौभाग्य, ४ मान हानि, ५ चित्त में विक्षेप, ६ महा सुख, ७ राज भय, ८ धन हानि, ९ सन्ताप, १० कलह, ११ अधिक धन लाभ और १२ विनाश फल देते हैं।।१५।।

इति गोचरप्रकरणम् ।

अथ जातकस्कन्धम्

ज्यौतिषशास्त्र के ३ स्कन्ध हैं, १ सिद्धान्त, २ संहिता, ३ जातक। इनमें ग्रहयुति ग्रहण ग्रहबिम्बोदयास्त–आदि दृष्ट विषयों का साधन प्रत्यक्ष गणित द्वारा होने के कारण सिद्धान्त स्कन्ध को ही गणित स्कन्ध कहा गया है और ग्रहों के युत्यादि द्वारा मानव–समाज के अदृष्ट शुभाशुभ फल के विचार होने के कारण संहिता और जातक दोनों को फलित स्कन्ध कहा गया है।

ज्यौतिष के दोनों विभागों में क्रम से दृष्ट और अदृष्ट फल ज्ञानार्थ यहाँ के ऋषियों ने भिन्न भिन्न लग्न का साधन किया है। किन्तु तत्त्व को न जान कर यवनों ने सिद्धान्त कथित लग्न से ही अदृष्ट फल कथन के लिये भी अपने कुतर्क से भावों का भी साधन किया जिससे समस्त फलित ग्रन्थ में अनर्थता आती है।

फलितस्कन्ध में केवल अपने स्थान के स्पष्टसूर्य और इष्टकाल से लग्न का साधन किया गया है।

तथा गणितस्कन्ध में अपने–अपने यहाँ के–पलभा, चरखण्ड, स्वदेशोदय अयनांश तात्कालिक स्पष्ट सूर्य और सूर्योदय से इष्टकाल के ज्ञान से लग्न का

साधन होता है। जिससे भाव बनाने में कितने अनर्थ होते हैं इस बात को लग्न विवेक नामक निबन्ध में सतुक्ति सप्रमाण दिखलाया गया है। जो बुद्धिमान् जनों के विवेचनार्थ इस ग्रन्थ में भी संक्षेप से लिखा गया है।

जातकस्कन्ध में लग्न से सब प्रकार के फलादेश किये गये हैं। अतः लग्न साधन में जितने विषयों की आवश्यकता होती है उनको यहाँ क्रम से दिया जाता है।

समय परिभाषा (सावनमान) — राशि परिभाषा (सौरमान)—

समय परिभाषा (सावनमान)	राशि परिभाषा (सौरमान)
६० विपल = १ पल	६० प्रतिविकला = १ विकला =१ पल
६० पल = १ घटी (दण्ड)	६० विकला = १ कला = १ घटा
६० दण्ड = १ अहोरात्र	६० कला = १ अंश = १ दिन
३० अहोरात्र = १ मास	३० अंश = १ राशि = १ मास
१२ मास = १ वर्ष	१२ राशि = १ भगण = १ वर्ष

अंग्रेजी समय	**इसलिए—**
६० सेकेण्ड = १ मिनट	२।। दण्ड = १ घण्टा = होरा
६० मिनट = १ घण्टा	२।। पल = १ मिनट
२४ घण्टा = १ अहोरात्र	२।। विपल = १ सेकेण्ड

नवीन सांकेतिक चिन्ह—

= यह बराबर का चिन्ह है।	२ यह वर्ग का चिन्ह है।
+ यह जोड़ का चिन्ह है।	√ यह मूल का चिन्ह है।
— यह घटाव का चिन्ह है।	० यह अंश का चिन्ह है।
× यह गुणा का चिन्ह है।	। यह कला तथा पल का बोधक है।
÷ यह भाग का चिन्ह है।	।। यह विकला तथा विपल बोधक है।
	≈ यह अन्तर बोधक है।

होरादितःघट्यादिकेष्टकालम्—

सूर्योदयात् गतः कालो घट्याद्योऽत्रेष्ट उच्यते।
होरादिकं तु पञ्चघ्नं द्वयाप्तं घट्यादिकं भवेत्।।१।।

सूर्योदय से गत घट्यादि समय लग्न आदि साधन में इष्टकाल कहलाता है। यदि होरा (अर्थात् घण्टा मिनट) आदि मालूम हो तो उसे ५ से गुणा कर २ से भाग देने से घट्यादि इष्टकाल हो जाता है। इसमें तीन भेद हैं। यथा—

(१) दिन के पूर्वार्ध में (सूर्योदय से १२ बजे दिन तक) जितने घण्टा और मिनिट हो उसमें सूर्योदय के घण्टा मिनट घटाकर शेष को घट्यादि बनाने से

इष्टकाल होता है (२) १२ बजे दिन के बाद १२ बजे रात्रि तक के घण्टा मिनट पर से घट्यादि काल बनाकर दिनार्ध में जोड़ने से इष्टकाल होता है (३) १ बजे रात्रि के बाद सूर्योदय तक के घण्टा मिनट पर से घट्यादि बनाकर दिनमान और रात्र्यर्ध के योग में जोड़ने से इष्टकाल होता।।१।।

उदाहरण— शाके १८४८ संवत् १९८६ सन् १३३४ ई० माघ शुक्ल ११ शनिवार प्रातःकाल ७ बजकर ५१ मिनट पर मिथिला देश में किसी का जन्म हुआ तो उस दिन के सूर्योंद्रय घण्टा मिनट ६।२९ को जन्म समय के घण्टा मिनट ७।५१ में घटाने से शेष सूर्योदय से घण्टा मिनट १।२२ काल हुआ, इसको ५ से गुणा कर ५।११० = ६।५० इसमें २ के भाग देने से घट्यादि ३।२५, यह दिन के पूर्वार्ध में है इसलिये यही इष्टकाल हुआ। शनिवार है इसलिये दिन के स्थान में ७ रखने से दिनादि इष्टकाल = ७।३।२५ हुआ।

पञ्चाङ्गस्थग्रहे चलनात् ग्रहस्पष्टीकरणम्—

ऋणाख्यं चालनं ज्ञेयमग्रपङ्क्तीष्टकालयोः।
अन्तरं, तु धनाख्यं स्यात् पृष्ठपङ्क्तीष्टकालयोः।। २।।
धनर्णचालनेनैवं गतिर्निघ्नी, खषड्हृता।
लब्धांशाद्यैर्युतो हीनः पंक्तिखेटः स्फुटो भवेत्।। ३।।

(पञ्चांग में जिस दिन के स्पष्टग्रह बने रहते हैं वह दिनादि पंक्ति कहलाती है।) इष्टकाल से; अग्रिम पंक्ति और इष्टकाल का दिनादि अन्तर, ऋणचालन; तथा पिछली पंक्ति और इष्टकाल का दिनादि अन्तर धनचालन होता है। इस प्रकार दिनादि धनचालन को पंक्तिस्थ ग्रहों की कलादि गति से गुणाकर ६० का भाग देने से अंशादि लब्धि को पंक्तिस्थ ग्रहों में जोड़ने से तथा दिनादि ऋणचालन को गति से गुणाकर ६० का भाग देने से अंशादि फल को पंक्तिस्थग्रंहों में घटाने से तात्कालिक स्पष्ट ग्रह हो जाते हैं।। यथा— माघ- शुक्ल ११दिनादि इष्टकाल ७।३।२५ ।

पंक्ति माघशुक्ल ६ सोमे
मिश्रमानम् ४३।४९

सू.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	रा.
९	०	१०	१०	०	०	
२५	२८	६	१२	१४	१३	१४
१३	५०	४३	३८	४	८	९
२१	४०	५	४३	३५	३८	१८
१०	२८	९५	१३	७४	४	३
५६	४७	३८	२४	३१	१०	११

पंक्तिमाघशुक्ल १३ सोमे
मिश्रमानम् ४३।५०

सू.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	रा.
१०	१	१०	१०	१०	७	२
२	२	१६	१४	२३	१३	१३
१९	१९	४५	१७	२३	३३	४७
१३	०	४१	५०	१६	३	३
६०	३०	८०	१३	७४	३	३
४३	५५	५३	४०	३१	११	११

इन दोनों पंक्तियों में अग्रिम पंक्ति इष्टकाल के समीप है अत: अग्रिम पंक्ति दिनादि २।४३।५० में इष्टकाल दिनादि ७।३।२५ को घटाने से दिनादि ऋणचालन २।४०।२५ ।।२– ३।।

विशेष — जहाँ अन्तर करने में दिन संख्या में दिन की संख्या न घटे वहाँ दिन संख्या में ७ जोड़कर घटाना चाहिये। इसी प्रकार राशि के स्थान में १२ जोड़कर घटाया जाता है। यहाँ पंक्ति की दिन संख्या २ में इष्टकालदिन संख्या ७ नहीं घट सकती। अत: इष्ट दिन संख्या २ में ७ जोड़कर ९ के साथ अन्तर किया गया है।

खण्डगुणनमाह—

यज्जाति गुणखण्डं स्यात् तज्जातीयं फलं भवेत् ।
ग्राह्यमर्धाधिके रूपं त्याज्यमर्धाल्पके तथा ।।४।।

यज्जातीय गुणक का खण्ड रहता है, गुणनफल भी तज्जातीय होता है तथा स्वल्पान्तर से आधा से अधिक हो तो वहाँ १ ग्रहण किया जाता है। तथा आधा से अल्प हो तो त्याग भी कर दिया जा सकता है। इसलिये चालन दिनादि को गति की कलासे गुना करने से कलादि और गति की विकला से गुना करने से विकलादि फल होता है, इसलिये एक स्थान बढ़ाकर रखने से गोमूत्रिकाकार हो जाने के कारण गोमूत्रिकागुणन कहलाता है तथा यदि प्रतिविकला ३० से अधिक हो तो वहाँ १ विकला ग्रहण की जाती है, ३० से कम हो तो छोड़ दी जाती है ।।४।।

अब दिनादि चालन २।४०।२५ को पंक्तिस्थ सूर्य की कलादि गति ६०।४३। से गुणा करने के लिये न्यास-

गुणा करने से

(२।४०।२५) × ६०	= १२०'।२४००''।१५०० +
(२।४०।२५) × ४३''	= ८६।१७२०।१०७५
गुणा करने से योगफल	१२० । २४८६ ।३२१० । १०७५

इसमें ६० से भाग देकर चढ़ाने से अंशादि २ । ४२ । १९ । ४७ = २°। ४२' । २०'' स्वल्पान्तर से ५ श्लोकानुसार प्रतिविकला ४७ की जगह १ विकला ग्रहण करने से २० । ४२ । २० इसको ऋण चालन होने के कारण पंक्तिस्थ सूर्य १० । २ । १९ । १३ के अंशादि में घटाने से तात्कालिक स्पष्ट सूर्य ९ । २९ । ३६ । ५३ हुए। इसी प्रकार मंगलादिक ग्रहों की गति के चालन देने से तात्कालिक स्पष्ट ग्रह हुए, चक्र देखो।

तात्कालिकः स्पष्टग्रहाः संगतिकाः—

सू.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	रा.	चं.
९	१	१०	१०	१०	७	७	२
२९	०	१३	१३	२०	१३	१३	६
३६	५६	९	४१	४	२४	५५	२२
५३	२०	२६	१८	२	२७	३४	५८
६०	३०	८०	१३	७४	३	३	८०६
४३	५५	५३	४०	३१	११	११	३०

तत्र विशेषः—

अग्रपंक्तिग्रहोऽल्पश्चेत् पृष्ठपंक्तिस्थिताद् भवेत्।
तदा वक्रगतिर्ज्ञेयो व्यस्तं तच्चालनं स्मृतम्।।५।।

यदि पीछे की पंक्ति से अग्रिम पंक्ति में मंगलादि ग्रह की राश्यादि अल्प हो तो उसे वक्रगति समझना। वक्रगति का चालन विपरीत (धन में घटाने से, ऋण में जोड़ने से) होता है। अतः राहु केतु का चालन सदा विपरीत ही होता है।।५।।

यहाँ पृष्ठ की पंक्ति से अग्रिम पंक्ति में भौमादि पाँचों ग्रह की राश्यादि अधिक ही है अतः सबकी मार्गी गति होने के कारण सब में सूर्य के समान ही ऋण चालन फल घटाया गया है। केवल राहु में विपरीत अर्थात् ऋण चालन फल को जोड़ने से स्पष्टता हुई है।

अथ चन्द्र स्पष्टीकरण - चन्द्रमा अधिक गति होने के कारण भयात् और भभोग द्वारा ही स्पष्ट बनाया जाता है।

अतः भयात् -भभोगयोः परिभाषा—

नक्षत्रारम्भतः स्वेष्टकालं यावद् गतं हि तत्।
घट्यादिकं भयातं तद्, भस्य भोगो भभोगकः।।६।।

वर्तमान नक्षत्र आरम्भ से लेकर इष्टकाल पर्यन्त जितना समय (घटी पल) व्यतीत हुआ हो वह भयात् तथा नक्षत्र के आरम्भ से अंत तक का काल (घटी—पल) भभोग कहलाता है। इस प्रकार से पञ्चाङ्ग में नक्षत्र के घटी—पल देखकर सहज में भयात् भभोग बन जाता है।।६।।

अन्यच्च—

षष्ट्या गतर्क्षघट्याद्यं शोध्यं स्वेष्घटीयुतम्।
भयातं स्यात्, तथा स्वर्क्षघटीयुक्तं भभोगकः।।७।।

गत (वर्तमान से पहला) नक्षत्र की पंचाङ्गस्थ घटी को ६० में घटा कर शेष में इष्टकाल जोड़ने से भयात् और उसी शेष में वर्तमान नक्षत्र की पञ्चाङ्गस्थ घटी जोड़ने से भभोग होता है।।७।।

तथा—

पञ्चाङ्गर्क्षघटी-मानादिष्टकालोऽधिकस्तदा।
तदन्तरं भयातं स्याद् भभोगः पूर्ववत् सदा।।८।।

यदि पञ्चांग में लिखित नक्षत्र की से घटी से इष्टकाल अधिक हो तो इष्टकाल में नक्षत्र की घटी घटाने से भयात् होता है। भभोग, पूर्ववत् बनाना चाहिये।।८।।

इस प्रकार उक्त इष्टकाल में वर्तमान मृगशिरा नक्षत्र का भयात् ५८।१५ तथा भभोग ५९।३१ हुआ ।

सगतिस्पष्टचन्द्रसाधनार्थ नीलकण्ठोक्तप्रकरम्—

खपड्घ्नं भयातं भभोगोद्वृतं तत् खतर्कध्नधिष्ण्येषुयुक्तंद्विनिघ्नम्
नवाप्तं शशी भागपूर्वस्तु भुक्तिः खखाष्टभ्राष्टवेदा भभोगेन भक्ताः।९।

भयात के एकजातीय (फल) बनाकर उसको ६० से गुणा करके फल में भभोग के एक जातीय पल से भाग देने से जो लब्धि हो उसमें ६० से गुणित अश्विनी आदि गत नक्षत्र संख्या को जोड़कर जो हो उसको २ से गुना कर ९ के भाग देने से लब्धि अंशादि तात्कालिक स्पष्ट चन्द्रमा होता है। तथा ४८००० अड़तालिस हजार अंक में भभोग से भाग देने से लब्धि कलादि चन्द्रमा की स्पष्टगति होती है।।९।।

उदाहरण— भयात ५८।१५ के एक जातीय ३४९५ को ६० से गुना करने से २०९७०० इसमें भभोग ५९।३१ के एकजातीय ३५७१ से भाग देने से लब्धि - ५८।४३" । २३, इसमें गत नक्षत्र रोहिणी संख्या ४ को ६० से गुणित २४० जोड़ने से २९८।४३।२३ इसको २ से गुना करने से ५९७।२३।४६ इसमें ९ के भाग देने से ६६।२२।५८ यह अंशादि चन्द्रमा हुए, अंश में ३० से भाग देकर राश्यादि २।६।२२।५८ स्पष्ट चन्द्रमा हुआ। तथा भभोग एक जातीय बनाने के कारण ४८००० इसको ६० से गुणाकर २८८०००० इसमें भभोग ५९।३१ के एकजातीय ३५७१ से भाग देने से चन्द्रमा की स्पष्ट गति कलादि ८०६।३० हुई।

तात्कालिक-अयनांश-साधनम—

एकद्विवेदोनशका नवघ्ना दिग्भिर्हताश्चायनलिप्तिकास्ताः।
अंशीकृतार्कात् त्रिगुणान्नखाप्ततुल्याभिरेवं विकलाभिराढ्याः।१०।

इष्टशाके में ४२१ घटाकर शेष को ९ से गुनाकर १० के भागदेन से लब्धि अयन—कला होती है और तात्कालिक स्पष्टसूर्य को अंशात्मक बनाकर उसको ३ से गुनाकर २० के भाग से लब्धि अयन विकला जोड़कर कला में ६० के भाग देने से अयनांश होता है।।१०।।

उदाहरण— शाके १८४८ में ४२१ घटाने से १४२७ इसको ९ से गुणाकर १२८४३ इसमें १० के भाग देने से अयनकादि १२८४ । १८' । इसमें स्पष्ट सूर्य ९।२९।३६।५३ अंशात्मक २९९।३६।५३ को ३ से गुनाकर ८९८०।५०।३९ इसमें २० के भाग देने ने लब्धि विकलादि ४४९४५ विकला जोड़कर कलादि १२८५।३ इसके कलामें ६० के भाग देकर अयनांश २१०।२५।३ हुए।

अथ लग्न-परिभाषा—

भचक्रं प्राक्कुजे यत्र यत्र लग्नं तल्लग्नमुच्यते।
प्रश्चात् कुजेयत्लग्नं स्यान् मध्यं याम्योत्तरे यथा।।११।।

उदय क्षितिज में जो राशि इष्टकाल में वर्तमान हो वह प्रथम लग्न तथा अस्तक्षितिज में जो राशि हो वह सप्तम (अस्त) लग्न तथा ऊर्ध्व याम्योत्तर में दशम और अधोयाम्योत्तर में चतुर्थ लग्न कहलाती है। मध्य लग्न से दशम लग्न का बोध होता है।

जो राशि जितने समय तक क्षितिज में रहती वह पलात्मक समय उस राशि का उदयमान कहलाता है। वह हर एक राशि का भिन्न—भिन्न और पलभा के भेद से हर एक देश के भिन्न—भिन्न मान होते हैं। वे अपने—अपने देश के पलभा पर से चरखण्ड द्वारा बनते हैं।।११।।

(ग्रहलाघवोक्तपलभा-चरखण्डानयनश्च)

मेषादिगे सायनभागसूर्ये दिनार्धजा भा पलभा भवेत् सा।
त्रिष्ठा हता स्युर्दशभिर्भुजङ्गैर्दिग्भिश्चराधानि गुणोद्धृतान्त्या।१२।

सायन मेषार्क या सायन तुलार्क संक्रान्ति (दण्ड दिन मान) में मध्याह्नकालिक १२ अङ्गुल शंकु की छाया अङ्गुलादिक पलभा कहलाती है। उसको ३ स्थान में रखकर प्रथम स्थान में १० से गुणा करना द्वितीय स्थान में ८ से गुणा करना

और तृतीय स्थान में १० से गुणाकर ३ से भाग देना तो क्रम से ३ चरखण्ड होते हैं।।१२।।

उदाहरण- यथा काशी की पलभा अङ्गुलादि ५।४५ ।। और मिथिला की पलभा = ६ अङ्गल है। अतः उक्तरीति से-

काशी के चरखण्ड	मिथिला के चरखण्ड
(५।४५) × १० = ५७ स्वल्पान्तर से	६ × १० = ६०
(५।४५) × ८ = ४६ स्वल्पान्तर से	६ × ८ = ४८
(५।४५) × १० / ३ = १९ स्वल्पान्तर से	६ × १० / ३ = २०

अथ लङ्कोदयमानानि तथा तेभ्यः स्वोदयसाधनम्

लङ्कोदया विघटिका गजभानिगोङ्क-
दस्त्राख्रिपक्षदहनाः क्रमगोत्क्रमस्थाः ।
हीनान्विताश्चरदलैः क्रमगोत्क्रमस्थै-
र्मेषादितोघटत उत्क्रमतस्त्विमेस्युः ।।१३।।

२७८।२९९।३२३ ये पलात्मक क्रम और उपक्रम से रखने से मेषादि ६ राशियों के लङ्कोदय मान होते हैं। इन्हीं में मेषादि ३ राशियों में क्रम से चरखण्ड घटाने से और कर्कादि ३ राशियों में उतक्रम से तीनों चरखण्ड जोड़ने से स्वदेशीय उदयमान मेषादि ६ राशियों क होते, वे ही उतक्रम से तुलादि ६ राशियों के भी होते हैं ।।१३।।

यथा— लङ्कोदय + चरखं + काश्युदय	लङ्कोदय + चरखं = मिथिलोदय
मे. मी. = २७८ - ५७ = २२१	मे. २७८ - ६० = २१८ = मी.
बृ. कुं. = २९९ - ४६ = २५३	बृ. २१९ - ४८ = २५१ = कुं
मि. म. = ३२३ - १९ = ३०५	मि. ३२३ - २० = ३०२ = मं.
कं. ध. = ३२३ + १९ = ३४२	कं. ३२३ + २० = ३४३ = ध.
सिं. बृ. = २९९ + ४६ = ३४५	सिं. २९९ + ४८ = ३१७ = बृ.
कं. तु. = २७८ + ५७ = ३३४	कं. २७८ + ६० = ३३८ = तु.

लग्न-साधन प्रकारम्

सायनार्कस्य भुक्तांशा भोग्यांशाः स्वोदयैर्हता ।
१२ त्रिंशता विहृता लब्धं पलानीष्टात् पलीकृतात् ।।१४।।

विशोध्यानि ततो भुक्त-भोग्यराशिपलान्यपि ।
शोध्यान्येवं च यन्मानं शुद्धयेत् शोऽशुद्धसंज्ञकः ।।१५।।
शेषं त्रिंषद्गुणं भक्तमशुद्धभवनोदयैः ।
लब्धमंशाद्यशुद्धर्क्षे शौध्यं, योज्यं च शुद्धभे ।।१६।।
क्रमात् सायन लग्नंस्यात् भुक्तभोग्यप्रकारपोः ।
व्ययनांशं च तत् कृत्वा फलार्थं लग्नमाह्तम् ।।१७।।

तात्कालिक स्पष्टसूर्य में अयनांश जोड़कर (यदि भुक्तप्रकार से लग्न बनाना हो तो) भुक्तांश को, (यदि भोग्य प्रकार से लग्न बनाना हो तो) भोग्यांश का सायनसूर्याक्रान्त राशि के स्वोदयमान से गुणा कर ३० से भाग देने से लब्धि भुक्त, या भोग्य पल होता है, उसको पलीकृत इष्टकाल में घटाना शेष में (यदि भुक्त प्रकार हो तो) गतराशि के उदयान, (यदि भोग्य प्रकार हो तो) गम्य (अग्रिम) राशि के स्वदेशोदयमान जितने घटे घटाना चाहिए, जिस राशि तक उदय घटे उसे शुद्ध संज्ञक और जिसके उदय नहीं घटे उसे अशुद्ध संज्ञक समझना चाहिये। और इष्ट कालावशेष को ३० से गुणाकर अशुद्धराशि के उदय मान से भाग देकर लब्धि अंशादि को भुक्त प्रकार में अशुद्धराशि संख्या में घटाने से और भोग्य प्रकार में शुद्धराशि संख्या में जोड़ने से सायनलग्न होता है, अतः उसमें अयनांश घटाने से फलकथनोपयुक्त लग्न (प्रथम लग्न) होता है ।।१४—१७।।

तत्र भुक्तभोग्ये-विशेषः

दिवागतेष्टे रविभोग्यभागैर्दिवावशेषे सरसार्कभुक्तैः ।
निशागतेष्टे सरसार्कभुक्तैर्निशावशेषे रविभुक्तभागैः ।।१८।।

(दिनार्ध से अल्प में) दिनगत इष्टकाल और सायन सूर्य पर से भोग्य प्रकार से, यदि दिनशेष (दिनमानमें इष्ट घटाकर शेष) इष्टकाल हो तो सा[illegible] सूर्य में ६ राशि जोड़कर भुक्त प्रकार से, यदि रात्रिगत इष्टकाल हो तो सा[illegible] सूर्य में ६ राशि जोड़कर भोग्य प्रकार से, तथा यदि रात्रिशेष में इष्टकाल हो [illegible] सायनसूर्य से भुक्तप्रकार से लग्न बनाने में स्फुटता और सुगमता हो[illegible] ।।१८।।

उदाहरण- पूर्वोक्त दिनगत इष्टकाल ३।२५ दिनार्ध से अल्प है अतः भोग्यप्रकार से लग्नानयन करने के लिए स्पष्टसूर्य ९।२९।३६।५३ में अयनांश २१।२५।३ जोड़ने से १०।२१।१।५६ इसके भोग्यांस ८।५८।४ को (सायन सूर्य कुम्भ में है अत:) मिथिला देशीय कुम्भोदय २५१ से गुणा करने से २००८।१४५५८।१००४ हुआ इसे ६० से सवर्णन करने से २२५।५४।४४ इसमें ३० के भाग देने से भोग्यपलादि ७५।१।३९ इसको इष्टकाल ३।२५ के पल २०५ में घटाने से १२९।५८।११ हुआ इसमें भोग्यप्रकार होने के कारण अग्रिम (मीन) राशि के उदय २१८ घटाना चाहिये सो नहीं घटता अतः मीन अशुद्ध हुआ तथा कुम्भ शुद्ध हुआ। अवशेष १२९।५८।११ को ३० से गुणा करने से ३८७०।१७४०।३३०, साठ से सवर्णन करने से ३८९९।५३० इसमें अशुद्ध (मीन) के उदय २१८ से भाग देने से लब्धि अंशादि १७।५३।८ इसको शुद्ध राशि कुम्भ की संख्या ११ में जोड़ने से सायन लग्न राश्यादि ११।१७५३।८, इसमें अयनांश २१।२५।३ घटाने से फल कथनार्थ स्पष्ट प्रथम लग्न राश्यादि १०।२६।२८।५ हुआ ।

लग्नानयने विशेषः

भुक्तभोग्यपलान्येवं निजेष्टादधिकानि चेत् ।
तदेष्टात् त्रिंशता निघ्नात् सूर्याक्रान्तोदयैर्हतात् ।।१९।।
लब्धांशै रहितो युक्तो रविरेव तनुर्भवेत् ।

पूर्वोक्त क्रिया से भुक्त प्रकार में भुक्त पल, और भोग्य प्रकार में भोग्य पल यदि इष्ट काल से अधिक हो तो उस हालत में पलीकृत इष्ट काल को ३० से गुणा कर सूर्य जिस राशि में हो उसके स्वदेशीय उदय मान से भाग देकर लब्ध अंशादि (भुक्त प्रकार में) सूर्य में घटाने से और (भोग्य प्रकार में) सूर्य में जोड़ने से लग्न ही जाता है ।।१९।।

उदाहरण- यदि इष्टकाल घट्यादि १।५ हो तो इसके पल ६५ से पूर्व साधित रवि के भोग्य फल ७५।१।४९ अधिक है इसलिए नहीं घट सकता है, अतः यहाँ इष्ट पल ६५ को ३० से गुणा कर १९५० इसमें सायन सूर्य के उदय २५१ से भाग देने से अंशादि ७।४६।८ इसको स्पष्ट सूर्य १।२९।३६।५३ में जोड़ने से १०।७।२३। यह स्पष्ट प्रथम लग्न हुआ।

पुनश्च

लग्नं तूदयकाले स्यात् रविरेव हि सर्वदा ।
अस्तकाले सषड्भार्कतुल्यं ज्ञेयं विपश्चिता ।।२०।।

सूर्योदय काल में स्पष्ट सूर्य ही लग्न होता है। तथा सूर्यास्त समय में स्पष्ट सूर्य में ६ राशि जोड़ने से लग्न होता है ।।२०।।

अथ दशम (मध्य) लग्न साधनार्थं नतकालानयनम्

पूर्वं नतं स्याद् द्युदलाल्पमिष्टं दिनार्धमानात् प्रविशोध्य शेषम्।
इष्टे दिनार्धादधिके विशोध्यं दिनार्धमिष्टादपरं नतं स्यात् ।।२१।।

दिनार्ध से अल्प इष्टकाल हो तो दिनार्ध में इष्टकाल घटाकर शेष दिवा पूर्वनत होता हैं तथा दिनार्ध से अधिक दिवा इष्टकाल में दिनार्ध घटाने से दिवा पश्चिम नत होता है। एवं दिनमान से अधिक इष्टकाल हो तो उसमें दिनमान घटाकर शेष रात्रि गत इष्ट कहलाता है। वह रात्रिगत इष्ट यदि रात्र्यर्ध से अल्प हो तो रात्र्यर्ध में घटाकर शेष रात्रि पूर्ववत होता है। यदि रात्रि गत इष्ट रात्र्यर्ध से अधिक हो तो उसी में रात्र्यर्ध घटाने से रात्रि पश्चिम नत होता है ।।२१।।

उदाहरण- यथा पूर्वोक्त इष्टकाल ३।३५ दिनार्ध १३।४६ से अल्प है अतः दिनार्ध में इष्टकाल- घटाकर शेष १०।२२ यह दिवा पूर्वनत हुआ ।

अथ दशम चतुर्थ (मध्य) भावानयनम्

एवं स्वबुद्धया सुधिया विधेयं रात्र्यर्धतो रात्रिगतं नतं च ।
लङ्कोदयैः पूर्वनतात् प्रसाध्यं भुक्तप्रकारेण पुरोदितेन ।।२२।।
भोग्यप्रकारेण वरान्नताद्यल्लग्नं भवेत् तत् किल मध्यसंज्ञम् ।
रात्रौ प्रसाध्यं च सषड्भसूर्यात् भवेत् सषड्भं तदधःखलग्नम्२३।

यदि दिवा पूर्वनत हो तो नत को इष्टकाल मानकर लङ्कोदय के द्वारा भुक्त प्रकार से तथा यदि पश्चिम नत हो तो भोग्य प्रकार से पूर्ववत् सायन सूर्य से लग्न बनाने से मध्य लग्न होता है। यदि रात्रिगत नतकाल हो तो सायन सूर्य में ६ राशि जोड़कर उक्त रीति से रात्रिगत नतकाल इष्ट मान कर मध्यलग्न बनाना चाहिये, दशमलग्न में ६ राशि जोड़ने से अधः खलग्न होता है ।।२२–२३।।

उदाहरण- दिवा पूर्वनत १०।२२ यह इष्टकाल हुआ। पूर्वनत होने के कारण भुक्त प्रकार की क्रिया होगी, सायन सूर्य १०।२१।१।५६ के भुक्तांश २१।१।५६ को कुम्भ के लङ्कोदय २९९ से गुणा करने से ६२७९।२९९।१६७७४ साठ सवर्णन करने से ६२८८।३३।३४ इसमें ३० से भाग देने से २०९।३७।१७ इसको नतकाल के पल ६२२ में घटाने से शेष ४१२।२२।४३ इसमें गत मकर राशि के लङ्कोदय ३२३ घटाने से शेष ८९।२२।४३ इसमें धनु का उदय ३२३ नहीं घटता इसलिये धनु अशुद्ध हुआ। अतः शेष ८९।२२।४३ को ३० से गुणाकर २६७९।६६०।१२९२६७९।२१।३० इसमें अशुद्ध धनु के लंकोदय २२३ से भाग देने से लब्धि अंशादि ८।१८।५ इसको अशुद्धराशि संख्या ९ में घटाने से ८।२१।४१।५५ इसमें अयनांश २१।२५३ घटाने से ८। ।१६।२१।

यह मध्य हुआ। मध्य लग्न में ६ राशि जोड़ने या घटाने से २।०।१६।५२ यह अधोमध्य लग्न हुआ ।

मध्यलग्ने विशेषः

ज्ञेयं दिवा नताभावे रविरेव खलग्नकम्।
एवं रात्रिनताभावे सषड्भरविणा समम् ।।२४।।

यदि दिन में नत शून्य हो तो स्पष्ट सूर्य के तुल्य ही मध्य लग्न होता है तथा रात्रि में नत शून्य हो तो स्पष्ट सूर्य में ६ राशि जोड़ने से मध्य लग्न होता है।।२४।।

अथ लाघवरीत्या ससन्धिभावानयनम्

लग्नं सषड्भमस्तर्क्ष तथा लग्नोनतुर्यतः ।
षष्ठांशयुक्तनुः सन्धिरग्रे षष्ठांशयोजनात् ।।२५।।
त्रयः ससन्धयो भावा ज्ञेयाबुद्धिमता ततः।
त्रिद्विभावौ क्रमाद्युक्तौ द्वाभ्यां वेदैः सुतद्विषौ।।२६।।
षड्भावा इति लग्नाद्याः सषड्भाः सप्तमादयः।
त्रिद्वयेकसन्धस्त्वेक-त्रि पञ्चभयुताः क्रमात्।।२७।।
सन्धयः स्युश्चतुर्थाद्याः सषड्भाः षडमी परे।
ग्रहः सन्धिद्वयान्तःस्थो ज्ञेयस्तद्भावगः सदा।।२८।।

लग्न में ६ राशि जोड़ने से सप्तमभाव होता है तथा लग्न को चतुर्थ भाव में घटाकर शेष के षष्ठांश जोड़ने से लग्न की सन्धि होती है। उसमें फिर वही षष्ठांश जोड़ने से द्वितीय भाव, द्वितीय भाव में उसी षष्ठांश को जोड़ने से द्वितीय भाव की सन्धि, द्वितीय की सन्धि में षष्ठांश जोड़ने से तृतीय भाव, तृतीय भाव में षष्ठांश जोड़ने से तृतीय भाव की सन्धि होती है तथा तृतीय भाव में २ राशि जोड़ने से पञ्चम भाव होता है और द्वितीय भाव में ४ राशि जोड़ने से षष्ठ भाव होता है। इस प्रकार लग्नादिक ६ भावों में ६, ६ राशि जोड़ने से चतुर्थ भाव की सन्धि होती है, द्वितीय की सन्धि में ३ राशि राशि जोड़ने से पञ्चम की सन्धि और प्रथम लग्न की सन्धि में ५ राशि जोड़ने से षष्ठभाव की सन्धि होती है तथा प्रथम आदि सन्धि में ६, ६ राशि जोड़ने से सप्तम आदि ६ भावों की सन्धियाँ होती है और जिन दो सन्धियों के बीच में ग्रह हों उन दोनों

सन्धि के मध्यवाले भाव में ही उस ग्रह को समझना और उसी भाव का फल वह ग्रह देता है।।२५–२८।।

उदाहरण- पूर्व साधित प्रथम लग्न १०।२६।२८।५।। सप्तम लग्न ४।२६।२८।५ चतुर्थ लग्न २।०।१६।५२। दशम लग्न ८००।१६।५२।।

प्रथम लग्न को चतुर्थ लग्न में घटाने से शेष ३।३।४८।४७ इसके षष्ठांश ०।१५।३८।७।५० इसको लग्न में जोड़ने से लग्न की सन्धि, फिर उसमें षष्ठांश को ही जोड़कर द्वितीय भावादिक होते है, जैसे-

षष्ठांश = ०।१५।३८।७।५०

लग्न = १०।२६।२८।५।००

लग्न सन्धि = ११।१२।६।१२।५०

द्वितीय भाव = ११।२७।४४।२०।४०

द्वितीय सन्धि = ०।१३।२२।२८।३०

तृतीय भाव = ००।२९।०।३६।२०

तृतीय सन्धि = १।४।३८।४४।१०।

इस प्रकार ससन्धि तीन भावों के साधन करके तृतीयं भाव में २ राशि जोड़ने से पञ्चम भाव = २।२९।०।३६।२०

द्वितीय में ४ राशि जोड़ने से षष्ठ भाव = ३।२७।४४।२०।४०

तृतीय सन्धि में १ राशि जोड़ने से चतुर्थ सन्धि = २।१४।३८।४४।१०

द्वितीय सन्धि में ३ राशि जोड़ने से पञ्चम सन्धि = ३।१३।२२।२८।३०।

लग्न सन्धि में ५ राशि जोड़ने से षष्ठ की सन्धि = ४।१२।६।१२।५०।

इस प्रकार ससन्धि लग्नादि ६ भाव वनें। लग्नादि भाव और सन्धि में ६,६, राशि जोड़ने से ससन्धि सप्तमादि भाव होते हैं। जैसे-

सप्तम भाव ४।२६।२८।५	सप्तम सन्धि ५।१२।६।१२।५०
अष्टम भाव ५।२७।४४।२०।४०	अष्टम सन्धि ६।१३।२२।२८।३०
नवम भाव ६।२९।०।३६।२०	नवम सन्धि ७।१४।३८।४४।१०
दशम भाव ८।०।१६।५२	दशम सन्धि ८।१४।३८।४४।१०
एकादश भाव ८।२९।०।३६।२०	एकादश सन्धि ९।१३।२२।२८।३०
द्वादश भाव ९।२७।४४।२०।४०	द्वादश सन्धि १०।१२।६।१२।५०

अब इस प्रकार के लग्नादि भावों में प्रत्यक्ष प्रमाणों और युक्तियों से जो असंगति होती है उसको मेरे पिता जी (सीताराम झा) ने जो दिखाया है उसको संक्षेप में विज्ञजनों के समक्ष रखता हूँ।

यथा-लग्नविवेकम्

गिरं गुरुं गणेशञ्च नत्वा लक्ष्मीं तदीश्वरम्।
अदृग्दृक्फलसिद्ध्यर्थ द्विधा लग्नं विविच्यते।।१।।

राशिस्वरूपम्

नक्षत्राणां समूहो यः स राशिरिति कथ्यते।
भवृत्तस्यार्कभागोऽ हिराशिरेवाभिधीयते।।२।।

आकाश में जो नक्षत्रों (ताराओं) के समूह हैं, उसे ही राशि कहते हैं, एवं क्रान्तिवृत्त के बारहवें भाग को भी राशि ही कहते हैं।।२।।

विवरण- सूर्य अपनी पूर्वाभिमुखगति से जिस मार्ग से चलता हुआ प्रतीत होता है उसे भवृत या क्रान्तिवृत्त कहते हैं। उसके निकट स्थित रेवती तारान्त विन्दु से क्रान्तिवृत के तुल्य १२ भाग मेषादि नाम से १२ राशियाँ कही जाती हैं। मेषादि प्रतिराशि के आदि और अन्तगत दो दो कदम्बप्रोतवृत के बीच में जितने नक्षत्र समूह हैं उन सबों की मेष आदि राशि ही संज्ञा है। वह नक्षत्रविम्बो के समूह राशि का शरीर तथा क्रान्तिवृत में राशि का स्थान कहा जाता है।

अतो राशिर्द्विधा प्रोक्तः स्थानबिम्बप्रभेदतः।
प्रत्यक्षो बिम्बरूपोऽस्ति, यत्स्थानं च भवृत्तगम्।
बिन्दुरूपं हि तच्चापि राशिनाम्नैव कथ्यते।।३।।

इसलिये स्थान और बिम्ब (देह) भेद से राशि दो प्रकार की होती है। उसमें नक्षत्र बिम्ब समूह रूप राशि तो प्रत्यक्ष दृश्य है, तथा स्थान रूप राशि तो क्रान्तिवृत्तस्थित बिन्दुरूप है।।३।।

लग्नम्

''राशीनामुदयो लग्नमित्युक्तं कोषकारकैः।
लगति क्षितिजे यस्मात् तस्मादन्वर्थनामभाक्।।४।।
भेदद्वयाच्च राशीनां लग्नं चापि द्विधा मतम्।
एकं तत्र भबिम्बीयं भवृत्तीयं द्वितीयकम्।।५।।

कोषकोरों ने राशियों के उदय को लग्न नाम दिया है, वे क्षितिज में लगने के कारण अन्वर्थ संज्ञक हैं। राशियों के दो भेद होने के कारण लग्न भी दो प्रकार के होते हैं— एक भबिम्बीय (नक्षत्रबिम्बोदयवश) द्वितीय प्रवृतीय (क्रान्ति वृत्तीयस्थानोदयवश)।।४—५।।

अथ लग्न प्रयोजनम्

एतयोर्लग्नयोर्लोके पृथगस्ति प्रयोजनम्।
जन्मयात्रा-विवाहादौ भवृम्बीयं फलप्रदम्।।६।।
लग्नं ग्राह्यं भवृत्तीयं ग्रहणादिग्रसिद्धये।

उन दोनों प्रकार के लग्नों में—जन्म—यात्रा विवाह—यज्ञादि सत्कर्मों में भबिम्बीय लग्न फलप्रद होता है तथा ग्रहण आदि (ग्रह— नक्षत्रबिम्बोंदयास्त) प्रत्यक्ष विषय के कालादि ज्ञान के लिये भवृत्तीय लग्न का प्रयोजन होता है। अतएव 'अदृष्टफल सिद्धयर्थ, विवाह यात्रादि कार्य में बिम्बीय लग्न और ग्रहणादि काल ज्ञानार्थ स्थानीय लग्न को ग्रहण करना चाहिये।।६।।

उपपत्ति- इसकी यह है कि-राशि-बिम्बों के क्षितिज में उदय होने से उनकी किरणें पृथ्वी पर फैलती हैं। उन किरणों के गुण (शुभया अशुभ) का प्रभाव समय और प्राणियों पर पड़ता हैं, इसलिये अदृष्ट फल प्राप्ति की कल्पना से यात्रा विवाहादि में विम्बीय लग्न ग्रहण करने को मुनियों ने आदेश किया है तथा भववृत्तीय (विन्दु रूप) लग्न से ग्रहण में ग्रास-स्पर्श-मोक्षादि काल को सूक्ष्म ज्ञान होता है। इसलिये दृष्ट विषय ज्ञानार्थ अपने अपने स्थानीय उदयमान सिद्ध भवृत्तीय लग्न का उपयोग करने का आदेश है।

बिम्बीयलग्ने विशेषः

विम्बोदयाच्चतन्वादि-भावास्तुल्याश्च द्वादश।।७।।
कल्पितास्तत्फलं ज्ञातुं मुनिवर्यैः शुभाशुभम्।

मुनियों ने बिम्बोदय (लग्न) से तनु धन आदि भावों के फल ज्ञानार्थ तुल्यमान से १२ भावों की कल्पना की है। इसलिये बिम्बीय लग्न का भावलग्न नाम रक्खा गया है।।७।।

अथ भावलग्नानां मानानि

उदयास्तत्र राशीनां तुल्याः पञ्चघटीमिताः।।८।।
तावद्भिरेव सर्वत्र घटीभिस्तत्प्रसाधनम्।
विहितं जातकस्कन्धे मुनिवर्यैः पुरातनैः।।९।।
शुभाशुभं फलं ज्ञातुं जन्मिनां भूमिवासिनाम्।

उन बारह (१२) राशियों के उदयमान ५ घटी होते हैं। इसलिए समस्त पृथ्वी पर जन्म लेने वालों के शुभाशुभ फल जानने के लिये सर्वत्र ५ घटी मान से ही १२ भावों का साधन मुनियों ने किया है।।८—९।।

भवृत्तीयलग्नम्

गृहीतं गणितस्कन्धे भवृत्तीयं विलग्नकम्।।१०।।
स्वस्वदृष्टिवशाद्यस्मान्नृणां दृक्प्रत्ययो भवेत्।
सिद्धान्ते साधितं तस्माल्लग्नं स्वस्वोदयैः पृथक्।।११।।

मुनियों ने ग्रहणादि प्रगनार्थ गणित (सिद्धान्त) स्कन्ध में क्रान्तिबृत्तीय लग्न ग्रहण किया है। प्राणियों को अपनी अपनी दृष्टि से ही कोई दृश्य पदार्थ प्रत्यक्ष होता है, इसलिये सिद्धान्तस्कन्ध में अपने स्थानीय भवृत्तीय राश्युदय द्वारा लग्न साघन किया गया है।।१०—११।।

भावलग्ने अदृष्टफलप्रदत्वम्

राशिबिम्बवशादेव फलं भवति देहिनाम्।
शुभाशुभं सदा, नैव स्थानविन्दोर्भवृत्तगात्।।१२।।

प्राणियों को सदा राशि के बिम्बवश ही शुभाशुभ फल की प्राप्ति होती है, क्रान्तिवृत्तगत बिन्दुरूप—स्थान से नहीं।।१२।।

भवृत्तस्थानविन्दूनामुदयः क्षितिजे यदा।
नैव नक्षत्रविम्बानां कदाचिदुदयस्तदा।।१३।।
उन्नाम्यन्ते शरैरूर्ध्वं नाम्यन्ते वा कुजादधः।
जिनाधिकाक्षदेशे तु सदैवेति स्थितिर्ध्रुवा।।१४।।

जिस समय भवृत्तीय स्थान विन्तुओं का अपने अपने क्षितिज में उदय होता है उस समय सब नक्षत्रों के बिम्बों का उदय नहीं होता है। स्थानोदय के समय में नक्षत्रों के बिम्ब अपने—अपने शर के द्वारा या तो क्षितिज से ऊपर अथवा क्षितिज से नीचे रहते हैं। २४ से अधिक अक्षांश देश में सब नक्षत्रों की सदा यही स्थिति रहती है (क्योंकि अश्विन्यादि सब नक्षत्रों के कुछ न कुछ शर उपलब्ध होते ही हैं)।।१३—१४।।

तस्माद् दृष्टफलायैव विलग्नं क्रान्तिवृत्तगम्।
अदृष्टफलसिद्ध्यर्थं बिम्बीयं भावसंज्ञकम्।।१५।।

साधितं मुनिवर्यैस्तश्च ज्ञात्वा येन केनथित्।
यवनेन प्रमादाद्वा कुतर्काद्वा स्फुटभ्रमात्।।१६।।
स्वस्वदेशोदयैः सिद्धाल्लग्नीनात् तुर्यभावतः।
षष्ठांशयोजनाद् भावा आर्षभिन्ना प्रसाधिताः।।१७।।
अभवन् सहसा केचिद् विज्ञास्तदनुगास्ततः।
भारते यवनाक्रांन्ते परतन्त्रत्वमागते।।१८।।
ज्योतिर्विदोऽत्र सर्वेऽपि संमील्य ज्ञानलोचनम्।
विस्मृत्यैव शुभां रीतिं नीलकण्ठमुखाविदः।।१९।।
अन्धेन नीयमानान्धा इव संचालिता बुधोः।।२०।।

इसी (ऊपर कहे हुए) हेतु से दृष्टफल (ग्रहण, ग्रहबिम्बोदयादि) ज्ञान के लिये स्वस्वदेशोदयसिद्ध स्थानीय लग्न तथा अदृष्ट (विवाह यात्रादि में शुभाशुभ) फलज्ञानार्थ बिम्बीय भावलग्न का साधन मुनियों ने किया। किन्तु किसी ने मुनियों के कहे हुए तत्व को न जानकर प्रमाद या कुतर्क * अथवा स्वदेशोदयसिद्ध लग्न को स्पष्ट (भावलग्न से अच्छा) होने के भ्रम से स्वदेशोदयसिद्धलग्न से ही आर्षविरुद्ध द्वादशभावों का साधन प्रकार (लग्नीनतुर्यतः षष्ठांशयुक इत्यादि) बनाया। फिर सहसा (इस प्रकार में दोषों को बिना विचारे ही प्रमादवश) बहुत से ज्यौतिष भी उसके अनुयायी बन गये एवं भारत को यवनों के आक्रमण से परतन्त्र हो जाने पर सब ज्यौतिषयों ने इसी मत को अपनाया, फिर नीलकण्ठ आदि भी अपने ज्ञानरूप नेत्र को मूँदकर अन्धे के सहारे चलनेवाले अन्धों के समान चलने लगे जो परम्परा–सी बनाई गई।।१५–२०।।

ततः परं श्रीकमलाकरेण ज्योतिर्विदम्भोजदिवाकरेण।
विनिन्द्य सर्वानपि जातकज्ञान् ग्रन्थे निजे तत्त्वविवेकसंज्ञे।।२१।।
यथोदितं स्वमतं तथाहं वदामि विज्ञा इह तन्मुखोक्त्या।
''महर्षिभिः स्वीयकृतौनिरुक्तालग्नांशतुल्यारविसंख्यकाये।।२२।।
भावाः समा एव सद फलार्थग्राह्यास्त एव ग्रहगोलविद्भिः।

* (किसी लाल बुझक्कर ने समझा कि - जब स्वदेशोदयसिद्ध लग्न से दृष्ट (ग्रहणादि) फल मिलते हैं, तो इसी से अदृष्ट फलादेश भी करना चाहिये ऐसा कुविचार)।

मुन्युक्तभावात् परतोऽपि पूर्वं तिथ्यंशकैस्तस्य फलं निरुक्तं।।२३।
लोकेषु मूर्खोदरपूरणार्थं मूर्खैर्विलग्नाद्द्रविसंख्यका ये।
भावानिरुक्ताःस्वधियात्वनार्षा सम्यक्फलार्थं नहितेऽवगम्याः।।२४।।

तदनन्तर इस अनर्थ को देखकर ज्योतिर्वित् कमलवन में सूर्य के समान श्रीकमलाकरभट्ट ने अपने तत्त्वविवेक नामक अति श्रेष्ठ सिद्धान्त ज्योतिष ग्रन्थ में उन ज्योतिषियों की निन्दा करते हुए जिस प्रकार अपना मत कहा है उसको मैं उन्हीं के शब्दो में यहाँ कहता हूँ।।' यथा—महर्षियों ने अपने—अपने ग्रन्थ में लग्न के अंश तुल्य ही (लग्न राश्यादि में एक एक राशि जोड़कर) अंशवाले तुल्य उदयमान से जो द्वादश भावों का साधन किया है— हे ग्रहगोलज्ञ! सर्वदा फल (अदृष्ट फल) ज्ञानार्थ उन्हीं भावों को ग्रहण करना चाहिये। उन मुनियों के कहे हुए भावों से १५ अंश पूर्व से १५ अंश आगे तक (पूरे ३० अंश के भीतर) उस भाव का फल कहा गया है। किन्तु लोक में मूर्खों ने अपने सदृश मूर्खों के पेट पालने के लिए अनार्ष (आर्षविरुद्ध) स्वस्त्रोदय मान सिद्ध जो द्वादशभावों की (अपने कुर्तक द्वारा) कल्पना की है उन भावों को फलकथन (विवाह यात्रादि) में कभी भी उपयुक्त नहीं मानना चाहिये''।।२१—२४।।

इति भट्टेन यत् प्रोक्तं तत् तथ्यं युक्तिसंयुतम्।
तद्कारणं मयाऽप्युक्तं पूर्वमन्यच्च संश्रृणु।।२५।।

इस प्रकार भट्ट का कहना सर्वथा सत्य और युक्तिसंगत है, इसका कारण मैं भी पूर्व कह चुका हूँ तथा और भी सुनिए।।२५।।

यथा बिम्बीयराशीनां सर्वेषामुदयः सदा।
सर्वस्य क्षितिजे तद्वत् स्थानीयानां न भूतले।।२६।।

पृथ्वी पर रहनेवाले सबके क्षितिज में जिस प्रकार बिम्बीय १२ राशियों के उदय सर्वदा होते हैं, उसी प्रकार स्थानीय (भवृत्तीय) सब राशियों के उदय नहीं होते हैं।।२६।।

विवरण- भूगोल में रूपरेखा क्रान्तिवृत की स्थिति पूर्वापर रूप है। अतः भचक्र के पूर्वापर भ्रमण होने के कारण सर्वत्र सब के क्षितिज में क्रान्तिवृतीय सब राशियों के उदय नहीं होते हैं किन्तु बिम्बीय राशियों की स्थिति दक्षिणोत्तर भाव में (उत्तर कदम्ब से दक्षिण कदम्ब तक) सावयव रूप फैले हुए हैं, इसलिए भचक्र के पूर्वापर भ्रमण होने के कारण-पृथ्वी पर रहनेवाले सब के क्षितिज में सब बिम्बाय राशियों के उदय होते ही हैं। यह विषय गोल गणितज्ञजन अच्छी तरह जानते हैं।

क्वचित् स्थानीयराशिनां दशानामुदयः सदा।
अष्टानामेव राशिनां षण्णामेव च कुत्रचित्।।२७।।
चतुर्णामेव राशीनां द्वयोरेवोदयः क्वचित्।
इति सर्व हि जानन्ति सम्यग् गोलविदो विदः।।२८।।

किसी स्थान में १० ही स्थानीय राशियों के उदय होते हैं तो कहीं ८, कहीं ६, कहीं ४ कहीं २ ही राशियों का सदा उदय होता है। इस विषय को अच्छी तरह गोलज्ञजन जानते हैं।।२८।।

एवं स्थानीयराशीनां सर्वेषां यत्र नोदयः।
तत्र द्वादशभावानां कथं सिद्धिः प्रजायते।।२९।।

ऐसी स्थिति है तो–जिस स्थान में सब राशियों के उदय नहीं होते है–वहाँ द्वादशभावों की सिद्धि किस प्रकार हो सकती है।।२९।।

अन्यच्च

षड्रसाक्षांशदेशे तु कदम्बर्क्षे खमध्यगे।
युगपत् सर्वराशीनामुदये किं विलग्नकम्?।।३०।।

इस पृथ्वी पर ६६ अक्षांश स्थान में जब कदम्ब तारा नित्य खमध्य में आता है तो वहाँ एक साथ १२ राशियों का उदय होता है, उस समय वहाँ कौन लग्न माना जाय?।।३०।।

अथापि

राशेरर्धमिता होरा सर्वैः स्वीक्रियते ह्यतः।
लग्नाल्प पूर्णमानं यत् होरालग्नं तदर्धकम्।।३१।।
सर्वथा भवितुं योग्यमिति जानन्ति पण्डिताः।
सार्धद्विघटिकामानात् होरालग्नं प्रवर्तते।।३२।।
अतः पञ्चघटीमानात् लग्नं भवितुमर्हति।
इति बालोऽपि जानाति कोऽत्र बुद्धिमतां कथा?।।३३।।

राशि का आधा (१५ अंश) होरा होती है। इस बात को सब मानते हैं, इसलिये राशि लग्नोदयमान का आधा होरा लग्नोदयमान होना चाहिये। जब होरा लग्न का उदयमान अढ़ाई घटी हो तो लग्न का मान पाँच घटी ही होना चाहिये।

इस स्वतः सिद्ध बात को एक बालक (अबोध) भी जान सकता है फिर बुद्धिमानों की तो बात ही क्या?।।३१–३३।।

एवं स्वोदयजे लग्ने फलार्थं वह्वसङ्गतिः।
होरालग्नं गृहीत्वैव विज्ञैर्मुन्युक्तमेष हि।।३४।।
विचारः क्रियते सर्वैर्जैमिन्यायुः प्रसाधने।
लग्नं स्वोदयज्ञं तत्र किमाश्चर्यमतः परम्।।३५।।

इस प्रकार अदृष्टफलार्थ स्वस्वोदय लग्न में अनेकों असङ्गतियाँ हैं। जैमिनी से आयुर्दाय साधन करने में सभी विज्ञजन होरालग्न तो मुन्युक्त (अढ़ाई घटी मान से सिद्ध) लेकर विचार करते हैं–किन्तु वहाँ लग्नमान स्वदेशोदय सिद्ध लेते हैं इससे अधिक आश्चर्य और क्या हो सकता है?।।३४–३५।।

तथा विश्वाक्षभादेशे होरालग्नप्रमाणतः।
लग्नमानं भवेदल्पमिति किं नाद्भुतं महत्?।।३६।।

क्योंकि जहाँ पलभा १३ हैं वहाँ होरागलग्न के उदयमान से स्वोदय सिद्ध पूर्णलग्न का मान अल्प हो जाता है। क्या यह महान आश्चर्य नहीं है?।।३६।।

उदाहरण- पलभा १३, इसको १० में गुणा करने से प्रथम चरखण्ड १३० इसको मेष के लङ्कोदयमान २७८ में घटाने से मेषराशि (३० अंश) का उदयमान १४८ पल और होरा लग्न (१५ अंश) का उदयमान अढ़ाई घटी अर्थात् १५० पल होता है।

तथा च पलभा यत्र वसुनेत्रमिता भवेत्।
मीन-मेषोदयस्तत्र शून्यादल्पोत्र का गतिः।।३७।।

एवं जहाँ पलभा २८ है वहाँ मीन और मेष का स्वदेशोदय पल शून्य से भी अल्प हो जाता है वहाँ स्वोदय द्वारा किस प्रकार भावों की सिद्धि हो सकती है।।३७।।

उदाहरण- पलभा २८ इसको १० से गुणा करने से प्रथम चरखण्ड २८०। इसको मेष लङ्कोदय में घटाने से मीन और मेष का स्वोदय ऋणात्मक दो पल होता है जो शून्य से भी अल्प है।

तथा च मीनलग्नान्ते गण्डान्त घटिकार्धकम्।
तावदेव च मेषादौ त्याज्यमुक्तं मुनीश्वरैः।।३८।।
लग्नमानं भवेद्यत्र स्वल्पं गण्डान्तमानतः।
समं वा तत्र भो विज्ञ! मुन्युक्तेः सङ्गतिः कथम्।।३९।।

और भी—मुनियों का कथन है कि—मीन लग्न के अन्त और मेष लग्न के आरम्भ में आधा—आधा घटी लग्नगण्डान्त होता है। उसको सब सत्कार्यों में त्याग देना चाहिये। किन्तु जहाँ स्वदेशोदय सिद्ध लग्नमान गण्डान्त घड़ी के तुल्य या उस से भी अल्प हो तो हे विज्ञ जन! वहाँ मुनि वचनों की सङ्गति किस प्रकार हो सकती है।।३८—३९।।

उच्यतां चेदिदं शास्त्रं तद्देशार्थं न चोदितम्।
इत्युक्तिरपि मूर्खोक्तिसमैव प्रतिभाति मे।।४०।।

यदि यह कहा जाय कि—यह शास्त्र उस स्थानवासियों के लिये नहीं कहा गया है? तो ऐसा कहना भी मूर्खों के कथन के समान ही मैं समझता हूँ।।४०।।

साङ्गवेदपुराणानि सर्व भूतहितेच्छया।
कृतानि मुनिभिः सर्वैर्नहि त्वेकस्य हेतवे।।४१।।

क्योंकि षडङ्ग (ज्योतिष आदि) सहित वेद और पुराण समस्त पृथ्वी स्थित प्राणियों के हितार्थ कहे गये हैं किसी एक व्यक्ति के लिये नहीं।।४१।।

ये सन्ति संहिता-होरा-सिद्धातेषु कृतश्रमाः।
जानन्ति सर्वमेतत्ते ज्ञास्यन्ति च सुबुद्धयः।।४२।।
तानहं प्रार्थये विज्ञान् सुहृदश्च कृताञ्जलिः।
यद्भवन्तोऽनृतं मार्गं त्यक्त्वा गच्छन्तु सत्पथम्।।४३।।
एतावद्दिनपर्यन्तं यदस्माभिः प्रमादतः।
कृतं तद् विगतं तत्तु न शोच्यंजातु पण्डितैः।।४४।।
यदभूत् तदभूत भूते नास्ति तत्र प्रतिक्रिया।
नाग्रे यथा प्रमादःस्यात् यतितव्यं तथा सदा।।४५।।

जिन्होंने संहिता होरा और सिद्धान्त ज्योतिष का अध्ययन किया-है वे इस विषय को अच्छी तरह जानते हैं और जानेंगे, उन सुहृदा वर्गों से मेरी करबद्ध प्रार्थना है कि आप असत् मार्ग को छोड़कर सत्यपथ पर चलें। इतने दिन हम लोगों ने प्रमादवश जो किया वह तो बीत गया उसके लिये पंडितों को सोच नहीं करना चाहिय। जो पीछे हो गया सो हो गया उसकी तो अब कुछ भी प्रतिक्रिया नहीं है, आगे फिर प्रमाद न हो ऐसा यत्न सर्वदा करना चाहिये।।४२—४५।।

अब मैं- यात्रा-वज्ञ-विवाह-जातकादि के शुभाशुभ फल ज्ञानार्थ मुनियों ने जिस लग्न का आदेश और उसका साधंन जिस प्रकार बतलाया है उसे सकल साधारणजनों के उपकारार्थ-सोदाहरण दिखलाता हूँ।

यथा- जन्मकालादि से शुभाशुभ फल समझने के लिये-मैत्रेय से महर्षि पराशर ने कहा है-

"अथाहं संप्रवक्ष्यामि तवाग्रे द्विजसत्तम!।
भाव-होरा-घटी-संज्ञ-लग्नानीति पृथक् पृथक्"।।४६।।

महर्षि पाराशर ने कहा—हे द्विजश्रेष्ठ (मैत्रेय) अब मैं भावलग्न, होरा लग्न और घटी लग्न को पृथक्-पृथक् कहता हूँ।।४६।।

विवरण-स्वभावत: प्राणियों के मन में सामान्यतया शरीर, धन, पराक्रम, सुख, सन्तान, आरोग्य, स्त्री, आयु, धर्म, कर्म, और आय और व्यय इन भावों का उदय हुआ करता है उसका शुभाशुभत्व मुख्यतया जिस काल के द्वारा होता है उसको भावलग्न कहते हैं। सूर्योदय के अनन्तर ६० घटी में १ भचक्र के भ्रमण होने के कारण-१२राशियों के उदय हो जाते हैं। अत: नक्षत्र अहोरत्र में ६० घटी होने के कारण ५, ५, घटी में एक भाव राशि का उदय हुआ करता है।

अथ भावलग्नसाधनम्

इष्टं घट्यादिकं भक्त्वा पञ्चभिर्भादिकं फलम्।
योज्यमौदयिके सूर्ये भावलग्नं स्फुटं च तत्।।४७।।

सूर्योदय से घट्यादिकं इष्टकाल में ५ का भाग देकर लब्धि राश्यादि फल को औदयिक सूर्य में जोड़ने से स्पष्ट भावलग्न होता हैं।।४७।।

विवरण-पूर्व कहा जा चुका है कि लग्न दो प्रकार के होते हैं। उनमें अपनी-अपनी दृष्टिवश (अपने-अपने स्थानीय राश्युदय द्वारा सिद्ध) जिस लग्न से ग्रहणादि की गणना होती है वह केवल 'लग्न' शब्द से बोधित किया गया है। तथा जिससे उपरोक्त भावों के फल का ज्ञान होता है। वह 'भावलग्न' शब्द से व्यवहृत है। उसके अन्तर्गत उसी के सूक्ष्म अवयव आधा और पञ्चमांश के उदय, होरालग्न और घटीलग्न नाम से व्यवहृत है।

अथ होरालग्नसाधनम्

तथा सार्धद्विघटिका-मितादर्कोदयाद् द्विज।
प्रयाति लग्नं तन्नाम होरालग्नं प्रचक्षते।।४८।।
इष्टघट्यादिकं द्विघ्नं पञ्चाप्तं भादिजं च यत्।
योज्यमौदयिके भानौ होरालग्नं स्फुटं च तत्।।४९।।

एवं अढ़ाई घटीमान से जिसका उदय होता है उसे होरालग्न कहा गया है। उसका साधन प्रकार यह है कि—इष्ट घटीपल को २ से गुणा करके उसमें ५ के भाग देने से जो अन्शादि लब्धि होती है, उसको उदयकालिक सूर्य में जोड़ने से राश्यादि होरालग्न होता है।।४८—४९।।

अथ घटीलग्न-साधनम्

कथयामि घटीलग्नं शृणु त्वं द्विजसत्तम।
सूर्योदयात् समारभ्य स्वेष्टकालावधि क्रमात्।।५०।।
एकैकघटिकामानात् लग्नं यद्याति भादिकम्।
तदेव घटिकालग्नं कथितं नारदादिभिः।।५१।।
राशयस्तु घटीतुल्याः पलार्धप्रमितांशकाः।
योज्यमौदयिके भानौ घटीलग्नं स्फुटं हि तत्।।५२।।

हे द्विजोत्तम! अब मैं घटीलग्न कहता हूँ। सूर्योदय से आरम्भ करके अभीष्टकालपर्यन्त एक एक घटी मान से जो समय बीतता है—उसको नारदादि महर्षियों ने घटीलग्न कहा है। उसका साधन प्रकार यह है कि—इष्टकाल जितनी घड़ी हो उतनी राशिसंख्या तथा जितने पल हो उसका आधा अन्शादि मानकर औदयिक सूर्य में जोड़ने से राश्यादि घटी लग्न स्पष्ट हो जाता है।।५०—५२।।

विवरण-सूर्य में राश्यादि फल जोड़ने पर १२ से अधिक हो तो उसे १२ से शेषित कर लेना चाहिये।

भावलग्न साधन का उदाहरण

औदयिक ५।२४।१४।४८ सूर्योदय से इष्टघटीपल ११।१३, इसमें ५ के भाग देने से राश्यादि २।७।१८ लब्धि को औदयिक सूर्य में जोड़ने से ८।१।३२।४८ यह राश्यादि भावलग्न अर्थात् तनुभाव हुआ। इसमें १५ अंश जोड़ने से सन्धि होती है और लग्न में १ राशि जोड़ने से ९।१।३२।४८ यह द्वितीय भाव। एवं आगे भी संधि और भाव समझना चाहिये।

लग्नचक्रलेखनविधिः

लग्नराशिः पुरः स्थाप्यस्ततो राशीन् क्रमाल्लिखेत्।
तत्र तत्र ग्रहः स्थाप्यो यस्मिन् राशौ च यः स्थितः।।५३।।

१२ कोष्टों का एक चक्र बनाकर उसके प्रथम (सामने वाले) कोष्ठ में लग्न राशि को लिखकर आगे क्रम से सब राशियों को लिखे, फिर जो ग्रह जिसमें हो उस राशि में उसको लिखे।।५३।।

भाव द्वादशभाव चक्र—

त-१	सं.	घ-२	सं.	भ्रा.-३	सं.	सु-४	सं.	पु-५	सं.	रिपु-६	सं.
८	८	९	९	१०	१०	११	११	०	०	१	१
१	१६	१	१६	१	१६	१	१६	१	१६	१	१६
३२	३२	३२	३२	३२	३२	३२	३२	३२	३२	३२	३२
४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८
क-७	सं.	मृ-८	सं.	ध-९	सं.	क-१०	सं.	आ-१	सं.	व्य.१२	सं.
२	२	३	३	४	४	५	५	६	६	४	७
१	१६	१	१६	१	१६	१	१६	१	१६	१	१६
३२	३२	३२	३२	३२	३२	३२	३२	३२	३२	३२	३२
४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८

स्पष्टग्रह—

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	रा.	के.
५	४	५	५	४	६	६	७	१
२४	१०	६	२८	१	६	२६	२७	२७
२६	३३	१	३८	५५	६	२८	३	३
१	५४	१	५५	४५	४०	९	५	५
५९	८२६	३९	२७	१०	७४	६	३	३
३१	२१	५	५१	३९ ब	२६	३७	११	११

चलित भावचक्रम्—

एवं भावफलं ज्ञातुं भावचक्रं पृथग् लिखेत्।
संघेरल्पो ग्रहः पूर्व-भावे स्थाप्योऽधिकोऽग्रिमे।।५४।।
सन्ध्यंशादिसमे सन्धौ ततो वाच्यं शुभाशुभम्।
जन्म-यात्रा-विवाहादि-सत्कर्मसु विचक्षणैः।।५५।।

इस प्रकार भावों का फल जानने के लिये एक भावचक्र पृथक् लिखना चाहिये। उसमें सन्धि से ग्रह अल्प हो तो पूर्व भाव में संधि से अधिक हो तो अग्रिम भाव में ग्रह को लिखना। यदि सन्धि के अंश तुल्य ग्रह के अंश हो तो उसी संधि स्थान में उस ग्रह को लिखना चाहिये।।५४—५५।।

राशिलग्न कुण्डली। **चलितभाव कुण्डली।**

जैसे—भावलग्न धनु है अतः चक्र से प्रथम (सम्मुख स्थान में ९ लिखकर क्रम से सब राशि लिखी गई है। उसमें सूर्य कन्या राशि में है अतः ६ में सूर्य लिखा गया।

इस प्रकार लग्नराशि कुण्डली में सूर्य दशवें स्थान में है, तथा दशवाँ कर्म भाव है, उसके अग्रिम संधि से सूर्य अधिक है अतः उस संधि के अगले भाव (११ भाव) में सूर्य लिखा गया। एवं अन्य ग्रहों को लिखकर उपरोक्त चक्र में दिखाया गया है।

अथोभयकुण्डलीनां प्रयोजनम्

राशिचक्राच्च खेटानां नित्यं स्थानादिजं बलम्।
सूर्याद् वेशिमुखा योगाश्चन्द्राच्च सुनफादयः।
संख्याश्रयादिका योगा विचिन्त्या दैवचिन्तकैः।।५७।।
ग्रहयोगफलं तद्वत् फलं खेटर्क्षयोगजम्।
किन्तु-केन्द्रत्रिकोणादि-संज्ञा चक्रद्वयादपि।।५८।।

लग्नराशि चक्र में स्थित ग्रहों के—उच्च–गृह–नीच–मित्रगृह आदि तथा सूर्य से वेशि वाशि आदि एवं चन्द्रमा से अनफा, सुनफादि योग तथा संख्या आश्रय और नाभस आदि योग, द्विग्रह आदि योग, ग्रहराशियोग आदि का विचार लग्नराशि चक्र से ही करना चाहिये। किन्तु भाव या ग्रह से केन्द्र, त्रिकोण आदि संज्ञा दोनों ही चक्र में समझना चाहिये।।५६–५८।।

लग्नात्भावफलम् यद् यद् ग्रहयोगात् प्रकीर्तितम्।
तत् तत् शुभाशुभं सर्वं भावचक्राद् विचिन्तयेत्।।५९।।

खेटे भावसमे पूर्णं शून्यं सन्धिसमे स्मृतम्।

फलं तद्भावखेटोत्थं ज्ञेयं मध्ये-ऽनुपाततः।।६०।।

लग्न से तनु आदि भावों में ग्रह योग सम्बन्धी जो फल कहे गये हैं उनको भाव चक्र से समझना चाहिये। भाव के अंशादि तुल्य ग्रह हो तो पूर्णफल और सन्धि के अंशादि तुल्य हो तो शून्यफल एवं सन्धि और भाव के बीच में हो तो अनुपात से फल समझना चाहिये।।५९–६०।।

विवरण-अनुपात यह है कि-सन्धि से १५ अंश अन्तर पर (भावतुल्य होने से पूर्णफल (६० कला) तो इष्ट सन्धि ग्रहान्तर में क्या? इस त्रैराशिक से लब्धिभावफल = ६०', (सं ग्र) = ४' (सं ग्र) इससे उत्पन्न होता है कि

सन्धिग्रहान्तरांशाद्यं वेदैः क्षुण्णं कलादिकम्।

फलं तद्भावखेटोत्थं विज्ञेयं दैवचिन्तकैः।।६१।।

सन्धि ग्रहान्तरांश संख्या को ४ गुना करने से भाव फल का मान होता है। जैसे सूर्य—५।२४।१४।४८ और सन्धि ५।१६।३२।४८ इन दोनों का अन्तर अंशादि ७।४२।।० को ४ से गुणा करने से ३०।४८।० यह सूर्य सम्बन्धी ११ भाव का फल प्रमाण हुआ।।६१।।

एवं कलादि फल ४० से ऊपर पूर्ण, ४० से नीचे २० तक मध्यम और २० से अल्प हो तो हीन समझा जाता है।

होरालग्नोदाहरण-इष्टघटी ११।१३ को दूना करने से २२।२६ इसमें ५ के भाग देने से लब्धि राश्यादि ४।१४।२६ को औदयिक सूर्य ५।२४।१४।४८ में जोड़ने से १०।८।५०।४८ यह राश्यादि होरा लग्नमान हुआ।

घटी लग्नोदाहरण—

इष्ट घटीपल ११।१३ घटी तुल्य ११ राशि और पल १३ के आधा ६ अंश ३० कला इसको औदयिक सूर्य में जोड़ने से ५०।४४।४८ यह राश्यादि-घटी लग्नमान हुआ।

स्थानलग्नवशाद्यस्माद् भावसिद्धिर्न जायते।

तस्मात् जातकयात्रादौ भावलग्नात् फलं वदेत्।।६२।।

चूँकि स्वोदयमानसिद्धि लग्न से भावसिद्धि नहीं होती अतः भावलग्न से ही फल कहना चाहिये।।६२।।

इति संक्षेपतो लग्नविवेकः कथितो मया।

यदि क्वचित् त्रुटिः सा हि क्षन्तव्या तत्त्ववेदिभिः।।६३।।

स्वभावादेव सन्तुष्टा भविष्यन्ति सुहृज्जनाः।
भवन्तु मुदिता विज्ञा विज्ञाय मदुदीरितम्।।६४।।
न ज्ञात्वा तत्त्वमत्रस्यमज्ञा अपि हसन्तु माम्।
इत्यहं सफलं मन्ये सर्वथैव निजश्रमम्।।६५।।
अथ पूर्वजनैः प्रोक्तं लक्षणं विज्ञमूढयोः।
प्रसङ्गाद् विलिखाम्यत्र बालकानां मुदे यथा।।६६।।
दोषं विलोक्यापि 'परम्परा मे' मत्वेति तां नैव जहाति मूढः।
तातस्य कूपोऽयमिति ब्रुवाणाःक्षारं जलं कापुरुषाः पिबन्ति।।६७।।
पुराणमित्येव न साधु सर्वं न वाऽपि काव्यं नवमित्यवद्यम्।
सन्तः परीक्ष्यान्यतरद् भजन्ते मूढः परप्रत्ययनेयबुद्धिः।।६८।।

अथ भावफलप्रकरणम्

लग्नात्-तनुर्धनं भ्राता सुखं पुत्र-रिपु-स्त्रियः।
मृत्युश्च धर्म-कर्माय व्ययश्चेति यथाक्रमम्।।१।।

१ तनु, २ धन, ३ भ्राता, ४ सुहृद, ५ पुत्र, ६ रिपु, ७ स्त्री, ८ मृत्यु, ९ धर्म, १० कर्म, ११ आय, १२ व्यय ये बारह भाव कहे गये हैं।।१।।

विषभोऽथ समः पुंस्त्री क्रूरः सौम्यश्च नामतः।
चरः स्थिरो द्विस्वभावो मेषाद्याः राशयःक्रमात्।।२।।

मेषादि राशियों की क्रम से विषम, सम और पुरुष स्त्री तथा क्रूर, सौम्य, चर, स्थिर द्विस्वभाव, संज्ञायें हैं। अगले पृष्ठ के चक्र से स्पष्ट जानिये।।२।।

दुश्चिक्यं स्यात्तृतीयं च चतुर्थं सुखसद्म च।
बन्धुसंज्ञं च पातालं हिबुकं पञ्चमे च धीः।।३।।

जन्मलग्न से तृतीय स्थान की दुश्चिक्य, चतुर्थ स्थान की सुख बन्धु, पाताल, हिबुक और पञ्चम स्थान की धी संज्ञा है।।३।।

द्यूनं द्युनं तथास्तं च जामित्रं सप्तमं स्मृतम्।
दशमं त्वम्बरं मध्यं छिद्रं स्यादष्टमं गृहम्।।४।।

सप्तम स्थान का द्यून, अस्त और जामित्र नाम है। दशम स्थान की अम्बर तथा मध्य संज्ञा है और अष्टम स्थान की छिद्र संज्ञा है।।४।।

मेष	वृष	मि.	कर्क	सिंह	कन्या	राशि
विषम	सम	विषम	सम	विषम	सम	विषमादि संज्ञा
पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरष की संज्ञा
क्रूर	सौम्य	क्रूर	सौम्य	क्रूर	सौम्य	क्रूर सौम्य संज्ञा
चर	स्थिर	द्विस्व	चर	स्थिर	द्विस्व	चर आदि संज्ञा
तु.	वृ.	ध.	मकर	कुम्भ	मी.	राशि
विषम	सम	विषम	सम	विषम	सम	विषम् आदि
पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष स्त्री संज्ञा
क्रूर	सौम्य	क्रूर	सौम्य	क्रूर	सौम्य	क्रूर सौम्य संज्ञा
चर	स्थिर	द्विस्व	चर	स्थिर	द्विस्व	चर आदि संज्ञा

एकादशं भवेल्लाभः सर्वतोभद्र एव च।
द्वादशं च गृहं रिष्फं त्रिकोणं नवपञ्चमे।।५।।

ग्यारहवें स्थान की लाभ और सर्वतोभद्र संज्ञा कही गयी है। बारहवें भवन को रिष्फ कहते हैं और नवम–पंचम घर की त्रिकोण संज्ञा है।।६।।

त्रिलाभदशमारीणां भवेदुपचयाख्यकम्।
चतुर्थाष्टमयोः संज्ञा चतुरस्त्रं स्मृता बुधैः।।६।।

तीसरे, ग्यारहवें, दशवें और छठवें स्थानों को उपचय कहते हैं और चौथे तथा आठवें घर की विद्वानों ने चतुरस्त्र कहा गया है।।६।।

केन्द्रचतुष्टयकण्टकसंज्ञा लग्नास्तूर्यसप्तदशमानाम्।
परतः पणफरमापोक्लिमं च वेद्यं यथाक्रमतः।।७।।

पहला, चौथा, सातवाँ, दशवाँ इन स्थानों की केन्द्र चतुष्टय और कण्टक संज्ञा है। इनके आगे के स्थान (दूसरे, पाँचवाँ, आठवें और ग्यारहवें) की पणपुर संज्ञा है। इनसे अन्य स्थानों (तीसरे, छठें, नवें) की आपोक्लिम् संज्ञा है।।७।।

वर्गोत्तमा नवमांशाश्चरादिषु प्रथमपञ्चमान्त्यः।
होरा विषमेऽर्केन्द्वोः समराशौ चन्द्रसूर्ययोः क्रमशः।।८।।

वर्गोत्तम, नवांश, चर आदि राशियों के क्रम से पहला, पाँचवाँ, नवाँ (चर राशि का पहला, स्थिर राशि का पाँचवाँ, द्विस्वभाव राशि का नवाँ) वर्गोत्तम जाने। विषम राशियों में पहले १५ अंश तक सूर्य्य की होरा होती है। उसके पश्चात् चन्द्रमा की और समराशियों में पहले १५ अंश तक चन्द्रमा की, बाद में सूर्य्य की होरा जाने।।८।।

स्वगृहाद्द्वादशभागा द्रेष्काणाः प्रथमपञ्चनवपानाम्।
ज्ञेया बुधैश्च वर्गा षट्संख्या जातके श्रेष्ठाः।।९।।
मेषाद्याश्चत्वारः सधन्विमकराः क्षपाबला ज्ञेयाः।
पृष्ठोदया विमिथुनाः शिरसाऽन्ये ह्युभयतो मीनः।।१०।।

प्रत्येक राशि में बारह द्वादशांश होता है। (३०) अंश की एक राशि होती है। इसमें बारह अंश अर्थात् हिस्सा करने से एक भाग २ अंश ३० कला होता है, यथा मेष में २ अंश ३० कला तक मेष का द्वादशांश होता है और इसके बाद, ५ अंश तक वृष का। इसी प्रकार सब राशियों का जाने। द्रेष्काण प्रत्येक राशि में तीन-तीन होते हैं। पहले १० अंश तक उसी राशि का, उसके बाद २० अंश तक उसके पाँचवीं राशि का, इसके बाद ३० अंश तक उससे नवीं राशि का द्रेष्काण होता है। जैसे मेषराशि के १० अंश तक मेष के स्वामी मंगल का, इसके बाद २० अंश तक सिंह के मालिक सूर्य्य का, इसके बाद ३० अंश पर्यन्त धनराशि के मालिक बृहस्पति का द्रेष्काण होता है। ऐसे ही सब राशियों के द्रेष्काण जाने। मेष से चार राशि (मेष, वृष, मिथुन, कर्क) और धन मकर ये छः रात्रि में बली होती है और शेष राशि (सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुम्भ, मीन) दिन में बली होती है ऐसा जाने। जो राशि रात्रि में बली है, उनमें से मिथुन को छोड़कर शेष (मेष, वृष, कर्क, धन, मकर) राशियाँ पृष्ठोदय है अर्थात् ये पीठ से उदित होती हैं। शेष राशियाँ (मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुम्भ) शीर्षोदय हैं अर्थात् शिर से उदय होती है और मीन पृष्ठोदय और शीर्षोदय दोनों है।।९-१०।।

सूर्य्यादिस्पष्टग्रह

सू.	चं.	मं.	बु.	वृ.	शु.	श.	रा.	के.
९	४	७	१०	४	९	११	२	८
२५	२३	२४	३	२३	५	१२	०	०
४	५३	२०	२	०	२४	१६	३६	३६
३३	२०	३१	४९	३७	५५	५५	३६	३६

जन्मकुण्डली चक्र—

सू.शु.१०
मं. ८
बु. ११
के.९
७
श. १२
६
३ रा
१
वृं.चं. ५
२
४

उदाहरण-श्रीसम्वत् १९६५ कार्तिक मास कृष्ण पक्ष में २ तिथि, वार शनि, उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र अतिगंड योग गर करण में सूर्य उदय से घटी ५।० पल ० पर पण्डित हरिचरण पाठकजी का जन्म है।

स्पष्टलग्न ८।२८।४०।५९ धन लग्न है। इससे 'लग्नेश बृहस्पति'' हुआ। धन लग्न विषम है और १५ अंश से अधिक है। इससे ''होरेश चन्द्रमा'' हुआ। धन लग्न का २८ अंश बीता है। इससे ३ द्रेष्काण हुआ इससे नवीं राशि सिंह का ''द्रेष्काणेश'' सूर्य हुआ। मेष से ९वाँ धन होता है। अतः धन का नवांश हुआ। ''नवांशेश बृहस्पति'' हुआ। द्वादशांश बारहवाँ हुआ। धनराशि से बारहवीं राशि वृश्चिक है। अतः वृश्चिक राशि का द्वादशांश हुआ। ''द्वादशांशेय मंगल'' हुआ। धन विषम राशि है २८ अंश तक बीत गया है अतः ''त्रिशांशेश शुक्र'' हुआ। इस प्रकार षड्वर्गाधीश जाने।

वर्गोत्तम मात्र दिखाकर ग्रन्थकर्ता ने नवांश का आदेश मात्र इस पद्य में दिखाया गया है। त्रिशांश के बारे में कुछ नहीं लिखा। इन दोनों का विवरण निम्नलिखित प्रकार से जाने।

एक राशि में नौ नवांश होते हैं और एक राशि तीस अंशों की होती है। जिसमें हर एक नवांश का तीन अंश, बीस कला मान होता है। मेष, सिंह और धनका नवांश मेष से आरम्भ होता है। वृष, कन्या, मकर का नवमांश मकर से तथा मिथुन, तुला और कुंभ का नवांश तुला से आरंभ होता है और कर्क वृश्चिक मीन का कर्क से आरंभ होता है।

सम राशि में पहले में पाँच अंश तक शुक्र का, फिर ७ अंश तक बुध का, ८ अंश–तक बृहस्पति का, फिर पाँच अंश तक शनि फिर ५ अंश तक मंगल का त्रिशांश होता है। विषमराशि में ५ अंश तक मंगल का ५ अंश तक शनि का, ८ अंश तक गुरु का, ७ अंश तक बुध का और ५ अंश तक शुक्र का त्रिशांश होता है।।१०।।

पापग्रहाः

क्षीणश्चन्द्रो रविऽभौमः पापो राहुः शनिश्शिखी।
बुधोऽपि तैर्युतः पापो होरा राश्यर्द्धमुच्यते।।११।।

क्षीण चन्द्रमा, सूर्य, मंगल, राहु, शनि, केतु ये पापग्रह हैं और इन ग्रहों के साथ बुध रहे तो वह भी पापग्रह होता है, राशि के आधे भाग को होरा कहते हैं।।११।।

अथ ग्रहमैत्री

रवीन्दुभौमगुरवो ज्ञराहुशनिभार्गवाः।
स्वास्मिन्मित्राणि चत्वारि परस्मिञ्छत्रवः स्मृता।।१२।।

सूर्य, चन्द्र, मंगल और बृहस्पति ये चार ग्रह अपने में मित्र हैं और बुध, राहु, शनि, शुक्र ये चार ग्रह भी अपने में मित्र हैं और बुध, राहु, शनि, शुक्र ये चार ग्रह पूर्वोक्त ग्रहों के शत्रु हैं।।१२।।

ग्रहाणांमुच्च-नीच-विचारः—

मेषे रविर्वृषे चन्द्रो मकरे च महीसुतः।
कन्यायां रोहिणीपुत्रो गुरुः कर्के झषे भृगुः।।१३।।
शनिस्तुलायामुच्चश्च मिथुने सिंहिकासुतः।
उच्चात्सप्तमगा नीचा राशौ वापि नवांशके।।१४।।

मेष का सूर्य, वृष का चन्द्रमा, मकर का मंगल, कन्या का बुध, कर्क का बृहस्पति, मीन का शुक्र, तुला का शनि, मिथुन का राहु उच्च है। अपनी उच्चराशि से सातवीं राशि नीच होती है जैसे मेष का सूर्य उच्च है तो इससे सातवीं राशि तुला का नीच होगा। इस प्रकार सब ग्रहों को जाने। जिस प्रकार राशि का उच्च नीच कहा गया है इसी प्रकार नवांश में भी जाने।।१३—१४।।

फलम्—

अर्थी भोगी धनी नेता जायते मण्डलाधिपः।
नृपतिश्चक्रवर्ती च रव्याद्यैरुच्चकैर्ग्रहैः।।१५।।

सूर्य उच्च राशिका हो तो धनी, चन्द्रमा उच्चराशि का हो तो भोगी, मंगल उच्च राशि का हो तो नेता, बुध उच्च राशि का हो तो मण्डलाधिप, बृहस्पति उच्चराशि का हो तो राजा, शुक्र उच्च राशि का हो तो राजा और शनि उच्च राशि का हो तो चक्रवर्ती बनाता है।।१५।।

त्रिभिः स्वस्थैर्भवेन्मन्त्री त्रिभिरुच्चैर्नराधिपः।
त्रिभिर्नीचैः भवेद्दासस्त्रिभिरस्तङ्गतैर्जडः।।१६।।

जिस मनुष्य की कुण्डली में तीन ग्रह स्वस्थ अर्थात् अपनी राशि के हों तो वह मन्त्री होता है, तीन ग्रह उच्च के हो तो राजा होवे, तीन ग्रह नीच राशि के हों तो दास होता है, तीन ग्रह अस्त हो तो जड़ (मन्द बुद्धिवाली) होवे।।१६।।

सबलग्रहाः

उदितःस्वगृहस्थश्च मित्रगेहे स्थितोऽपि वा।
मित्र वर्गे मित्रदृष्टः स ग्रहः सबलः स्मृतः।।१७।।

जो ग्रह उदित हो, अपनी राशि का हो, अपने मित्र के घर में हो या मित्र के षड्वर्ग में या मित्र से देखा जाता हो तो वह बलवान होता है।।१७।।

स्वामिना बलिना दृष्टं सबलैश्च शुभग्रहैः।
न दृष्टं न युतं पापैस्तल्लग्नं सबलं स्मृतम्।।१८।।

जो लग्न अपने बलवान स्वामी से देखा जाय, जिस लग्न को बलवान शुभ ग्रह देखें और उस लग्न को पाप ग्रह न देखतां हो, न युक्त ही हो तो वह लग्न बलवान जाने।।१८।।

अथ राजयोगाः—

दशमे बुधसूर्यौ च भौमराहू च षष्ठगौ।
राजयोगेऽत्र यो जातः स पुमान्नायको भवेत्।।१९।।

अब राजयोग कहते हैं। जन्मलग्न से दशम स्थान में बुध सूर्य हो और छठें घर में मंगल राहु हो तो राजयोग होता है। इस योग में पैदा हुआ मनुष्य नायक अर्थात् बहुत मनुष्यों का मालिक होता है।।१९।।

आदौ जीवः शनिश्चान्ते ग्रहा मध्ये निरन्तरम्।
राजयोगं विजानीयात् कुटुम्बबलसंयुतम्।।२०।।

आदि में गुरु, अन्त में शनि और इन दोनों के मध्य में शेष ग्रह (सू० चं० मं० बु० शु० रा० के०) हो तो बल (सैन्य) तथा कुटुम्ब से युक्त राजयोग होता है।।२०।।

सहजस्थो यदा जीवो मत्युस्थाने स्थितः सितः।
निरन्तरं ग्रहा मध्ये राजा भवति निश्चितम्।।२१।।

जिस मनुष्य के जन्मलग्न से तीसरे बृहस्पति और आठवें शुक्र हों और इन दोनों के मध्य में शेष सब ग्रह हों तो वह निश्चय राजा होवे।।२१।।

जीवो वृषे सुधारश्मिर्मिथुने मकरे कुजः।
सिंहे भवति सौरिश्च कन्या बुधभास्करौ।।२२।।
तुलायामसुराचार्यो राजयोगा भवेदयम्।
अस्मिन् योगे समुत्पन्नो महाराजो भवेन्नरः।।२३।।
अष्टमे द्वादशे वर्षे यदि जीवति स मानवः।
सार्वभौमस्तदा राजा जायते विश्वपालकः।।२४।।

बृहस्पति वृष राशि में, चन्द्रमा मिथुन राशि में मंगल मकर राशि में, शनि सिंह राशि में और बुध तथा सूर्य कन्या राशि में और शुक्र तुला राशि में हो तो राजयोग होता है। इस योग में पैदा हुआ मनुष्य महाराजा होता है, यदि इन योगों में उत्पन्न मनुष्य आठवें तथा बारहवें वर्ष में मृत्यु से बच जाय तो संसार का पालन करने वाला सार्वभौम राजा होता है।।२२—२३—२४।।

एको जीवो यदा लग्ने सर्वे योगास्तदा शुभाः।
दीर्घजीवी महाप्राज्ञो जातको नायको भवेत्।।२५।।

'यदि जन्मकाल में केवल एक बृहस्पति ही बलवान होकर स्थित हो तो सम्पूर्ण (शुभाशुभ) योग शुभ ही होते हैं। इस योग में उत्पन्न मनुष्य बहुत समय तक जीने वाला और विशेष बुद्धिमान होता है।।२५।।

चापे शुक्रश्च भौमश्च मीने जीवस्तुले बुधः।
नीचस्थौ शनिचन्द्रौ च राजयोगोऽभिधीयते।।२६।।
अस्मिन् योगे जाते च स राजा धनवर्जितः।
दाता भोक्ता च विख्यातो मान्यो मण्डलनायकः।।२७।।

जिस मनुष्य का शुक्र तथा मंगल धन राशि में हो, बृहस्पति मीन राशि में हो, बुध तुला राशि में हो, शनि तथा चन्द्रमा नीच राशि का (शनि मेष का और चन्द्रमा वृश्चिक का) हो तो राजयोग होता है। इस योग में उत्पन्न प्राणी दान भोग आदि में विशेष धन व्यय होने से धनहीन राजा होकर दाता, भोगी, विख्यात और मान्य तथा मण्डल का नायक होता है।।२७–२८।।

मीने शुक्रो बुधश्चान्ते धने राहुस्तनौ रविः।
सहजे च भवेद्भौमो राजयोगोऽभिधीयते।।२८।।

यदि शुक्र मीन राशि में, बुध व्ययभाव में, राहु धन भाव में, सूर्य जन्मलग्न में, मङ्गल सहज भाव में रहे तो राजयोग होता है।।२८।।

सहजे च यदा जीवो लाभस्थाने च चन्द्रमाः।
स राजा गृहमध्यस्थो विख्यातः कुलदीपकः।।२९।।

बृहस्पति तीसरे घर में और चन्द्रमा ग्यारहवें स्थान में हो तो अपने घर में स्थिर कुलदीपक राजा होता है।।२९।।

शुभग्रहाः शुभक्षेत्रे भवन्ति यदि केन्द्रगाः।
तदा शुभानि कर्माणि करोत्येव हि जातकः।।३०।।

यदि शुभग्रह शुभ स्थान में और केन्द्र (१।४।७।१०) में हों तो ऐसे योग में उत्पन्न मनुष्य शुभकर्म को करने वाला होवे।।३०।।

उच्चस्थानगताः सौम्याः केन्द्रेषु च भवन्ति चेत्।
ध्रुवं राज्यं भवेत्तस्य वंशानां चैव पोषकः।।३१।।

जिस मनुष्य के शुभग्रह उच्चस्थान में रहकर केन्द्र में पड़ जायँ तो निश्चय वह जातक राज्य पावे, वंश का पालन करनेवाला होवे।।३१।।

धने व्यये तथा लग्ने सप्तमे च यदा ग्रहाः।
छत्रयोगस्तदा ज्ञेयः स्ववंशे नायको भवेत्।।३२।।

दूसरे, बारहवें भाव में और लग्न तथा सातवें भाव में सम्पूर्ण ग्रह हों तो छत्रयोग होता है। इस योग में उत्पन्न मनुष्य वंश में नायक होता है।।३२।।

स्वक्षेत्रस्थो यदा जीवो बुधः सौरिः स्वराशिगः।
अत्र जातस्य दीर्घायुः सम्पदश्च भवन्ति हि।।३३।।

जिसके बृहस्पति, बुध और शनैश्वर, अपनी राशि में हों तो मनुष्य की आयु और सम्पत्ति बहुत होती है।।३३।।

मीने बृहस्पतिः शुक्रश्चन्द्रमाश्च यदा भवेत्।
अत्र जातस्य राज्यं स्यात् पत्नी च बहुपुत्रिणी।।३४।।

जिस जातक के गुरु, शुक्र और चन्द्रमा मीन राशि में ही हों तो उसको राज्य हो और उसकी स्त्री अधिक पुत्रवाली होती है।।३४।।

पञ्चमस्थो यदा जीवो दशमस्थश्च चन्द्रमाः।
स पूज्यश्च महाबुद्धिस्तपस्वी च जितेन्द्रियः।।३५।।

जिसके गुरु पञ्चम भाव में और चन्द्रमा दशम भाव में स्थित हो, तो वह मनुष्य पूजनीय, महाबुद्धिमान् यशस्वी और जितेन्द्रिय होता है।।३५।।

सिंहे जीवस्तुलाकीटकोदण्डमकरेषु च।
ग्रहाः यदा तदा जाती देशभोगी भवेन्नरः।।३६।।

जिसके गुरु सिंहराशि में और अन्य ग्रह तुला, कर्क, धन, मकर इन राशियों में हों तो वह जातक देश भर का भोग करनेवाला यानी देश भर का राजा होता है।।३६।।

तुलाकोदण्डमीनस्थो लग्नवः स्थाच्छनैश्चरः।
करोति भूपतेर्जन्म त्वन्यराशौ यदा ग्रहाः।।३७।।

जिसका शनि तुला, धन तथा मीन राशि का होकर लग्न में बैठा हो और अन्य ग्रह अन्य राशियों में स्थित हो तो वह राजा होता है।।३७।।

चन्द्रमा दशमे स्थाने नवमे च शुभग्रहाः।
विद्यास्थाने यदा सौम्या राजयोगस्तदुच्यते।।३८।।

यदि शुभ ग्रह विद्यास्थान (पञ्चम) में हों और चन्द्रमा दशम में हो तथा शुभग्रह नवें स्थान में हों तो राजयोग कहलाता है।।३८।।

मकरे च घटे मीने वृषे मिथुनमेषयोः।

ग्रहा यदात्रविख्यातो राजा भवति मानवः।।३९।।

जिसके सम्पूर्ण ग्रह मकर, कुम्भ, मीन, वृष, मिथुन और मेष इन राशियों में हों तो वह प्रसिद्ध राजा होता है।।३९।।

बुधभार्गवजीवार्कियुक्तो राहुश्चतुष्टये।

कुरुते श्रियमारोग्यं पुत्रं मानाधिकं फलम्।।४०।।

यदि बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनि इन चार ग्रहों के साथ राहु केन्द्र में हो तो लक्ष्मी, आरोग्य, पुत्र और सत्कार प्राप्त होता है।।४०।।

चतुर्थे भवने शुक्रो गुरुश्चन्द्रो धरासुतः।

रविसौरियुताः सन्ति राजा भवति निश्चितम्।।४१।।

जिसके शुक्र, चन्द्रमा, बृहस्पति, मंगल, सूर्य और शनि चौथे स्थान में हों वह निश्चय राजा होवे।।४१।।

अष्टमे च व्यये क्रूरो मध्यमौ क्रूरसौम्यकौ।

राजयोगेऽत्र यो जातश्चत्वारिंशत्स जीवति।।४२।।

यदि क्रूर (पाप) ग्रह आठवें और बारहवें हों और इन दोनों के मध्य में क्रूर सौम्य दोनों प्रकार के ग्रह हों तो यह राजा होता है। इस योग में जन्म लेनेवाला चालीस वर्ष पर्यन्त जीवित रहता है।।४२।।

लग्न सौरिस्तथा चन्द्रस्त्रिकोणे जीवभास्करौ।

कर्मस्थाने भवेद्भौमो राजयोगोऽभिधीयते।।४३।।

यदि शनि और चन्द्र लग्न में, बृहस्पति और सूर्य त्रिकोण (९।५) में तथा मंगल दशम स्थान में हो तो भी राजयोग होता है।।४३।।

नवमे च यदा सूर्यः स्वगृहस्थो भवेद्यदा।

तस्यजीवति न भ्राता स्यादेकोऽपि नृपैः समः।।४४।।

जिसके नवम स्थान में सिंह राशि के सूर्य हों तो उसके भाई नहीं जीते ओर वह एक ही अनेक राजाओं के समान होता है।।४४।

द्वित्रितुर्यसुते षष्ठ कर्मण्यपि यदा ग्रहाः।

राजयोगं विजानियाज्जातस्तत्र नृपो भवेत्।।४५।।

जिसके द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पञ्चम, षष्ठ और दशम इन स्थानों में सब ग्रह होवें तो राजयोग होता है। इन योग में उत्पन्न मनुष्य राजा होता है।।४५।।

लग्ने कूरो व्यये सौम्यो धने क्रूरश्च जायते।

राजयोगो न राजा च दाता दारिद्र्यभाक् सदा।।४६।।

जिसके लग्न में पापग्रह, बारहवेंमें शुभग्रह और दूसरे में भी पाप ग्रह हों तो राजयोग होता है, परन्तु वह राजा नहीं किन्तु दाता होता है और दरिद्र रहता है।।४६।।

लग्ने क्रूरो धने सौम्यो यदा च जातको भवेत्।

सप्तमे भवने क्रूरः परिवारक्षयंकरः।।४७।।

लग्न में पापग्रह, धन भाव में शुभग्रह और सप्तम भाव में भी पापग्रह हों तो वह मनुष्य अपने कुल का नाश करनेवाला होता है।।४७।।

धने चन्द्रश्च सौम्यश्च मेषे जीवो यदा भवेत्।

दशमे राहुशुक्रो च राजयोगोऽभिधीयते।।४८।।

जिसके दूसरे भाव में चन्द्रमा अथवा बुध हो और मेषराशि में वृहस्पति होवे, दशम स्थान में राहु और शुक्र होवे तो राजयोग होता है।।४८।।

सिंहे जीवोऽथ कन्यायां भार्गवो मिथुने शनिः।

स्वक्षेत्रे हिबुके भौमः स पुमान्नायको भवेत्।।४९।।

जिसके बृहस्पति सिंह राशि में, शुक्र कन्या राशि में, शनि मिथुन राशि में, मंगल मेष या वृश्चिक में होकर चौथे स्थान में हो तो वह मनुष्य नायक (श्रेष्ठ) हो।।४९।।

शनिचन्द्रौ च कन्यायां सिंहे जीवो घटे तमः।

मकरे च कुजस्तत्र जातः स्याद्विश्वपालकः।।५०।।

जिसके शैनैश्चर तथा चन्द्रमा कन्या राशि में, बृहस्पति सिंह राशि में राहु कुम्भ में और मंगल मकर राशि में हो तो वह संसार को पालने वाला (राजा) होता है।।५०।।

शुक्रो जीवो रविर्भौमश्चापे मकरकुम्भयोः।

मीने च वत्सरे त्रिंशे जातः स्यात्सर्वकर्मकृत्।।५१।।

जिसके शुक्र धनु में, बृहस्पति मकर में, सूर्य कुम्भ में, मंगल मीन में हो ऐसे योग में उत्पन्न मनुष्य ३० वर्षों में ही सम्पूर्ण कार्य को करने वाला होता है।।५१।।

चतुःसागर योग—

चतुर्षु केन्द्रस्थानेषु सौम्यपापग्रहस्थितिः।
चतुःसागरयोगीऽयं राज्यदो धनदो भवेत्।।५२।।

जिसके चारों केन्द्र स्थानों में शुभग्रह और पापग्रह दोनों प्रकार के ग्रह होवें तो चतुःसागरयोग होता है, यह योग राज्य तथा धन देने वाला होता है।।५२।।

कर्क लग्ने जीवयुक्ते लाभे चन्द्रज्ञभार्गवाः।
मेषे भानौ च यो जातः स राजा विश्वपालकः।।५३।।

जिसके जन्मलग्न में कर्क हो और वह लग्न बृहस्पति से युक्त हो, ग्यारहवें चन्द्रमा तथा बुध शुक्र हों और मेष राशि में सूर्य हो तो वह मनुष्य संसार का पालन करने वाला राजा हो।।५३।।

राज्यमान्य योग—

कर्मस्थाने यदा जीवो बुधः शुक्रस्तथा शशी।
सर्वकर्माणि सिद्ध्यन्ति राजमान्यो भवेन्नरः।।५४।।

यदि दशवें स्थान में बृहस्पति, बुध, शुक्र और चन्द्रमा हों तो उस मनुष्य का सब कार्य सिद्ध होता है और वह राजाओं का माननीय होता है।।५४।।

षष्ठेऽष्टमे पञ्चमे च नवमे द्वादशे तथा।
सौम्यक्रूरग्रहैर्योगे राजमान्यः सकष्टकः।।५५।।

जिसके छठें, आठवें, पाँचवें, नवें और बारहवें स्थान में शुभग्रह और पापग्रह दोनों हों तो भी वह मनुष्य राजाओं में माननीय, परन्तु कष्ट भोगनेवाला होता है।।५५।।

पञ्चमे च यदा षष्ठे चाष्टमे नवमे क्रमात्।
भौमराहुसितार्काः स्युर्जातोऽत्र कुलदीपकः।।५६।।

जिनके पाँचवें मंगल, छठें राहु, आठवें शुक्र और नवें सूर्य हो तो इस योग में उत्पन्न मनुष्य कुलदीपक होता है।।५६।।

लग्ने सौरिस्तथा चन्द्रश्चाष्टमे भार्गवो यदा।
जायते च तदा राजा मानी पत्नीरतः सदा।।५७।।

लग्न में शनि और चन्द हो और आठवें शुक्र हो तो ऐसे योग में उत्पन्न हुआ मनुष्य राजा होता है और अभिमानी तथा स्त्री में आसक्त (लीन) रहता है।।५७।।

मिथुनस्थो यदा राहुः सिंहस्थो भूमिनन्दनः।
अत्र जातः पितुर्द्रव्यं प्राप्नोति सकलं नृपः।।५८।।

यदि मिथुन राशि में राहु तथा सिंह राशि में मंगल हो तो इस योग में उत्पन्न मनुष्य अपने पिता के सब द्रव्यों को लेनेवाला राजा होता है।।५८।।

चापभे पूर्व-भागस्थौ सूर्या-चन्द्रमसौ यदा।
लग्ने च सबलो मन्दः मकरे च कुजो भवेत्।।५९।।
अत्र योगे समुत्पन्नो महाराजो भवेन्नरः।
दूरादेव नमन्त्यस्य प्रतापैश्चरणं नृपाः।।६०।।

यदि धनराशि के पूर्वार्द्ध अर्थात् १५ अंश पर्यन्त चन्द्रमा से युक्त,सूर्य हो, लग्न में बलवान् शनि तथा मकर राशि में मंगल हो तो इस योग में उत्पन्न हुआ मनुष्य राजा होता है। इसके प्रताप से दूर ही से और अन्य राजा लोग इसके चरणों पर शिर नवाते हैं।।५९–६०।।

उच्चभिलाषी सविता त्रिकोणस्थो यदा भवेत्।
अपि नीचकुले जातो राजा स्याद्ध पूरितः।।६१।।

जिसके उच्चराशि के सूर्य त्रिकोण (९।५) में हो, उस मनुष्य का नीच कुल में भी जन्म हो तो भी धन से पूर्ण राजा होता है।।६१।।

कारकयोग

एकादशे यदा सर्वे ग्रहाः स्युर्दशमेऽपि वा।
विलग्ने सम्मुखे वापि कारकाः परिकीर्त्तिताः।।६२।।
उत्पन्नः कारके योगे नीचोऽपि नृपतां व्रजेत्।
राजवंशमुत्पन्नो राजा तत्र न संशयः।।६३।।

जिसके सम्पूर्ण ग्रह ग्यारहवें या दशवें अथवा लग्न में हों तो कारक योग होता है। इस योग में उत्पन्न नीच कुल का भी मनुष्य राजा होता है और राजा के वंश में उत्पन्न हुए बालक के राजा होने में तो कोई सन्देह ही नहीं है।।६२–६३।।

एकावली योग

लग्नतश्चान्यतो वापि क्रमेण पतिता ग्रहाः।
एकावली समाख्याता महाराजो भवेन्नरः।।६४।।

लग्न में वा अन्य किसी स्थान में क्रम से ग्रह पड़े हों तो एकावली योग होता है, इसमें उत्पन्न हुआ मनुष्य महाराजा होता है।।६४।।

धनस्थाने यदा शुक्रो दशमे च बृहस्पतिः।
षष्ठे च सिंहिकापुत्रो राजा भवति विक्रमी।।६५।।

जिसके धनास्थान में शुक्र, दशम स्थान में गुरु और छठें घर में राहु होवे तो वह पराक्रमी राजा होता है।।६५।।

चतुर्ग्रहा एकागताः पापाः सौम्या भवन्ति चेत्।
भ्रातृधीधर्मलग्नार्था राजयोगो भवेदयम्।।६६।।

जिसके एकस्थान में शुभग्रह और पापग्रह दोनों मिलकर चार हों, परन्तु वह स्थान तीसरा, पाँचवा नवाँ, पहला, दूसरा इन्हीं स्थानों में से कोई स्थान हो तो राजयोग होता है।।६६।।

हंसयोग—

त्रिकोणे सप्तमे लग्ने भवन्ति च यदा ग्रहाः।
हंसयोगं विजानीयात् स्ववंशस्यात्र पालकः।।६७।।

यदि सब ग्रह त्रिकोण (९।५) सप्तम, लग्न में हों तो हंसयोग होता है। इस योग में जायमान मनुष्य अपने वंश का पालन करता होता है।।६७।।

सर्वग्रहैर्यदा चन्द्रो विनालिं च निरीक्षितः।
षष्ठेऽष्टमे च यामित्रे स दीर्घायुर्धरापतिः।।६८।।

यदि चन्द्रमा वृश्चिक राशि को छोड़कर अन्य राशिका होकर छठवें या आठवें अथवा सातवें स्थान में स्थित हो और उसको सब ग्रह देखते हों तो वह विशेष आयुवाला राजा होता है।।६८।।

षष्ठेऽष्टमे द्वादशे च द्वितीये च यदा ग्रहाः।
 सिंहासनाख्ययोगेऽस्मिन् राजा सिंहासने वसेत्।।६९।।

यदि सम्पूर्ण ग्रह छठें, आठवें, बारहवें और दूसरे स्थानों में ही पड़े हों तो सिंहासन योग होता है। इस योग में उत्पन्न हुआ मनुष्य सिंहासन पर बैठता है।।६९।।

लग्ने शुक्रबुधौ न स्यात् केन्द्रे नास्ति बृहस्पतिः।
दशमेऽङ्गारको नास्ति स जातः किं करिष्यति।।७०।।

यदि शुक्र, बुध लग्न में न हों और बृहस्पति केन्द्र (१।४।७।१०) में न हो, मंगल दशवें न हो तो वह उत्पन्न हुआ मनुष्य क्या करेगा? (अर्थात् कुछ भी नहीं कर सकता)।।७०।।

अष्टमस्था यदा क्रूराः सौम्या लग्ने स्थिता ग्रहाः।
ध्वजयोगेऽत्र यो जातः स पुमान्नायको भवेत्।।७१।।

यदि पापग्रह आठवें और शुभग्रह लग्न में हों तो ध्वजयोग होता है, इस योग में उत्पन्न श्रेष्ठ होता है।।७१।।

अष्टमे च यदा पापाः केन्द्रस्थाने शुभ ग्रहाः।
सर्वसिद्धिर्भवेत्तस्य राजसम्मानमेव च।।७२।।

जिस मनुष्य के पापग्रह आठवें हों और शुभग्रह केन्द्र में हों तो उसको सर्वसिद्धि होवे और राजाओं से मान (इज्जत) पावें।।७२।।

मेष लग्ने यदा भानुश्चतुर्थे च बृहस्पतिः।
दशमे च कुजो जातो विश्वस्याधिपतिर्भवेत्।।७३।।

यदि मेषलग्न में जन्म हो और उसी में सूर्य हो एवं चौथे स्थान में बृहस्पति हो और मंगल दशवें हो तो वह मनुष्य संसार को पालने वाला राजा होता है।।७३।।

लग्ने सौरिस्तथा चन्द्रस्त्रिकोणे जीवभास्करौ।
कर्मस्थाने भवेद्भौमो राजयोगो विधीयते।।७४।।

यदि शनि तथा चन्द्रमा लग्न में, बृहस्पति तथा सूर्य त्रिकोण (९।५) में और मंगल दशम स्थान में हो तो राजयोग जाने।।७४।।

केन्द्रे स्वोच्चे स्थिते सौम्ये राजलक्ष्मीपतिर्भवेत्।
केन्द्रे पापे स्वोच्चसंस्थे राजा स्याद्दुहितुर्गृहे।।७५।।

यदि शुभग्रह अपनी उच्चराशि में होकर केन्द्र में हों तो वह राजलक्ष्मी का स्वामी होता है और यदि पापग्रह अपनी उच्च राशि में होकर केन्द्र में तो वह अपनी कन्या के घर में राजा होता है।।७५।।

बली सौम्यग्रहो लग्ने केन्द्रस्थो यदि वीक्षति।
तदा निहन्त्यरिष्टनि तमः सूर्योदये तथा।।७६।।

यदि शुभग्रह बली केन्द्र में स्थित होकर लग्न को देखते हों तो वे अरिष्टों का नाश उसी प्रकार करते हैं, जैसे सूर्योदय से अन्धकार का नाश होता है।।७६।।

चतुष्केन्द्रगताः सौम्याः पापा द्वादशषष्ठगाः।
स राजा विश्वविख्यातो ध्वज छत्रविभूषितः।।७७।।

यदि शुभग्रह चारों केन्द्रों में हों और पापग्रह बारहवें तथा छठवें हों तो वह संसार में विख्यात ध्वज और छत्र से शोभित राजा होता है।।७७।।

लग्नादष्टमगो भौमस्त्रिकोणे जीवगो रविः।
धार्मिको जायते राजा धनषानपि जायते।।७८।।

जिसके जन्मलग्न से अष्टम मंगल हों और त्रिकोण में बृहस्पति तथा सूर्य स्थित हों तो वह धर्मात्मा और बलवान् राजा होवे।।७८।।

लग्नात्तु पञ्चमस्थाने यदा सूर्यबृहस्पती।
तदा विद्याधनैः पूर्णो जायते जातकोत्तमः।।७९।।

यदि लग्न से पाँचवें स्थान में सूर्य और बृहस्पति हों तो उत्पन्न हुआ बालक विद्या तथा धन से पूर्ण और श्रेष्ठ होवे।।७९।।

एकोऽपि यदि केन्द्रस्थः शुक्रो जीवोऽथवा बुधः।
जायते च तदा बालो धानाढ्यो वेदपारगः।।८०।।

जिसके शुक्र, बृहस्पति और बुध इन तीन ग्रहों में से यदि एक भी बलवान् होकर केन्द्र (१।४।७।१०) में हो तो वह धन से युक्त, वेद में पारंगत होवे अर्थात् सम्पूर्ण वेद को पढ़े।।८०।।

भिक्षुकयोग

द्वित्रिसौम्याः खमा नीचा व्ययभावेऽथवा पुनः।
भवन्ति धनिनः षष्ठे निधनऽन्ते च भिक्षुकाः।।८१।।

जिसके शुभग्रह दूसरे तीसरे स्थान में हों और पापग्रह बारहवें हो तो वह धनवान होता है और यदि सम्पूर्ण ग्रह छठवें, आठवें, बारहवें इन्हीं भावों में स्थित हों तो जातक भिक्षुक (भिक्षा माँगने वाला) होवे।।८१।।

चक्रवर्तियोग

नीचस्थितो जन्मनि यो ग्रहः स्यात तद्राशिनाथश्च तदुच्चनाथः।
भवेत्रिकोणे यदि केन्द्रवर्ती राजा भवद्धार्मिकचक्रवर्ती।।८२।।

जिसके जन्म लग्न में नीच राशि का ग्रह हो और उच्च राशि का स्वामी यदि त्रिकोण (५।९) अथवा केन्द्र (१।४।७।१०) स्थान में स्थित हो तो वह धार्मिक और चक्रवर्ती राजा होता है।।८२।।

षष्ठ भाव का फल

षष्ठे क्रूरे नरो जातः पापशत्रुविमर्दकः।
षष्ठे सौम्ये सदा रोगी षष्ठे चन्द्रस्तु मृत्युदः।।८३।।

यदि पापग्रह छठवें हों तो पाप तथा शत्रु का नाश होवे और शुभ ग्रह छठवें हों तो रोगी और चन्द्रमा छठें हो तो मृत्यु होवे ।।८३।।

तृतीय भाव का फल

लग्नात्तृतीयभवने यदि सोमसुतो भवेत्।
द्वौ पुत्रौ कन्यकास्तिस्रो जायन्ते नात्र संशयः।।८४।।

जिसके लग्न से तीसरे स्थान में बुध स्थित हो उसके दो पुत्र, तीन कन्या होवें इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है।।८४।।

लग्नात्तृतीयभवने बली वाचस्पतिर्यदा।
पंच पुत्रास्तदा तस्य जायन्ते मानवस्य वै।।८५।।

जिसके बलवान् बृहस्पति लग्न से तीसरे स्थान में हों उसके पाँच पुत्र उत्पन्न होवें।।८५।।

लग्नात्तृतीयभवने बली शुक्रो यदा भवेत्।
कन्याद्वयं त्रयः पुत्रा जायन्ते मानवस्य वै।।८६।।

जिसके बलवान् शुक्र लग्न से तीसरे हों उसके निश्चय ही दो कन्या तीन पुत्र होवें।।८६।।

लग्नात्तृतीयभवने शनिचन्द्रो यदा स्थितौ।

श्यामवर्णस्तदा बालो भ्रातृहीनस्तु जायते।।८७।।

यदि लग्न से तीसरे शनि तथा चन्द्र हो तो वह बालक श्यामवर्ण वाला हो और भाई से हीन रहे।।८७।।

लग्नात्तृतीयभवने राहुयुक्तो यदा शशी।

भ्रातृहीनो भवेद्बालो लक्ष्मीवानपि जायते।।८८।।

यदि राहु से युक्त चन्द्रमा लग्न से तीसरे भाव में स्थित हो तो वह भाई से हीन हो और लक्ष्मीवान् होवे अर्थात् धनी होवे और उसके कोई न रहे।।८८।।

पंचम भाव का फल

लग्नात्तृतीयभवने पंचमे वा धरासुतः।

म्रियते पुत्रदुःखेन नारी वा पुरुषोऽपि वा।।८९।।

जिस पुरुष अथवा स्त्री के लग्न से तीसरे अथवा पाँचवें स्थान में मंगल स्थित हो तो वह पुत्र के कष्ट से मरे।।८९।।

लग्नात्सप्तमगेहस्थो यदि शुक्रो बली भवेत्।

कन्याद्वयं त्रयः पुत्रा धनवन्तो भवन्ति हि।।९०।।

जिसकी कुण्डली में बलवान् शुक्र लग्न से सप्तम स्थान में स्थित हो तो वह दो कन्या, तीन पुत्र और धन से युक्त रहे।।९०।।

सिंहलग्न का जन्मफल (अन्धयोग)

सिंहलग्ने यदा शुक्रः शनिर्वाति व्यवस्थितः।

तत्र जातस्य बालस्य नेत्रनाशो हि जायते।।९१।।

यदि सिंह लग्न में जन्म हो और लग्न में ही शुक्र तथा शनि स्थित हों तो इसमें पैदा हुए बालक का नेत्र नाश होवे।।९१।।

सूर्योऽष्टमे रिपौ चन्द्रो धने भौमो व्यये शनिः।

ग्रहदोषेण नेत्राणामन्धतां जनयन्त्यमी।।९२।।

जिसके सूर्य आठवें, चन्द्रमा छठवें, मंगल दूसरे और शनि बारहवें स्थित हों तो उसमें पैदा हुए बालक के नेत्रों का नाश करें।।९२।।

जन्मफल

शुभं वर्गोत्तमे जन्म वेशिस्थाने च सद्ग्रहे।
अशून्येषु च केन्द्रेषु कारकाख्यग्रहेषु च।।९३।।
सूर्य्ये केन्द्रे राजसेवी वैश्यवृत्तिर्निशाकरे।
शस्त्रवृत्तिः कुजे केन्द्रे बुधे चाध्यापको भवेत्।।९४।।
स्वानुष्ठानरतो नित्यं दिव्यबुद्धिर्नरो गुरौ।
शुक्रे विद्यार्थसम्पन्नो नीचसेवी शनैश्चरे।।९५।।

जिसका वर्गोत्तम में जन्म हो और २ रे शुभग्रह हों तथा केन्द्र स्थान शून्य न हो अर्थात् केन्द्र में कारक ग्रह हों, जैसे सूर्य केन्द्र में हो तो राजा का सेवक, चन्द्रमा केन्द्र में हो तो वैश्यवृत्ति (खरीदने बेचने आदि का लाभ) करनेवाला, मंगल केन्द्र में हो तो पराक्रमी शस्त्रवृत्तिवाला बुध केन्द्र में हो तो अध्यापक, बृहस्पति केन्द्र में हो तो नित्य अपने अनुष्ठानों में रत और श्रेष्ठ वृत्तिवाला हो, शुक्र केन्द्र में हो तो विद्या तथा द्रव्य से युक्त हो और शनि केन्द्र में हो तो नीच की सेवा करने वाला होवे।।९३।।९४।।९५।।

इति पुरुषराजयोगः।

।।अथ स्त्रीराजयोगः।।

केन्द्रे च सौम्या यदि पृष्ठभाजः पापाः कलत्रे च मनुष्यराशौ।
राज्ञी भवेत् स्त्री बहुकोषयुक्ता नित्त्यं प्रशान्ता च सपुत्रिणी च।।९६।।

जिस स्त्री के सब शुभग्रह केन्द्रस्थान में हों और पृष्ठोदय राशि में हों तथा मनुष्य राशि में होकर सातवें स्थान में हों तो वह बहुत धन से युक्त, शान्त स्वभाववाली, सुन्दर पुत्र से युक्त रानी होवे।

बुधे विलग्ने यदि तुङ्गसंस्थे लाभस्थितो देवपुरोहितश्च।
नरेन्द्रपत्नी वनिताप्रसंगे तदा प्रसिद्धा भवतीह भूमौ।।९७।।

जिस स्त्री के उच्चराशि (कन्या) का बुध लग्न में हो, बृहस्पति ग्यारहवें स्थान में हो तो वह पृथ्वी पर स्त्रियों में प्रसिद्ध होती है यानी राजा की स्त्री होती है।।९७।।

एकोऽपि जीवो रसवर्गशुद्धः केन्द्रे यदा चंद्रनिरीक्षितश्च।
राज्ञी भवेत् स्त्री सधना सपुत्रारूपान्विता पीननितम्बबिम्बा।।९८।

जिस स्त्री के एक बृहस्पति ही षड्वर्ग में शुद्ध हो और केन्द्र में स्थित हो तथा चन्द्रमा से देखा जाता हो तो वह धन, पुत्रों से युक्त पुष्ट नितम्बवाली होवे।।९८।।

कर्कोदये सप्तमगे पतंगे जीवेन दृष्टे परिपूर्णदेहा।
विद्याधरी चात्र भवेत्प्रधाना राज्ञी गतारिर्बहुपुत्रपौत्रा।।९९।।

जिस स्त्री का कर्कलग्न में जन्म हो और सूर्य सातवें हों और बृहस्पति से देखे जाते हों तो वह रानी पूर्ण शरीरवाली, विद्याधरी, श्रेष्ठ, शत्रु से रहित और विशेष पुत्र, पौत्रों से युक्त होती है।।९९।।

षड्वर्गशुद्धेस्त्रिमिरेव राज्ञी चतुर्भिरंशैश्च तथैकपत्नी।
पंचादिभिर्देवविमानभाजा त्रैलोक्यनाथप्रमदा तदा स्यात्।।१००।।

जिस स्त्री के जन्म समय के षड्वर्गों में से तीन वर्ग शुद्ध हों तो वह रानी होवे, चार वर्ग शुद्ध होने से जगत् में एक विख्यात रानी हो और पाँच वर्ग शुद्ध होने से देव विमान पर बैठनेवाली त्रैलोक्यनाथ की स्त्री होवे।।१००।।

लाभस्थितः शीतकरो भृगुश्च कलत्रगः सोमसुतेन युक्तः।
जीवेनदृष्टो भवतीह राज्ञी ख्याता धरण्यां सबलैः स्तुता च।।१०१।।

जिस स्त्री के जन्म लग्न से एकादश स्थान में चन्द्रमा, सप्तम स्थान में बुध से युक्त शुक्र हो तथा गुरु से देखा जाता हो तो वह सम्पूर्ण जनता से प्रशंसित, विख्यात कीर्ति जिनकी ऐसी रानी होती है।।१०१।।

फलं स्त्रीपुंसयोस्तुल्यं जातके किंतु सप्तमे।
सौभाग्यं चन्द्रलग्नाच्च वपुराकृतिरुच्यते।।१०२।।

जातक विचार से स्त्री पुरुष के कुण्डली का भाव समान ही होता है, किन्तु स्त्री की कुण्डली में जन्म लग्न व चन्द्रमा से सप्तम स्थान पति का होता है, उस पर से सौभाग्ययोग पति के शरीर व स्वरुप का विचार करना चाहिए।।१०२।।

कर्मस्थाने निजेक्षेत्रे भौमशुक्रबुधैर्युतः।
यदि राहुर्भवेत्तस्य क्षणे वृद्धिः क्षणे क्षयः।।१०३।।

यदि दशमस्थान में स्वक्षेत्री राहु (कन्या राहु का क्षेत्र व मिथुन) केतु का क्षेत्र होता है) मंगल, बुध, व शुक्र से युक्त बैठा हो, तो उस कुण्डलीवाले की क्षण में वृद्धि तथा क्षण में ही क्षय होता है।।१०३।।

काणयोग—

होरायां द्वादशे राशौ स्थितो यदि दिवाकरः।
करोति दक्षिणं काणं वामनेत्रं च चन्द्रमा।।१०४।।

यदि सूर्य अपनी होरा में और बारहवीं राशि में स्थित हो तो दाहिने नेत्र को काना करे और यदि चन्द्रमा हो तो वाम नेत्र का विनाश करे।।१०४।।

मृत्युयोग—

भौमक्षेत्रे यदा जीवो जीवक्षेत्रे च भूसुतः।
द्वादश वत्सरे मृत्युर्बालकस्य न च संशयः।।१०५।।

यदि मङ्गल के गृह में बृहस्पति हो और बृहस्पतिके गृह में मङ्गल हो तो वह बालक बारहवें वर्ष में मरे इसमें संशय नहीं है।।१०५।।

धनस्थाने यदा भौमः शनैश्चरसमन्वितः।
सहजे च भवेद्राहुर्भ्राता तस्य न जीवति।।१०६।।

यदि शनि से युक्त मंगल दूसरे स्थान में हो और तीसरे राहु हो तो उसके भाई नहीं होता है।।१०६।।

चतुर्थे च यदा राहुः षष्ठे चन्द्रोऽष्टमेऽपि वा।
सद्य एव भवेन्मृत्युः शंकरो यदि रक्षति।।१०७।।

यदि राहु चौथे स्थान में हो और चन्द्रमा छठवें या आठवें हो तो महादेव जी भी रक्षा करें तो भी वह तुरन्त मरता है।।१०७।।

अष्टमस्थो निशानाथः केन्द्रः पापेन संयुतः।
चतुर्थे च यदा राहुर्वर्षमेकं स जीवति।।१०८।।

यदि चन्द्रमा आठवें घर में हों और पापग्रह केन्द्र में हों तथा राहु चौथे स्थान में हो तो वह बालक एक वर्ष जीता है।।१०८।।

मातृपितृमृत्युयोग—

पाताले चाम्बरे पापी द्वादशे च यदा स्थितः।
पितरं मातरं हन्ति देशाद्देशान्तरं व्रजेत्।।१०९।।

यदि पापग्रह चौथे, दशवें तथा बारहवें हो तो अपने पिता और माता का नाश करे और वह मनुष्य एक देश से दूसरे देश में जाता है।।१०९।।

परमायुयोग—

पञ्चमस्थो निशानाथस्त्रिकोणे च बृहस्पतिः।
दशमे च महीसूनुः परमायुः स जीवति।।११०।।

यदि चन्द्रमा पाँचवें घर में तथा बृहस्पति त्रिकोण (५।९) में और मंगल दशवें स्थान में हो तो वह पूर्ण आयु तक जीवे।।११०।।

नीचजातयोग—

धनस्थाने यदा क्रूरः सहजे सप्तमे तथा।
पञ्चमे भवने जीवो नीचजातस्तदा भवेत्।।१११।।

यदि पापग्रह दूसरे हो, बृहस्पति पाँचवें तीसरे या सातवें हो तो वह बालक नीच से उत्पन्न हुआ है यह जाने।।१११।।

मृत्युयोग—

लग्ने धने व्यये क्रूरो यदा मृत्यौ च जायते।
विष्ठया मार्गबन्धोऽस्य द्वादशाष्टमवासरे।।११२।।

जिसके पापग्रह लग्न से दूसरे बारहवें और आठवें होवें तो उसकी गुदा से मल न जाने से आठवें दिन मृत्यु होती है।।११२।।

षष्ठे च भवने भौमः सप्तमे सिंहिकासुतः।
अष्टमे च यदा सौरिर्भार्या तस्य न जीविति।।११३।।

जिसके मंगल छठवें स्थान में, राहु सातवें और शनि आठवें हो तो उसकी स्त्री नहीं जीवे।।११३।।

अन्यजातयोग—

तिथ्यन्ते च दिनान्ते च लग्नस्यान्ते तथैव च।
चरराशौयदा जातः सोऽन्यजातः शिशुर्भवेत्।।११४।।

जिसका जन्म तिथि के अन्त में, दिन के अन्त में लग्न के अन्त में और चरराशि में हो तो उसने दूसरे से जन्म पाया है ऐसा जाने।।११४।।

पितृनाशयोग—

रिपुस्थाने यदा चन्द्रो लग्नस्थाने शनैश्चरः।
कुजश्च सप्तमस्थाने पिता तस्य न जीवति।।११५।।

यदि चन्द्रमा छठवें घर में हो, शनि लग्न में हो और मंगल सातवें घर में हो तो उस बालक का पिता नहीं जीता है।।११५।।

मृत्युयोग—

बालस्य जन्मकाले चेदष्टमस्थः शनैश्चरः।
पापदृष्टो नाशकः स्यादन्यथा क्लेशदायकः।।११६।।

यदि बालक के जन्मलग्न से अष्टम शनि हो और पापग्रह उन्हें देखते हों तो बालक की मृत्यु होवे। यदि पापग्रह से अष्टमस्थ शनि देखा नहीं जाता हो तो क्लेश होता है।।११६।।

क्रूरैर्दृष्टो जन्मलग्नात् षष्ठे वाऽप्यष्टमे बुधः।
चतुर्वर्षे भवेन्मृत्युः शंकरो यदि रक्षति।।११७।।

यदि जन्मलग्न से बुध छठवें स्थान में स्थिति हो और पापग्रहों से देखा जाता हो तो महादेवजी भी उस बालक की रक्षा करते रहें तो भी चौथे वर्ष में मरे।।११७।।

दारिद्रययोग—

क्रूराश्चतुर्षु केन्द्रेषु तथा क्रूरो धनेऽपि वा।
द्रारिद्र्ययोगं जानीयात् स्ववंशस्य क्षयंकरः।।११८।।

यदि चारों केन्द्र और दूसरे स्थान में पापग्रह हों तो दरिद्रयोग जाने। इस योग में उत्पन्न मनुष्य दरिद्र और अपने वंश का नाश करनेवाला होता है।।११८।।

लग्नस्थाने यदा जीवो धनस्थाने शनैश्चरः।
राहुश्च सहजस्थाने माता तस्य न जीवति।।११९।।

यदि बृहस्पति लग्न में हो तथा शनि दूसरे घर में हो और राहु तीसरे घर में हो तो उस बालक की माता नहीं जीती।।११९।।

अल्पायुयोग—

सप्तमे भवने भौमश्चाष्टमे भार्गवो यदा।
नवमे भवने सूर्यः स्वल्पायुस्तस्य जायते।।१२०।।

यदि मंगल सातवें और शुक्र आठवें हो तथा सूर्य नवें स्थान में हो तो उस बालक की थोड़ी आयु होती है।।१२०।।

मृत्युयोग—

क्षीणचन्द्रो यदा लग्ने पापश्चाष्टमकेन्द्रगाः।
स्मरे लग्नपतिः पापयुक्तो नश्येत्तदा शिशुः।।१२१।।

जिस बालक के लग्न में क्षीण चन्द्रमा हो और पापग्रह अष्टम तथा केन्द्र स्थानों में हो तो बालक मरे। पाप युक्त लग्नेश सातवें स्थान में हो तो भी वह बालक मरे।।१२१।।

दशमस्थो दिवानाथः पापैर्बहुभिर्निरीक्षितः।
मेषवृश्चिककर्कस्थ सद्यो मृत्युप्रदा भवेत्।।१२२।।

जिसका सूर्य मेष, वृश्चिक अथवा कर्कराशि का होकर दशम स्थान में स्थित हो और बहुत से पापग्रहों से देखा जाता हो तो वह तुरन्त मरे।।१२२।।

राहुजीवौ रिपुक्षेत्रे लग्ने वाथ चतुर्थगौ।
त्रयोविंशे तदा वर्षे पुत्रस्तातं विनाशयेत्।।१२३।।

जिसके राहु और बृहस्पति छठवें या लग्न में अथवा चौथे स्थान में बैठे हों तो वह बालक तेईसवें वर्ष में अपने पिता का नाश करे। अर्थात् २३ वर्ष का वह बालक हो तब उसके पिता की मृत्यु हो।।१२३।।

याचकयोग—

अष्टमस्थो यदा भौमस्त्रिकोणे नीचगो रविः।
स शीघ्रमेव जातः स्याद् भिक्षाजीवी च दुःखितः।।१२४।।

मंगल जिसके आठवें स्थान में हो और सूर्य अपनी नीच राशि (तुला) का होकर त्रिकोण (५।९) में हो तो वह बालक शीघ्र दुखित होकर भिक्षा माँगकर अपनी जीविका करे।।१२४।।

मातृनाशयोग—

सिंहे भौमस्तुले सौरिः कन्यायां च यदा सितः।
मिथुने च यदा राहुर्जननी तस्य नश्यति।।१२५।।

जिसके मंगल सिंहराशि में, शनि तुलाराशि में, शुक्र कन्या राशि में और राहु मिथुन राशि में हो तो उस बालक की माता मर जाय।।१२५।।

कृच्छ्रजीवनयोग—

लग्ने क्रूरः स्वभवने क्रूरः पातालगी यदि।
दशमे भवने क्रूरः कष्टं जीवति बालकः।।१२६।।

जिसके क्रूरग्रह (पापग्रह) अपनी राशि का होकर लग्न में स्थित हो और क्रूरग्रह चौथे तथा दशवें स्थान में भी स्थित हों तो वह बालक कष्ट से जीवे।।१२६।।

पितृकष्टयोग—

सप्तमे भवने भानुः कर्मस्थो भूमिनन्दनः।
राहुर्व्यये च तस्यैव पिता कष्टेन जीवति।।१२७।।

जिसके सूर्य सातवें स्थान में, मंगल दशवें स्थान में और राहु बारहवें हो तो उस बालक का पिता कष्ट से जीवे।।१२७।।

मृत्युयोग—

त्रिकोणकेन्द्रगाः पापाः शुभा रन्ध्रव्ययारिगाः।
सूर्योदये प्रसूतस्य हरन्ति खलु जीवनम्।।१२८।।

जिसके पापग्रह त्रिकोण (५।९) में और केन्द्र (१।४।७।१०) में हों तथा शुभग्रह आठवें बारहवें हों और सूर्य के उदय में जन्म हो तो मृत्यु को प्राप्त होवे।।१२८।।

कष्टयोग—

स्मरे व्यये च सहजे मध्ये क्रूरा यदा ग्रहाः।
तदा जातस्य बालस्य शरीरे कष्टमादिशेत्।।१२९।।

जिसके क्रूर (पाप) ग्रह सातवें, बारहवें, तीसरे तथा दशवें स्थान हों तो उस बालक के शरीर को कष्ट होवे।।१२९।।

धनयोग—

कन्यायां च यदा राहुः शुक्रो भौमः शनिस्तथा।
तत्र जातस्य जायेत कुबेरादधिकं धनम्।।१३०।।

यदि राहु, शुक्र, मंगल और शनि कन्या में तो उसको कुबेर से भी अधिक धन होवे।।१३०।।

कष्टयोग—

क्रूरे लग्ने यदा जातस्तत्स्वामी क्रूरवेष्टितः।
आमवातो भवेत्तस्य शरीरे कष्टमादिशेत्।।१३१।।

जिसके क्रूर (पाप) ग्रह लग्न में हों और लग्न का स्वामी क्रूर ग्रहों से युक्त हो तो उसको आमवात रोग होवे।।१३१।।

सहजे सहजाधीशो लग्ने पुत्रे धनेऽपि वा।
जायते च तदा बालो यदि जातो न जीवति।।१३२।।

तृतीयेश तीसरे, लग्न में, पाँचवें अथवा दूसरे में हों तो ऐसे योग में बालक उत्पन्न हो तो नहीं जीवे।।१३२।।

स्वस्थयोग—

कन्यामिथुनगो राहुः केन्द्रे पष्ठे व्यये यदा।
त्रिकोणे च यदा जातो दाता भोक्ता निरामयः।।१३३।।

यदि राहु कन्या मिथुन राशि का होकर केन्द्र (१।४।७।१०) में वा छठें, बारहवें अथवा त्रिकोण (५।९) में स्थित हो तो बालक दानी, भोगी और आरोग्य शरीरवाला होवे।।१३३।।

मरणयोग—

एकः पापोऽष्टमस्थोऽपि शत्रुक्षेत्रे यदा भवेत्।
पापेन वीक्षितो वर्षान्मारयत्येव बालकम्।।१३४।।

यदि एक पापग्रह अपने शत्रु के स्थान में होकर अष्टम स्थान में स्थित होवे और उसको पापग्रह देखते हों तो बालक को एक ही वर्ष में मार डाले।।१३४।।

भौमभास्करमन्दाश्च शत्रुक्षेत्रेऽष्टमे यदा।
यमेन रक्षितोऽप्येवं वर्षमात्रं न जीवति।।१३५।।

जिस बालक के मंगल, सूर्य, शनि शत्रु के घर में स्थित होकर अष्टम स्थान में स्थित होवें तो यम रक्षा करता हो तो भी एक वर्ष न जीवे।।१३५।।

वक्री शनिर्भौमगेहे केन्द्रे षष्ठेऽष्टमेऽपि वा।
कुजेन बलिना दृष्टो हन्ति वर्षद्वये शिशुम्।।१३६।।

जिसके वक्री शनि मंगल के घर (मेष, वृश्चिक) का होकर केन्द्र (१।४।७।१०) वा छठवें अथवा आंठवें हो तो शनि दो वर्ष में बालक को मारे।।१३६।।

दीर्घायुयोग—

राहौ वृषे त्रिभिर्दृष्टे केतुदृष्टे चतुष्टये।
दृष्टे च गुरुशुक्राभ्यां दीर्घकालं स जीवति।।१३७।।

जिसके वृषराशि का राहु तीन ग्रहों से देखा जाता हों और केतु चौथे से देखा जाता हो और बृहस्पति शुक्र से भी देखा जाता हो तो वह बालक बहुत काल तक जीवे।।१३७।।

धनयोग—

चन्द्रेण मंगलो युक्तो जन्मकाले यदा भवेत्।
तस्य जातस्य गेहं तु लक्ष्मी नैव विमुञ्चति।।१३८।।

जिसके जन्मकाल में चन्द्रमा से युक्त मंगल हो उस बालक के घर को लक्ष्मी नहीं छोड़े।।१३८।।

नष्टयोग—

षष्ठाष्टमगश्चन्द्रः सद्यो मरणाय पापसंदृष्टः।
अष्टाभिः शुभसंदृष्टैर्वर्षैमिश्रैस्तदर्द्धेन।।१३९।।

जिसके चन्द्रमा छठवें, आठवें होवे और पापग्रह उसको देखते हों तो उस बालक की शीघ्र मृत्यु होवे और अष्टमस्थ चन्द्रमा शुभ ग्रहों से देखा जाता हो तो एक वर्ष में मरे, शुभग्रह पापग्रह दोनों से देखा जाता हो तो छः मास में मृत्यु हो।।१३९।।

आयुयोग—

शुक्लेपक्षे निशायां च कृष्णजातो दिवा तदा।
षष्ठाष्टमगश्चन्द्रो न शिशुं हन्ति तातवत्।।१४०।।

यदि शुक्लपक्ष में रात्रि का जन्म हो और कृष्णपक्ष में दिन का जन्म हो और चन्द्रमा छठवें और आठवें हो तो बालक को नहीं मारे पिता के समान रक्षा करे।।१४०।।

लग्ने त्रिकोणे द्यूने च व्यये पापयुतः शशी।
शिशुं हन्ति न दृष्टश्चेद् बलवद्भिः शुभैर्ग्रहैः।।१४१।।

यदि चन्द्रमा पापग्रह से युक्त होकर लग्न में, त्रिकोण (५।९) में सातवें बारहवें इन स्थानों में से किसी स्थान में स्थित हो और बलवान् शुभ ग्रह से न देखा जाता हो तो बालक का नाश करे।।१४१।।

सप्तमे चतुरस्त्रे च पापयुग्मान्तरे स्थितः।
करोति चन्द्रमा नाशं बालकस्य न संशयः।।१४२।।

जिसके चन्द्रमा दो पापग्रहों के अन्तर मे स्थित होकर लग्न से चौथे सातवें स्थित हों तो निःसन्देह उस बालक का नाश करे।।१४२।।

क्षीणचन्द्रो यदा लग्ने पापः केन्द्रेषु संस्थितः।
अष्टमे भवने वापि तदा मृत्युः शिशोर्भवेत्।।१४३।।

जिसके क्षीण चन्द्रमा लग्न में हो, तथा पापग्रह केन्द्र (१।४।७।१०) में या आठवें हों तो बालक की मृत्यु हो।।१४३।।

शनिराहुकुजैर्युक्तः सप्तमे भवने शशी।
सप्तमे दिवसे हन्ति मासे वा सप्तमे शिशुम्।।१४४।।

जिसके सातवें चन्द्रमा शनि राहुमंगल से युक्त होकर स्थित हो तो उस बालक की सातवें दिन अथवा सातवें मास में मृत्यु होवे।।१४४।।

न पश्यति शशी लग्नं मध्ये वा सौम्यशुक्रयोः।
ताते परोक्षे जन्मास्य भौमेऽस्ते वा यमे तनौ।।१४५।।

यदि चन्द्रमा बुध तथा शुक्र के बीच में होकर लग्न को न देखता हो और मंगल सातवें अथवा शनि लग्न में हो तो उस बालक का जन्म पिता के परोक्ष में जाने।।१४५।।

लग्नस्थश्च यदा भानुः पञ्चमस्थो निशाकरः।
अष्ठमस्था यदा पापास्तदा जातो न जीवति।।१४६।।

जिसके सूर्य लग्न में चन्द्रमा पञ्चम में और पापग्रह अष्टम स्थान में हों तो वह बालक नहीं जीवे।।१४६।।

त्रिकोणकेन्द्रगाः पापाः सौम्याः षष्ठव्याष्टगाः।
सूर्योदये संप्रसूतः प्राणांस्त्यजति बालकः।।१४७।।

जिसके पापग्रह त्रिकोण (५।९) तथा केन्द्र (१।४।७।१०) में हों और शुभग्रह छठवें हो, बारहवें हों और सूर्य के उदयकाल में पैदा हुआ बालक प्राण को त्यागता है।।१४७।।

लग्ने षष्ठेऽष्टमे द्यूने शनियुक्तो यदा कुजः।
शुभग्रहैरदृष्टश्च शिशुं हन्ति न संशयः।।१४८।।

जिसके लग्न में तथा छठवें सातवें यदि शनि से युक्त मंगल स्थित हों और शुभग्रहों से न देखा जाता हो तो निःसन्देह उस लड़के का नाश हो।।१४८।।

षष्ठाष्टमे कर्कराशि चन्द्रदृष्टी भवेद्बुधः।
चतुर्भिर्वत्सरैर्बालं मारयत्येव निश्चितम्।।१४९।।

जिसके बुध कर्कराशि में होकर छठवें या आठवें होवें और चन्द्रमा से देखे जाते होवें तो निश्चय चार वर्ष में बालक को मारते हैं।।१४९।।

दृष्टः सूर्येन्दुमन्दारैर्न दृष्टो भृगुनन्दनः।
वर्षैस्त्रिभिः शिशुंहन्ति भौमगेहोऽष्टमे स्थितः।।१५०।।

यदि सूर्य, चन्द्रमा, शनि तथा मंगल से बृहस्पति देखे जाते हों और शुक्र की दृष्टि न हो और भौम की राशि में स्थित होकर आठवें स्थान में हों तो ऐसे बृहस्पति तीन वर्ष में बालक का नाश करें।।५०।।

कर्के सिंहेऽष्टमे षष्ठे व्यये च भृगुनन्दनः।
सर्वैर्दृष्टो शुभैर्बालं षड्भिर्वर्षैर्विनाशयेत्।।१५१।।

यदि शुक्र कर्क अथवा सिंह राशि में होकर छठवें, आठवें, बारहवें इन स्थानों में से किसी स्थान में स्थित हो और शुभग्रहों की दृष्टि हो तो छः वर्ष में बालक का नाश करे।।१५१।।

लग्ने शनिः पापदृष्टो हन्ति षोडशवासरैः।
पापयुक्तश्च मासेन शुद्धो वर्गेण बालकम्।।१५२।।

यदि शनि लग्न में हो और पापग्रह से देखा जाता हो तो सोलह दिन के भीतर ही बालक का नाश करता है तथा पापग्रहों के साथ हो तो एक मास में और शुद्ध अर्थात् शुभग्रह से युक्त हो तो एक वर्ष में बालक का नाश करे।।१५२।।

स्वगेहे गुरुगेहे वा तुलालग्ने शनिः स्थितः।
सूर्यमंगलमध्ये वा नायुर्हन्ति कदाचन।।१५३।।

यदि शनि अपनी राशि में अथवा बृहस्पति के गृह में वा तुला लग्न में स्थित हो अथवा सूर्य मंगल के मध्य में हो तो आयु का नाश न करे।।१५३।।

केन्द्रे राहुः पापदृष्टो दशभिर्हन्ति वत्सरैः।
बालं द्वादशभिः कश्चित् कश्चित् षोडशभिर्वदेत्।।१५४।।

यदि राहु केन्द्र में हो और पापग्रहों से देखा जाता हो तो दश वर्ष में बालक का नाश करे। किसी आचार्य के मत से १२ वर्ष में, किसी के मत से १६ वर्ष में नाश करते हैं।।१५४।।

जन्मलग्नपतिः षष्ठे व्यये मृतो च तिष्ठति।

अस्तंगतो मृत्युकरो राशि तुल्यैश्च वत्सरैः।।१५५।।

यदि जन्मलग्न का स्वामी छठवें बारहवें या आठवें स्थान में अस्तंगत हो तो राशि के समान वर्षो में मृत्यु करे।।१५५।।

सौम्याः षष्ठेऽष्टमे पापैर्वक्रीभूतैर्विलोकिताः।

शुभैरदृष्टा मासेन मारयन्त्येव बालकम्।।१५६।।

जिसके शुभग्रह छठें तथा आठवें हो और वक्री पापग्रहों से देखे जाते हों तथा शुभग्रह न देखते हों तो एक ही महीने में बालक को मारे।।१५६।।

उदितो यत्र नक्षत्रे केतुर्यस्तत्र जायते।

रौद्रे मुहूर्ते सोऽप्येव स च प्राणैर्वियुज्यते।।१५७।।

केतु का उदय जिस नक्षत्र में हो वह रौद्रमुहूर्त कहा जाता है। इस मुहूर्त में जिस बालक का जन्म हो, वह प्राण से रहित होता है।।१५७।।

आयु योग—

मेषे वृषे च कर्के च सर्वापद्भयो हि रक्षति।

सिंहिकातनयो बालं प्रियं पुत्रं यथा पिता।।१५८।।

यदि राहु, मेष, वृष, कर्क इन राशियों में हो तो सब आपत्तियों से रक्षा करे जैसे पिता अपने प्रिय बालक की रक्षा करता है।।१५८।।

सम्पत्तियोग—

षष्ठे तृतीये लाभे च स्थितः सम्पत्तिकारकः।

राहुः सर्वापदां हन्ता स्वगृहे च विशेषतः।।१५९।।

यदि राहु छठें तीसरे या ग्यारहवें हो तो सम्पत्ति देनेवाला और संपूर्ण आपदाओं से रक्षा करने वाला होता है और यदि अपनी राशि का होकर उक्त स्थानों में राहु हो तो विशेष फल होता है।।१५९।।

चन्द्रः पापग्रहैर्युक्तश्चन्द्रो वा पाणमत्यगः।

 चंद्रात्सप्तमगः पापस्तदा मातृवधो भवेत्।।१६०।।

यदि चन्द्रमा पापग्रहों से युक्त अथवा पापग्रहों के मध्य में हो वा चन्द्रमा से सातवें पापग्रह हों तो बालक की माता का नाश हो।।१६०।।

सूर्यः पापेन संपुक्तस्तदा पितृवधो भवेत्।
लग्ने पापेन संयुक्तं लग्नं वा पापमध्यगम्।।१६१।।

यदि सूर्य पापग्रहों से युक्त हो और लग्न पापग्रहों के मध्य में हो तो पिता का नाश करे।।१६१।।

सप्तवर्षायुयोग—

लग्नात्सप्तमगः पापस्तदा चात्मवधो भवेत्।
आपकर्मा तदा जातः सप्तवर्षाणि जीवति।।१६२।।

यदि पापग्रह सातवें हो तो स्वयं सात बर्ष जीवे और कुकर्म करके अपनी आत्मा का वध करे।।१६२।।

गात्रहीनयोग—

अष्टमे च यदा सौरिर्जन्मस्थाने च चंद्रमाः।
मन्दाग्न्युदररोगी च गात्रहीनश्च जायते।।१६३।।

जिसके शनि आठवें हो और जन्मस्थान में चन्द्रमा हों तो व बालक मन्दाग्निवाला हो और पेट का रोगी तथा शरीर से हीन, होवे।।१६३।।

शनिक्षेत्रे यदा भानुर्भानुक्षेत्रे यदा शनिः।
द्वादशे वत्सरे मृत्युस्तस्य जातस्य जायते।।१६४।।

जिसके सूर्य शनि के घर में तथा शनि सूर्य के गृह में हो तो १२ वर्ष में उस बालक की मृत्यु हो।।१६४।।

तस्करयोग—

बुधभौमौ यदा लग्ने षष्ठे वा यदि तिष्ठतः।
तस्करो घोरकर्मा च हस्तपादौ विनश्यतः।।१६५।।

जिसके लग्न में बुध और मंगल हों या छठें हों तो वह बालक चोर तथा कुकर्मी हो और उसके हाथ पैर नष्ट हो।।१६५।।

मृत्युयोग—

षष्ठेऽष्टमे च मूर्तौ च शनिक्षेत्रे यदा बुधः।
पापाक्रान्तश्चतुर्वर्षे मारयत्येव बालकम्।।१६६।।

यदि शनि के क्षेत्र का होकर बुध छठें या आठवें अथवा लग्न में हो और पापग्रहों से युक्त हो तो चतुर्थ वर्ष में वह बालक को मारता है।।१६६।।

अष्टमस्थो यदा राहुः केन्द्रस्थाने च चन्द्रमाः।
सद्य एव भवेन्मृत्युर्बालकस्य न संशयः।।१६७।।

जिसके राहु आठवें हों और चन्द्रमा केन्द्र (१।४।७।१०) में हो तो निःसन्देह उस बालक की शीघ्र मृत्यु होवे।।१६७।।

सप्तमे भवने राहुः शत्रुक्षेत्रे यदा भवेत्।
प्राप्ते च षोडशे वर्षे तस्य मृत्युर्न संशयः।।१६८।।

जिसके राहु शत्रु के घर का होकर सातवें हो तो सोलहवें वर्ष में उस बालक की मृत्यु होवे इसमें संदेह नहीं है।।१६८।।

द्वादशस्थो यदा चन्द्रः पापः स्यादष्टमे गृहे।
एकमासे भवेन्मृत्युस्तस्य बालस्य निश्चितम्।।१६९।।

जिसके बारहवें चन्द्रमा और पापग्रह आठवें हों तो निश्चय उस बालक की एक महीने में मृत्यु होवे।।१६९।।

जन्मस्थाने यदा राहुः षष्ठस्थाने च चन्द्रमाः।
अपस्मारी तदा बालो जायते नात्र संशयः।।१७०।।

यदि राहु जन्मस्थान में, चन्द्रमा छठवें घर में हो तो उस बालक को निश्चय अपस्मार रोग होवे।।१७०।।

भार्गवेण युतश्चन्द्रः षष्ठाष्टमगतो भवेत्।
मन्दाग्निः कुक्षिरोगी च हीनांगोऽपि च बालकः।।१७१।।

जिसके चन्द्रमा शक्र से युक्त होकर छठवें, आठवें हो तो वह बालक मन्दाग्नि वाला, कुक्षि रोग और अङ्ग से हीन होवे।।१७१।।

षष्ठाष्टमे यदा चन्द्रो बुधयुक्तस्तु तिष्ठति।
विषदोषेण हि तस्य तदा मृत्युश्च जायते।।१७२।।

जिसके चन्द्रमा बुध से युक्त होकर छठवें, आठवें हो तो विष से उस बालक की मृत्यु होवे।।१७२।।

भानुना संयुतश्चन्द्रः षष्ठाष्टमगतो यदा।
राजदोषेण मृत्युर्वा सिंहदोषेण वा भवन्।।१७३।।

यदि चन्द्रमा सूर्य से युक्त छठें, आठवें स्थान् में हो तो उस बालक की राजा से या सिंह से मृत्यु होवे।।१७३।।

एकोऽपि यदि मूर्तौ स्याज्जन्मकाले दिवाकरः।
स्थानहीनो भवेद्बालः शोकसन्तापपीडितः।।१७४।।

जिसके लग्न में एक सूर्य ही हो तो बालक स्थान से रहित होकर, शोक और संताप से पीड़ित रहे।।१७४।।

दशमस्थो यदा भौमः शत्रुक्षेत्रे स्थितस्तदा।
म्रियते तस्य बालस्य पिता शीघ्रं न संशयः।।१७५।।

जिसके शत्रु क्षेत्र में होकर मंगल दशम स्थान में हों तो निःसन्देह उस बालक के पिता शीघ्र मरें।।१७५।।

लग्नेऽष्टमे यदा राहुश्चन्द्रयुक्तो हि तिष्ठति।
द्वादशाहे भवेत् तस्य बालस्य मरणं ध्रुवम्।।१७६।।

जिसके चन्द्रमा से युक्त राहु लग्न में या आठवें घर का हो तो उस बालक की निश्चय १० दिन में मृत्यु होवे।।१७६।।

अरिष्ट नाशयोग—

शनैश्चरस्तुलाकुम्भे मकरे च यदि जायते।
लग्नेऽष्टमे द्वितीये वा तदारिष्टं न जायते।।१७७।।

यदि शनि तुला, कुम्भ या मकर का लग्न में आठवें या तीसरे हो तो अरिष्ट नहीं होता है।।१७७।।

लग्नाच्च नवमे सूर्य सूर्यपुत्रे तथाष्टमे।
एकादशे भार्गवे च मासमेकं न जीवति।।१७८।।

जिसके सूर्य लग्न से नवें और शनि आठवें तथा शुक्र ग्यारहवें हो तो वह बालक एक महीना भी न जीवे।।१७८।।

धने गुरुः सैंहिकेयो भौमः शुक्रश्च सप्तमे।
अष्टमे रविचन्द्रौ च म्लेच्छः स्याद्यौवने हि सः।।१७९।।

जिसके बृहस्पति और राहु दूसरे स्थान में हों, मंगल शुक्र सातवें हों और सूर्य, चन्द्रमा आठवें हों तो वह बालक युवा होने पर म्लेच्छ (मुसलमान) हो जाय।।१७९।।

वंशविनाशक योग—

नवमे दशमे चन्द्रः सप्तमे च यदा सितः।
पापे पातालसंस्थे च वंशक्षयकरो नरः।।१८०।।

जिसके चन्द्रमा नवें, दशवें हों, शुक्र सातवें हो और पापग्रह चौथे में स्थित हों तो वह बालक वंश का नाश करे।।१८०।।

कुलदीपक योग—

भ्रातृस्थाने यदा जीवो लाभस्थाने यदा शनिः।
स लोके गृहमध्यस्थो जायते कुलदीपकः।।१८१।।

जिसके बृहस्पति तीसरे और शनि ग्यारहवें हों तो बालक घर में रहता हुआ कुलदीपक होवे।।१८१।।

सिंहलग्ने यदा भौमः पंचमे च निशाकरः।
व्ययस्थाने यदा राहुः स जातः कुलदीपकः।।१८२।।

जिसके मंगल सिंह राशि में और चन्द्रमा पाँचवे और राहु बारहवें घर में स्थित हो तो वह बालक कुल में दीपक समान हो।।१८२।।

एकः पापो यदा लग्ने पापश्चैको रसातले।
जायते च द्विनालाभ्यां स जातः कुलदीपकः।।१८३।।

जिसके एक पापग्रह लग्न में और एक पापग्रह चौथे हो तो वह बालक दो नाल से जायमान होकर कुल का दीपक हो।।१८३।।

विख्यातपुत्रयोग—

लग्ने वा सप्तमे भौमः पंचमे च दिवाकरः।
जीवेदरण्यमध्येऽपि विख्यातः स न संशयः।।१८४।।

मंगल जिसके लग्न में अथवा सातवें हो और सूर्य पाँचवें हो तो बालक वन में भी जीवित रहे और उसके विख्यात होने में कोई संदेह न रहे।।१८४।।

— — —

विशेष प्रकरण

अङ्गस्फुरणफल—

ब्रूहि मे त्वं निमित्तानि अशुभानि शुभानि च।
सर्वधर्मभृतां श्रेष्ठ त्वं हि सर्वं विबुध्यसे।।१।।

मनु महाराज मत्स्यभगवान् से पूछते हैं कि हे धर्मधारियों में श्रेष्ठ आप (अंगफुरण का) शुभाशुभ फल कहिये।।१।।

अङ्गस्य दक्षिणे भागे प्रशस्तं स्फुरणं भवेत्।
अप्रशस्तं तथा वामे पृष्ठस्य हृदयस्य च।।२।।

(मत्स्य उत्तर देते हैं कि) अंग का फड़कना दक्षिण भाग में शुभ बायें भाग में, पृष्ठ में वा हृदय में अशुभ है।।२।।

अङ्गानां स्पन्दनं चैव शुभाशुभविचेष्टितम्।
तन्मे विस्तरतो ब्रूहि येन स्यात्तद्विधो भुवि।।३।।

(मनु बोले) अंग के समस्त स्थानों के फड़कने का शुभाशुभ फल विस्तार सहित वर्णन कीजिए जिससे संसार के लोग जान सकें।।३।।

पृथ्वीलामो भवेन्मूर्ध्नि ललाटे रविनन्दनः।
स्थानवृद्धिः समायाति भ्रूनसोः प्रियसंगमः।।४।।
भृत्यलब्धिश्चाक्षिदेशे दृगुपान्ते धनागमः।
उत्कण्ठाऽपगमे मध्मे दृष्टं राजन्विचक्षणैः।।५।।
दृग्बन्धने संगरे च जयं शीघ्रमवाप्नुयात्।
योषिल्लाभोऽपाङ्गदेशे श्रवान्ते प्रियश्रुतिः।।६।।
नासिकायां प्रीतिसौख्यं प्रियाप्तिरधरोष्ठयोः।
कण्ङ्गे तु भाग्यलाभः स्याद्भागयवृद्धिरथांसयोः।।७।।
सुहृच्छेष्ठश्च बाहुभ्यां हस्ते चैव धनागमः।
पृष्ठे पराजयोत्सेधे जयो वक्षस्थले भवेत्।।८।।
कक्षाभ्यां प्रीतिरुदृष्टां स्त्रियाः प्रजननं भगे।
स्थानभ्रंशो नाभिदेशे अन्त्रे चैव धनागमः।।९।।

जानुसन्धौ परैः सन्धिर्बलवद्भिर्भवेन्नृप।
एकदेशे भवेत्स्वामी जंघाभ्यां रविनन्दन!।।१०।।
उत्तमस्थानमाप्नोति पादयोः स्फुरणे नृप!।
अलाभश्चाध्वगमनं भवेत्पादतले नृप!।।११।।

(मत्स्य) बोले कि) मस्तक फड़कने से पृथ्वीलाभ, ललाट पड़कने से स्थान वृद्धि, भृकुटी के बीच का भाग फड़कने से प्रियदर्शन, नेत्रों के फड़कने से सेवक की प्राप्ति, नेत्रों की कोरों के फ० से धनलाभ, कण्ठ का मध्य भाग फ० से राज्य प्राप्ति, नेत्रफ० से युद्ध में जय, अपांगदेश के फ० से स्त्री लाभ, कर्णान्तफ० से प्रिय मित्रकी सुध, नासिका फ० से सुख प्राप्ति, अधरोष्ठ फ० से प्रिय वस्तुका लाभ, कण्ठ फ० से एश्वर्य लाभ कन्धे फ० से भोग की वृद्धि, दोनों भुजा फ० से मित्र से भेंट, दोनों हाथ फ० से धन लाभ, पीठफ० पराजय, उरु फ० से जयलाभ, छातीफ० से जयलाभ, काँख फ० से प्रीति, शिश्नेन्द्रिय फ० से स्त्री लाभ, नाभि फ० से स्थानभ्रष्ट, आँतों के फ० से धनलाभ, जानुकी सन्धि, जंधा फ० से एकदेशाधिपति, पैरों के फ० से श्रेष्ठ स्थानों में मान और तालुओं के फड़कने से हानि एवं गमन होता है।।४—११।।

स्त्रीणामङ्गस्फुरणफलम्—

लाञ्छनं पीठकं चैव ज्ञेयं स्फुरणवत्तथा।
विपर्ययेण हि ततः सर्व स्त्रीणां विपर्ययात्।।
दक्षिणेऽपि प्रशस्तेऽङ्गे प्रशस्तं स्याद्विशेषतः।।१२।।

स्त्रियोंका अङ्ग भृकुटी के बीच और पीठ में पड़के तो पुरुषों के ही समान फल जाने और सब अङ्ग पुरुषों के विपरीत अच्छे हैं अर्थात् स्त्रियों का वामाङ्ग फड़कना शुभ माना गया है।।१२।।

परिहारः—

अनन्यथासिद्धिरयत्नतोऽस्य फलस्य शस्तस्य च निन्दितस्य।
अनिष्टनिर्दोषगमे द्विजानां कार्य सुवर्णेन तु तर्पणं स्यात्।।१३।।

अंगस्फुरण के अनिष्ट फलको दूर करने के लिए और दुःस्वप्नजनित अशुभ फल दूर करने के लिये ब्राह्मण को सुवर्ण देकर संतुष्ट करे।।१३।।

यात्रालग्नविचारः—

चरलग्ने प्रयातव्यं द्विस्वभावे तथा नरैः।
लग्ने स्थिरे न गन्तव्यं यात्रायां क्षेममिप्सुभि।।१४।।

चर लग्न में और द्विस्वभाव लग्न में शुभकी अभिलाषा करनेवाले यात्रा करें, शेष लग्न में यात्रा न करें।।१४।।

द्वादशस्थानानुसारेण यात्रालग्ने ग्रहफलम्—

जन्मस्थं चाष्टमं त्याज्यं लग्नं द्वादशमेव च।
ग्रहाणां च बलं वीक्ष्य गच्छेद्दिग्विजयी नृपः।।१५।।

लग्न में, अष्टम एवं द्वादश स्थान में पापग्रह को छोड़ ग्रहबल देखकर यात्रा करने में विजय प्राप्त होती है।।१५।।

स्थाने यदा स्युर्गुरुसौम्यशुक्राः सिद्धयन्ति कार्याणि च पञ्चमेऽह्नि।
राज्ञः पदं वा सुखदेशलाभं मासस्य मध्ये ग्रहभावयुक्तम् ।।१६।।

लग्नमें गुरु, बुध वा शुक्र हो तो यात्रा करने पर ५ दिन वा १ मास में राज्यपद वा देश लाभ हो।।१६।।

धनस्थानम्—

जीवो बुधो वा भृगुनंदनो वा स्थाने द्वितीये गमनस्य काले।
सुवस्त्रलाभो भवतीह तस्य मासस्य मध्ये च चतुर्दशेऽह्नि।।१७।।

दूसरे स्थान में गुरु, बुध वा शुक्र हो तो यात्रा करनेपर १४ दिन में वा १ मास में सुन्दर वस्त्र मिले।।१७।।

यदा धनस्था रविराहुभौमाः सौरिश्च केतुस्त्रिभिरेव मासैः।
वित्तर नाशं च ददाति मृत्युं सत्यं हिवाक्य मुनयो वदन्ति।।१८।।

स्थान में रवि, राहु मंगल, शनि वा केतु हो तो यात्रा करने से ३ महीने में धनहीन होकर मृत्यु होती है। यह मुनियों का वचन जानो।।१८।।

तृतीयस्थानम्—

स्थाने तृतीये गुरुभार्गवौ च भौमस्य सूनुश्च निशापतिश्च।
करोति कार्य सफलं च सर्वं पक्षद्वयेनापि दिनत्रयेण।।१९।।

तीसरे स्थान में, गुरु, शुक्र, चन्द्र वा बुध हो तो यात्रा करने से ३ दिन में वा १ मास में कार्य सिद्ध हो।।१९।।

चतुर्थस्थानम्—

क्रूराश्चतुर्थे गमने यदा तु न स्युश्च शेषाः शुभदा हि कार्ये।
तत्रापि दैवेन भवेच्च सिद्धिर्मासत्रयेणापि दशाहमध्य।।२०।।

यात्रा लग्न से क्रूरग्रह चौथे स्थान में हों तो शेष सब शुभग्रह सब कार्यों में शुभदायक होते है। उसपर यदि भाग्य अनुकूल हो तो यात्रा करने पर दस दिन या तीन महीने में कार्य सिद्ध हो जाता है।।२०।।

वारपरत्वेन स्वरविचारः—

गुरौ शनौ रवौ भौमे शुभो वै दक्षिणः स्वरः।
अन्यवारेषु वामस्तु स्वरचैव शुभः स्मृतः।।२१।।
निर्गमे वामतः श्रेष्ठः प्रवेशे दक्षिणः शुभः।
यः स्वरः स नासाग्रे योगिनां मतमीदृशम्।।२२।।

गुरु, शनि, रवि और भौमवार में दक्षिण स्वर चलने पर प्रवेश करने में शुभ है। सोम, बुध और शुक्रवार में वाम स्वर के चलने पर यात्रा करना श्रेष्ठ है, ऐसा स्वर के ज्ञाता कहते हैं।।२१—२२।।

वारपत्वेन छायाविचारः—

अष्टौ पादा बुधे स्युर्नष धरणिसुते सप्त जीवे पदानि।
ज्ञेयं चैकादशार्के शनिशशिभृगुषु प्रोक्तमर्थं चतुष्कम्।।
तस्मिन्काले मुहूर्ते सकलगुणयुतः कार्यसिद्धः शुभोक्तः।
नास्मिन् पञ्चाङ्गशुद्धिर्न खलु शशिबलं भाषितं गर्गमुख्यैः।।२३।।

८ पैर अपनी छाया देखकर बुधवार को यात्रा करे, ९ पैर छाया देखकर भौम को यात्रा करे, ७ पैर छाया देखकर रविको ४ पैर छाया देखकर शनि, सोम और शुक्रवार को यात्रा करे तो यह सर्व गुणयुक्त सिद्ध मुहूर्त होता है। इसमें चन्द्रबल देखने की आवश्यकता नहीं। यह गर्गाचार्य का वचन।।२३।।

काकशब्दशकुनविचारः—

काकस्य वचनं श्रुत्वा पादच्छाया तु कारयेत्।
त्रयोदशयतां कृत्वा षड्भिर्वै भागमाहरेत्।।२४।।
लाभः खेदरुतथा सौख्यं भोजनं च धनागमः।
अशुभं च क्रमेणैव गर्गस्य वचनं यथा।।२५।।

काक का शब्द सुन अपने पैरों से छाया नापकर उनमें १३ और मिलावे, ६ का भाग दे, शेष १ बचे तो लाभ. २ में खेद, ३ में सुख ४ में भोजन, ५ में धन, पूर्ण भाग लग जाने पर अशुभ जानो। यह गर्ग मुनि का वचन है।।२४—२५।।

पिङ्गलशब्दशकुनविचारः—

उल्लासः किल्किले चैव चिल्पिल्यां भोजनं तथा।
बन्धनं खिमर्टाखिट्टि स्यात कुर्क्कशब्दे महद्भयम्।।२६।।

यात्रा में किल्किल शब्द होने से उल्लास, चिल्पिल शब्द होने से भोजन की प्राप्ति, खिटखिट शब्द होने से बन्धन और कुकुँर शुब्द होने से भहाभय होता है।।२६।।

छिक्कानुसारेण पादछायाशकुनविचारः—

बुधश्छिक्करवं श्रुत्वा पादच्छायां च कारयेत्।
त्रयोदशयुतां कृत्वा चाष्टभिर्भागमाहरेत्।।२७।।
लाभः सिद्धिर्हानिः शोको भयं श्रीदुःखनिष्फले।
क्रमेणैवं फलं ज्ञेंय गर्गेण च यथोदितम्।।२८।।

छींकके शब्दको सुन, अपने पैरकी छाया नाप १३ मिलावे, ८ से भाग दे; जो शेष रहे उसका फल इस प्रकार होता है। १ बचने से लाभ २ से सिद्धि, ३ से हानि, ४ से शोक, ५ से भय, ६ से लक्ष्मी, ७ से दुख और ८ के बचने से निष्फल, ऐसा गर्गमुनि का वचन है।।२७—२८।।

छिक्काशकुनम्—

छिक्काफलं प्रवक्ष्यामि पूर्वस्यामशुभं फलम्।
आग्नेय्यां शोकदुःखं स्यादरिष्टं दक्षिणे तथा।।२९।।
नैर्ऋत्यां च शुभं प्रोक्तं पश्चिमे मिष्ठभक्षणम्।
वायव्ये धनलाभस्तु उत्तरे कलहस्तथा।।३०।।
ईशान्यां च शुभं ज्ञेयमात्मछिक्का महद्भयम्।
ऊर्ध्वं चैत्र शुभं ज्ञेयं मध्ये चैव महद्भयम्।।३१।।
आसने शयने चैव दाने चैव तु भोजने।।३२।।
वामाङ्गे पृष्ठतश्चैव षट् छिक्काश्च शुभावहाः।।३३।।

छींक का फल कहते हैं। पूर्व की छींक अशुभ है, आग्नेयकी छींक शोक और दु:ख देती है, दक्षिण की कष्ट देती है, नैर्ऋत्यकी शुभ है, पश्चिमकी मधुर भोजन कराती, वायव्यका का धन देती, उत्तर की क्लेश कारिणी, ईशान्य की शुभ, अपनी छींक अधिक भयदायक, ऊपर की छींक शुभ, मध्य की अधिक भयदायक, आसन पर बैठने के समय सोते समय, दानके समय, भोजन करते समय, बाई ओर की वा पीछे की छींक शुभ होती है।।२९–३३।।

पल्लीशब्दशकुनविचार:—

वित्तं ब्रह्मणि कार्यसिद्धिमतुलां शुक्रे हुताशे भयम्।
याम्ये मित्रवधः क्षयञ्च निरृत्ते लाभं समुद्रालये।।३४।।
वायव्यां वरमिष्टमन्नमशनं सौम्येऽर्थलाभस्तया।
ईशान्यां गृहमेधिकार्यमतुलं सर्वज्ञ भूमौ भयम्।।३४।।

यात्रा काल में पूर्व काल में पल्ली का शब्द हो तो ब्रह्म सम्बन्धी कार्य में विशेष धन मिले: आग्नेय में शब्द से होने से अग्निभय, दक्षिण में मित्रवध, नैर्ऋत्य में क्षय, पश्चिम में लाभ, वायव्य में सुन्दर तथा मधुर भोजन की प्राप्ति, उत्तर में धन की प्राप्ति, ईशान्य में अर्थ–सिद्ध और भूमि में पल्ली का शब्द हो तो भय उत्पन्न करे।।३४।।

पल्लीपतन सरङ्गाधिरोहणफलम्—

राज्यं तु शिरसि ज्ञेयं ललाटे बन्धुदर्शनम्।
भ्रूमध्ये राजसम्मानमुत्तरोष्ठे धनक्षयम्।।३५।।
अधोरोष्ठे धनैश्बर्यं नासान्ते व्याधिनाशनम्।
आयुष्यं दक्षिणे कर्णे बहुलाभस्तु वामके।।३६।।
अक्ष्णोस्तु बन्धनं ज्ञेयं भुज भूपतितुल्यता।
राजक्षोभं तथा वामे कण्ठे शत्रुविनाशनम्।।३७।।
स्तनद्वये च दुर्भाग्यमुदरे मुण्डनं शुभम्।
प्रजानाशः पृष्ठदेशे जानुजङ्घे शुभाहवम्।।३८।।
करद्वये वस्त्रलाभः स्कन्धयोर्विजयी भवेत्।
नाभौ बहुधनं प्रोक्तमूर्वोश्चैव भयादिकम्।।३९।।

दक्षिणे मणिबन्धे च मनस्तापो धनक्षयः।
मणिबन्धे तथा वामे कीर्तिवृद्धिधनप्रदम्।।४०।।
नखेषु धान्यलाभं च वक्त्रे मिष्टान्नभोजनम्।
गुल्फयोर्बन्धनं ज्ञेयं केशांते मरणं ध्रुवम्।।४१।।
अध्वा तु दक्षिणे पादे वामे बन्धुविनाशनम्।
स्त्रीनाशः स्यात्पादमध्ये पादान्ते मरणं भवेत्।।४२।।
पल्ल्याः प्रपतते ज्ञेयं सरठम्याधिरोहणे।
यात्राद्युक्तमनुष्यस्यैतच्छुभाशुभसूचकम् ।।४३।।

छिपकिली के गिरने और गिरगिट के चढ़ने का फल। स्पष्टार्थ।।३५-४३।।

दुष्टशकुनम्—

औषध्या च नियुक्तो हि धान्यं कृष्णं तु यद्भवेत्।
कार्पासश्च तृणं शुष्कं शुष्कं गोमयमेव च।।४४।।

औषधिके लिये जाता हुआ मनुष्य, काला धान्य, कपास, सूखे तृष और सूखा हुआ गोबर, प्रस्थानके समय यदि सामने से आवं तो अशुभ जाने।।४४।।

इन्धनं च तथांगारं गुडसर्पिस्तथाऽशुभम्।
अभ्यक्तो मलिनो मन्दस्तथा नग्नश्च मानवः।।४५।।

इन्धन, जलती हुई आग, गुड़, घी, शरीर में तेल लगाये, मलिन, मंद और नंगा मनुष्य, प्रस्थान केसमय संमुख आवे से अशुभ जानो।।४५।।

मुक्तकेशो रुजार्तश्च काषायाम्बरधारिणः।
उन्मत्तः कथितोऽसत्यो दीनो वाथ नपुंसकः।।४६।।

बिखरेबालों वाला मनुष्य, रोगी, गेरुआ वस्त्र पहने, तथा कथरीलिये पापी, दरिद्र, नपुंसक प्रस्थान के समय सामने आने से अशुभ जानो।।४६।।

अयः पङ्कस्तथा चर्म केशबन्धनमेव च।
तथा निःसारवस्तुनि पिण्याकादि तथैव च।।४७।।

लोहाखण्ड, कीचड़, चर्म, केश बाँधता हुआ मनुष्य, निःसार पदार्थ और खली सामने आने से प्रस्थान के समय अशुभ जानो।।४७।।

चाण्डालस्य शवश्चैव राजबन्धनपालकः।
बधकाः पापकर्माणी गर्भिणी स्त्री तथैव च।।४८।।

चाण्डालका मुर्दा, राजबन्धन का पालक, वध करनेवाला, पापी और गर्भवती स्त्री के भी प्रस्थानके समय सम्मुख आने से अशुभ जानो।।४८।।

तुषभस्मकपालास्थिभिन्नभाण्डानि यानि च।
एवमादीनि चान्यानि ह्यप्रशस्तानि दर्शने!।।४९।।

भूसि, भस्म, खोपड़ी टूटे एवं खाली बर्तन, हुआ सारंग पक्षी आदि का प्रस्थान के समय सम्मुख आना अशुभ है।।४९।।

क्व यासि तिष्ठ आगच्छ कि ते तत्र गतस्य तु।
अन्यशब्दाश्च येऽनिष्टास्ते विपत्तिकरा अपि।।५०।।

कहाँ जाते हो ठहरो, आओ वहाँ जाने से क्या होगा? ऐसे अनिष्ट शब्द विपत्तिकारक जानो।।५०।।

ध्वजादौ वायसोऽऽस्थानं कव्यदानविगर्हितम्।
स्खलनं वाहनानां च वस्त्रसंगस्तथैव च।।५१।।

ध्वजापर (काक का बैठना, कव्याग्निदान, वाहनोंका गिरना और वस्त्र का किसी पदार्थ में उलझना आदि को यात्रा और प्रस्थान के समय अशुभ जाने।।५१।।

दुष्टशकुनपरिहारः—

दुष्टे निमित्ते प्रथमे अमंगल्यविनाशनम्।
केशव पूजयेद्विद्वान् स्तवेन मधुसूदनम्।।५२।।

यात्रा के समय उपर्युक्त अपशकुनों में जो पहले अमंगल दृष्टि आवे तो नाशकारक जानो। इसके दोष को दूर करने के लिये विष्णुपूजा और विद्वान् से विष्णुसहस्रनाम का पाठ करावे।।५२।।

द्वितीये च ततो दृष्टः प्रतीपः प्रविशेद्गृहम्।
अथेष्टानि प्रवक्ष्यामि मंगलानि तथानघ।।५३।।

जो दूसरी बार भी अपशकुन दृष्टि में आवे तो घर को लौट जाय अर्थात् यात्रा बन्द कर दे। अब मंगलकारक शकुनों को कहते है।।५३।।

यात्रासमये शुभशकुनविचारः—

प्रशस्तो वाद्यशब्दश्च भिन्ने भेर्यशुभावहः।
पुरतश्च इहागच्छ गच्छ पश्चात्विपर्ययः।।५४।।

यात्रा समय में बाजों का शब्द शुभ, परन्तु फूटे बाजों का शब्द अशुभ है। सन्मुख से कोई 'आओ' ऐसा कहे तो शुभ और पिछड़ी से 'जाओ' कहे तो शुभ और आगे से कहने पर अशुभ जानो।।५४।।

शुभशकुनविचारः—

श्वेतपुष्टाः सुमनसः पूर्णकुम्पतस्तथै च।
जलजाः पक्षिणश्चैव मांसं मत्स्यश्च पार्थिव।।५५।।

यात्रा के समय सफेद पुष्ट फूल, जलपूर्ण कुंभ, जल का पक्षी, मछली और मांस को शुभ जानो।।५५।।

गावस्तुरंगमो नागो वृद्धः एकः पशुस्त्वजा।
त्रिदशाः सुहृदो विप्रा ज्वलितश्च हुताशनः।।५६।।

गौ, घोड़ा, हाथी, वृद्ध, एक पशु, बकरी, देवमूर्ति, मित्र, ब्राह्मण, जलती अग्नि,।।५६।।

गणिका च महाभाग दूर्वाश्चार्द्राश्च गोमयम्।
रुक्मं रौप्यं च ताम्रं च सर्वरत्नानि चाप्यथ।।५७।।

गणिका, हरी दूब, गोबर, सोना, चाँदी, ताँबा और सब प्रकार के रत्न यात्रा के समय सामने आने से शुभ जानो।।५७।।

औषधानि च सर्वज्ञो यताः सर्वार्थकास्तथा।
खड्गपात्रपताकाश्च मृत्तिकायुधपीठकम्।।५८।।

औषधि, सर्वज्ञ पुरुष, यव, सफेद सरसों खड्ग, पताका, मृत्तिका, आयुध, आसन, ये यात्रासमय में शुभ जानो।।५८।।

राजलिंगानि सर्वाणि शवं रुदितवर्जितम्।
घृतं दधिं पयश्चैव फलानि विविधानि च।।५९।।

सब भाँति के राजचिह्न, रुदन रहित मृतक, घी, दही, दूध और अनेक प्रकार के फलों को यात्रा के समय में शुभ जानो।।५९।।

स्वस्तिवृद्धिनिनादश्च नन्द्यावर्तश्च कौस्तुभः।

वादित्राणां शुभः शब्दो गम्भीरः सुमनोहरः।।६०।।

अपने लिये आशीर्वाद का शब्द, कौस्तुभ मणिके साथ नंद्यावर्तमणि बाजा तथा उत्तम मनोहर शब्द यात्रा में विंध्ननाशक जानो।।६०।।

गांधारषड्जऋषभा ये गीताः सुस्वराः स्वराः।

वायुः निःशर्वरोऽनुष्णः सर्वविघ्नविनाशकृत्।।६१।।

गांधार षड्ज, ऋषभ, इन स्वरों में सुन्दर ढंग से गाते हुए गीत और मधुर शीतल पवन यात्रा में विध्ननाशक जानो।।६१।।

प्रतिलोमस्तथा नीची विंज्ञेयो भयकृद्द्विजः।

अनुकूलो मृदुः स्निग्धः सुखस्पर्श सुखावहः।।६२।।

वर्णसंकर, नीच और भयानक पक्षी को भयदायक जानो। अपने अनुकूल पदार्थ मृदु, स्निग्ध और सुखस्पर्श पदार्थ को सुखद जानो।।६२।।

शस्तान्येतानि धर्मज्ञ यत्र स्यान्मनसः प्रियम्।

मनसस्तुष्टिरेषात्र परमं जयलक्षमणम्।।६३।।

हे धर्मज! उपर्युक्त शकुनोंको शुभ जानो अपनी प्रिय वस्तुका दर्शन श्रेष्ठ और मनको प्रसन्न करनेवाली वस्तुका दर्शन जयदायक जानो।।६३।।

चित्तोत्सवत्वं मनसः प्रहर्षः शुभस्य लाभो विजयप्रवादः।

मांगल्यलब्धिः श्रवणं च राज्ञा ज्ञेयानि नित्यंविजयावहानि।।६४।।

यात्रा के समय मन में हर्ष, शुभ वस्तु का लाभ, विजयवाद और मंगल प्राप्ति का श्रवण शुभ जानो।।६४।।

क्षेमङ्करी नीलकण्ठाः श्वोलूकखरजम्बुकाः।

प्रस्थाने वामतः श्रेष्ठा वेशे च दक्षिणाः शुभाः।।६५।।

मोर, कुत्ता, उलूक पक्षी, गधा जम्बुक प्रस्थान के समय बायें हों तो यात्रा में शुभ और प्रवेश के समय दक्षिण भाग में शुभ जानो।।६५।।

।।प्रश्नप्रकरणम्।।

तिथ्यादिप्रयुक्तप्रश्नः फलञ्च–

तिथिः प्रहरसंयुक्ता तारका वारमिश्रिता।
अग्निभिस्तु हरेद्भागं शेषं सत्त्वरजस्तमाः।।१।।
सिद्धिः तात्कालिकी सत्त्वे रजसा तु विलम्बिता।
तमसा निष्फलं कार्यं ज्ञातव्यं प्रश्नकोविदैः।।२।।

जिस तिथि वार नक्षत्र ४ और प्रहर में प्रश्न करे उसका उत्तर नीचे उदाहरण देखकर कहें। उदाहरणार्थ तिथि ५, वार ३, नक्षत्र ७, प्रहर २, सब जोड़ने से १७ हुए और ३ भाग देने पर लब्धि १५. शेष २ बचा, अतः दूसरा रज तत्त्व हुआ, इसका फल कार्य में विलम्ब होता है। इस प्रकार से शून्य बचे तब यह निष्फल जानो। १ बचने से सत्य कार्यसिद्धि इसका फल होता है।।१–२।।

स्वच्छायोपरि प्रश्नः–

आत्मच्छाया त्रिगुणिता त्रयोदशसमन्विता।
वसुभिश्च हरेद्भागं शेषं चैव शुभाशुभम्।।३।।
लाभश्चैके त्रिके सिद्धर्बृद्धिः पञ्चमसप्तमे।
द्वयोर्हानिश्चतुःशोकं पष्ठाष्टे मरणं ध्रुवम्।।४।।

अपनी छाया को तिगुनीकर उसमें १३ मिलाकर ८ से भाग दे जो शेष बचे उसका फल चक्र में देखे।।३–४।।

पन्थाप्रश्ना–

तिथिः प्रहरसंयुक्ता तारका वारमिश्रिता।
सप्तमिश्च हरेद्भागं शेषं तु फलमादिशेत्।।५।।
वर्तमानं च नक्षत्रं गणयेत्कृत्तिकादितः।
सप्तमिश्च हरेद्भागं शेषं प्रश्नस्य लक्षणम्।।६।।
प्रश्नाक्षरं रुद्रयुक्तं सप्तभिर्भाजितं तथा।
फलभवं क्रमाज्ज्ञेयं सर्वेषा हि शुभाशुभम्।।७।।

तिथि, वार नक्षत्र और प्रहर को इकट्ठा करके सात से भाग दे शेष बचनें के अनुसार फल जाने दूसरी रीति से कृत्तिका से वर्तमान नक्षत्र तक भाग दे, जो शेष बचे उनके अनुसार फल जाने।।५–७।।

शेष १ लाभः	शेष २ हानिः	शेष ३ सिद्धिः	शेष ४ शोकः	शेष ५ वृद्धिः
	शेष ६ मरणं	शेष ७ वृद्धिः	शेष ८ मरणं	

फलम्—

एकशेषे भवेत्स्थाने द्वितीये पथि वर्तते।
तृतीयेऽप्यर्द्ध मार्गे तु चतुर्थ ग्राममादिशेत्।।८।।
पञ्चमे पुनरावृत्तिः षष्ठे व्याधियतं वदेत्।
शून्यं ज्ञेयं सप्तमे हि चैतत्प्रश्नस्य लक्षणम्।।९।।

१ बचने से स्थान ही में जाने, २ बचने से मार्ग में, ३ बचने से अर्ध मार्ग में, ४ बचने से ग्राम में, ५ बचने से मार्ग से लौट गया, ६ बचने से रोगी और शून्य बचने से मृत्यु जानो।।८—९।।

द्वितीयप्रकारः—

धनसहजगतौ सितामरेज्यौ कथयेच्चागमनं प्रवासिपुंसाम्।
तनुहिबुकगताविमौ तद्वद्झटिति नृणां कुरुते गृहप्रवेशम्।।१०।।

दूसरे स्थान में शुक्र, तीसरे स्थान में गुरु वा प्रश्न के लग्न में शुक्र चौथे स्थान से गुरु हों तो परदेशी शीघ्र आयेगा ऐसा जानो।।१०।।

कार्याकार्यप्रश्नफलम्—

दिशाप्रहरसंयुक्ता तारका वारमिश्रिता।
अष्टभिस्तु हरेद्भागं शेषं प्रश्नस्य लक्षणम्।।११।।
पञ्चैके त्वरिता सिद्धिः षट्चतुर्थे दिनत्रयम्।
त्रिसप्तके विलम्बश्च द्वौ चाष्टौ न सिद्धिदौ।।१२।।

प्रश्न करने वाले का मुख जिस दिशा को हो वह दिशा प्रहर वार और नक्षत्रों को एकत्र कर आठ का भाग दे, जो शेष बचे उनसे शुभाशुभ फल जाने। १ वा ५ शेष बचे तो शीघ्र कार्य सिद्धि जानो, ६ या ४ बचे तो ३ दिन में कार्य सिद्धि, ३ या ७ बचे तो विलम्ब, १ या आठ बचे तो कार्य नहीं होगा।।११—१२।।

अंकप्रश्नः, फलाश्च—

अंकं द्विगुणितं कृत्वा फलानामक्षरैर्युतम्।
त्रयोदशयुतं कृत्वा नवभिर्भागमाहरेत्।।१३।।
एके हि धनवृद्धिश्च द्वितीये च धनक्षयः।
तृतीये क्षेममारोग्यं चतुर्थे व्याधिरेव हि।।१४।।
स्त्रीलाभः पञ्चशेषे स्यात्षष्ठे बन्धुविनाशनम्।
सप्तमे ईप्सिता सिद्धिरष्टमे मरणं ध्रुवम्।।१५।।
नवमे राज्यसम्प्राप्तिर्गर्गस्य वचनं यथा।।१६।।

जितने अंक का नाम हो, उन अंकों को दूना कर फल और नाम के अक्षरों को मिलावे, फिर १३ जोड़कर ९ का भाग दे, जो शेष बचे उसका फल कहे। १ से धनवृद्धि, २ से धनक्षय, ३ से आरोग्य, ४ से व्याधि, ५ से स्त्री लाभ, ६ से बन्धुनाश, ७ से कार्यसिद्धि, ८ से मरण, ९ से राज्य प्राप्ति, यह गर्ग मुनि का वचन है।।१३–१६।।

नवग्रहात्मकं यन्त्रं कृत्वा प्रश्नं निरीक्षयेत्।
फलं पूर्वोक्तमेवात्र द्रष्टव्यं प्रश्नकोविदैः।।१७।।

९ कोठों का चक्र बनाकर उसमें देखे जो अंक आवे उसका फल पूर्वोक्त प्रकार से जाने।।१७।।

४	३	८
९	५	१
२	७	६

अन्यमतेन—

सप्तत्रयाङ्काः कथयन्ति वार्ता नवैकपञ्च त्वरितं वदन्ति।
अष्टौ द्वितीयेन हि कार्यसिद्धिः रसाश्च वेदा घटिका त्रयं च।।१८।।

पूर्वोक्त कथित अंकों पर उँगली रखकर प्रश्न विचारे, परन्तु फल भिन्न–भिन्न रीति से कहे, अर्थात् शेष ७ वा ३ रहे तो वार्ता करता जानो, ९।१।५ बचे तो शीघ्र कार्य होगा, ८, २ बचे तो कार्य नहीं होगा, ६।४ बचे तो तीन घड़ी में कार्य होगा ऐसा कहे।।१८।।

वारनक्षत्रप्रयुक्तपन्थाप्रश्नः—

बुधे चन्द्रे भवेत् मार्गे समीपे गुरुशुक्रयोः।
रवौ भौमे तथा दूरे शनौ च परिपीड्यते।।१९।।
निर्जीवाः सप्त ऋक्षाणि सजीवो द्वादशस्मृताः।
व्याधिता नवऋक्षाणि सूर्यधिष्ण्यात्तु चन्द्रभम्।।२०।।

बुध, चन्द्रवार को प्रश्न करने से यात्री को मार्ग चलता हुआ जानो गु, शुक्र को प्रश्न करने से समीप आया जानो। रवि और भौम को दूर जानो और शनि को पीड़ायुक्त जानो सूर्यनक्षत्र से चन्द्रनक्षत्र पर्यन्त लिखने से क्रम से प्रथम ७ नक्षत्र पर्यन्त चन्द्रमा आवे तो निर्जीव १२ नक्षत्र तक चन्द्रमा आवे तो जीवित जानो। तृतीय ९ नक्षत्र पर्यन्त चन्द्र आवे तो रोगी जानो। इस प्रकार पंथा प्रश्न कहना चाहिये।।१९—२०।।

नष्टवस्तुप्रश्नः—

तिथिवारं च नक्षत्रं लग्नं वह्निविमिश्रितम्।
पञ्चभिस्तु हरेद्भागं शेषं तत्त्वं विनिर्दिशेत्।।२१।।

फलम्—

पृथिव्यां तु स्थिरं ज्ञेयमप्सु व्योम्नि न लभ्यते।
तेजस्सु राजसाज्ज्ञेयं वायौ शोकं विनिर्दिशेत्।।२२।।

प्रश्न की तिथि, वार, नक्षत्र और लग्न जोड़ ३ मिलाकर ५ का भाग दे शेष १ बचे तो पृथ्वी में, २ बचे तो जल में परन्तु मिले नहीं। ३ बचे तो आकाशमें यह भी नहीं मिले, ४ बचे तो तेजमें, यह राज्यमें कोई भी गई जानो, ५बचे तो वायुमें इसमें शोक फल जानो।२१—२२।।

गर्भिणीप्रश्नः—

तत्प्रश्नलग्ने रविजीवभौमे तृतीयभू भृन्नवपञ्चमे च।
गर्भः पुमान्वै ऋषिभिः प्रणीतश्चाऽन्यग्रहेस्त्री विबुधैः प्रणीताः।।२३।।

गर्भिणी जिस लग्न में प्रश्न करे उसी लग्न से प्रश्न कहे। लग्न से तृतीय, सप्तम, नवम पञ्चम स्थान में रवि, भौम, गुरु स्थित हो तो पुत्र हो और इन्हीं स्थानों में अन्य ग्रह पड़े हों तो कन्या हो।।२३।।

मुष्टिप्रश्नम्—

मेषे रक्तं वृषे पीतं मिथुने नीलवर्णकम्।
कर्क च पाण्डुरं ज्ञेयं सिंहे धूम्रं प्रकीर्तितम्।।२४।।
कन्यायां नीलमिश्रे तु तुलयां पीतमिश्रितम्।
वृश्चिके ताम्रमिश्रं च चापे पीतविमिश्रितम्।।२५।।
नक्रे कुन्भे कृष्णवर्ण मीने पीतं वदेत्सुधिः।।२६।।

प्रश्नकर्ता की मुट्ठी की वस्तु बताने की रीति यह है। मेष लग्न में प्रश्न होने से लाल रंग की वस्तु मुट्ठी में है, वृष में होने से पीत, मिथुन में होने से नीली, कर्क में पांडुर रंग, सिंह में धुमिली, कन्या में नील मिश्रित, वृश्चिक में ताम्रवर्ण मिश्रित, धनु में पीत मिश्रित, मकर एवं कुम्भ में लोहमय अर्थात् काली, मीनलग्न में प्रश्न होने से पीली वस्तु जानो।।२४—२६।।

लग्नबलेन मनश्चिन्तितप्रश्नः—

मेषे चद्विपदां चिन्ता वृषे चिन्ता चतुष्पदाम्।
मिथुने गर्भचिन्ता च व्यवसायस्य कर्कटे।।२७।।
सिंहे च जीवचिन्ता स्यात्कन्यायां च स्त्रियास्तथा।
तुलायां धनचिंता च व्याधिचिन्ता च वृश्चिके।।२८।।
चापे च धनचिन्ता स्यान्मकरे शत्रुचिन्तनम्।
कुम्भे स्थानस्य चिन्ता स्यान्मीने चिन्ता च दैविकी।।२९।।

मेष लग्न में प्रश्न करने से मनुष्य की चिन्ता जानो। वृष में गाय भैंस की, मिथुन में गर्भ की, कर्कमें व्यापार की, सिंह में जीवन की, कन्या में स्त्री की, तुला में धन की, वृश्चिक में रोग की, धनु में धन की, मकर में शत्रु की कुम्भ में स्थान की, मीन में देवता, भूत, पिशाचादि बाहरी बाधा की चिन्ता जानो।।२७—२९।।

संज्ञानुसारेण लग्ननामानि—

धातुर्मूलं जीवश्चरस्थिरद्विस्वभावश्च।
मेषादयः क्रमेणैव ज्ञातव्या प्रश्नकोविदैः।।३०।।

मेषादि बारह लग्नों के नाम की दो दो संज्ञायें है। धातु और चर मेष लग्न की संज्ञा। मूल, स्थिर, वृष की, जीव द्विस्वभाव मिथुन की। धातु, चर कर्क की।

मूल, स्थिर, सिंह की, जीव द्विस्वभाव कन्या की। धातु, चर मकर सिंह। मूल, स्थिर कुम्भ की और जीव तथा द्विस्वभाव मीन की संज्ञा जानो।।३०।।

अङ्कप्रश्न—

अष्टोत्तरशताऽङ्केषु प्रष्टा त्वेकं वदेल्लिखेत्।
तस्मिन् द्वादशभिर्भक्ते शेषं चैव शुभाऽशुभम्।।३१।।

फलम्—

एके दुर्गासप्तके वै विलम्ब नागे तुर्ये दिक्षु भूतेषु नाशः।
रुद्रेसिद्धिर्युग्मके वृद्धिरुक्ता शीघ्रं कार्य स्यात्त्रिषड्द्वादशेषु।।३२।।

पृच्छक से एक सौ आङ्ग अंकों में से एक अंक का नाम लिखावे वा कहलावे और उसमें बारह का भाग दे, जो शेष वचे उससे फल कहे १।७।९ बचने से देर में काम होगा, ८।४।१०।५ बचने से नाश, ११ बचने से सिद्धि, २ बचने से वृद्धि, ३।६।१२ बचने से शीघ्र कार्य होगा, ऐसा कहे।।३२।।

रोगिणां प्रश्नः—

तिथिवारं च नक्षत्रं लग्नं प्रहरमेकता।
अष्टभिस्तु हरेदभागं शेषे तु फल मादिशेत्।।३३।।

फलम्—

हयाग्नौ देवताबाधा पित्रोर्वै नेत्रदन्तिषु।
षट्चतुर्षु भूतबाधा न बाधा एकपञ्चके।।३४।।

तिथि, वार, नक्षत्र, प्रहर और लग्न को एकत्र कर ८ का भाग दे शेष जो बचे उससे फल कहे। ७ वा ३ बचने से देवता की बाधा, २।८ से पितरों की, ६।४ से भूत की, १।५ बचने से किसी की भी बाधा मत जानो।।३३—३४।।

केवललग्नोपरि प्रश्नः—

मेषे च देवदोषः स्याद वृषे दोषश्च पैत्रिकः।
मिथुने शाकिनीदोषः कर्कटे भूतदोषकः।।३५।।
सिंहे सहोदराणां कन्यायां कुलमातृजः।।२४।।
तुले दोषश्चण्डिकाया नाडीदोषो हि वृश्चिके।।३६।।

चापे च यक्षिणीपीडा मकरे ग्रामदैवतात्।।२४।।
अपुत्रादृष्टिजः कुम्भे मीने आकाशगामिनः।।३७।।

मेष लग्न में रोगों के प्रश्न करने से देवी का दोष, वृष में पितृदोष, मिथुन में शाकिनी, कर्क में भूत, सिंहमें भाइयों का, कन्या में कूल देवता का, तुला में चण्डिका का, वृश्चिक में नाडी दोष, धनु में यक्षिणी दोष, मकर में ग्राम देवता, कुम्भ में अपुत्री की दृष्टिका और मीन लग्न में रोगी के प्रश्न करने से आकाशगामियों का दोष जानो।।३५–३७।।

मेघफलम्—

आषाढस्यासिते पक्षे दशम्यादिदिनत्रये।
रोहिणी कालमाख्याति सुखदुर्भिक्षलंणम्।।३८।।
रात्रादेव निरभ्रं स्यात्प्रभाते मेघडम्बरम्।
मध्याह्ने जलविन्हुः स्यात्तदा दुर्भिक्षकारकम्।।३९।।

शुक्लादि आषाढ़ कृष्णपक्ष में दशमी, एकादशी और द्वादशी ति[illegible] रोहिणी नक्षत्र होने से सुभिक्ष मध्य और दुर्भिक्ष जानो। रात्रि मेघ रहित हावे, प्रातःकाल मेघ गर्जें और मध्याह्न में बूंदे पड़ें तो उस सम्वत्सर में महर्घता जानो।।३८–३९।।

जन्मलग्नम्—

कुम्भकर्कवृषा मीनमकरा वृश्चिकस्तुला।
जललग्नानि चोक्तानि लग्नेष्वेतेषु सूर्यभम्।
भवत्येव तदा वृष्टिर्ज्ञातव्या गणकोत्तमैः।।४०।।

कुम्भ, कर्क, वृष, मीन, मकर, वृश्चिक और तुला जल लग्न हैं। इनमें सूर्य नक्षत्र के मिलने से वर्षा होती है।।४०।।

जलदनक्षत्राणि—

अश्विनीमृगपुष्येषु पूषाविष्णुमघासु च।
स्वात्यां प्रविशते भानुर्वषते नात्र संशयः।।४१।।

अश्विनी, मृगशिरा, पुष्य, रेवती श्रवण, मघा और स्वाती नक्षत्र में सूर्य के प्रवेश करने पर अधिक वर्षा होती है।।४१।।

स्त्री-नपुंसक, पुरुषनक्षत्राणि—

आर्द्रादिदशकं स्त्रीणां विशाखादित्रिनपुंसकम्।
मूलाच्चतुर्दशं पुंसा नक्षत्राणि क्रमात् बुधैः।।४२।।
वायुर्नपुंसके भे च स्त्रीणां भे चाभ्रदर्शनम्।
स्त्रीणां पुरुषसंयोगे वृष्टिर्भवति निश्चितम्।।४३।।

आर्द्रा से स्वाती पर्यन्त १८ नक्षत्र स्त्री–सज्ञक हैं, विशाखा से ज्येष्ठा तक ३ नपुंसक हैं और मूल से मृगशिरा पर्यन्त १४ पुरुष नक्षत्र हैं। नपुंसक नक्षत्र में स्त्री नक्षत्र मिले तो मेघदर्शन हो स्त्री पुरुष नक्षत्रों के योग से अवश्य वर्षा होती है।।४२–४३।।

सूर्यर्क्षाणि चन्द्रर्क्षाणि च—

अश्विन्यादित्रयं चैव आर्द्रादेः पञ्चकं तथा।
पूर्वाषाढादि चत्वारि चोत्तरारेवतीद्वयम्।।
उक्तानि शशिभान्यन्यत् प्रोच्यते सूर्यभं तथा।।४४।।
रोहिणी च मृगश्चैव पूर्वाफाल्गुकात्द्वयम्।
नक्षत्राणि करात् सप्त वारुणादिद्वितये तथा।।
सूर्ये सूर्ये भवेद्वायुश्चन्द्रे चन्द्रे न वर्षति।
चान्द्रार्कयोर्भवेद्योगस्तदा वर्षति मेघराट्।।४५।।

अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा मघा, पूर्वाषाढ़, उत्तराषाढ़, श्रवण, धनिष्ठा और रेवती को चन्द्रनक्षत्र, शेष नक्षत्रों को सूर्यनक्षत्र जानो। (फल) दिन का नक्षत्र और सूर्यनक्षत्र जो दोनों चन्द्र के हों तो मेघ नहीं वर्षे, जो चन्द्र और सूर्यनक्षत्र का योग का हो तो वह अच्छी वर्षा होवे।।४४–४५।।

धान्यप्रश्न—

कापाये जयसर्वलाभकुगिरो मित्राणि सर्व शुभम्
गोराये प्रियभोजनानि लपरे लाभारिनाशादिकम्।
रथ्यांगे कलहः श्रियश्चपलग स्थानानि मित्रागमो
रोरोपांविजयः परागकलहः खालेयशोकावहः।।४६।।

दो प्रकार के धान्यों की दो राशि करे। उन्हीं दोनों राशियों में से एक २ चुटकी धान्य निकाल कर एक तीसरी राशि बनावे। उनमें से तीन २ दाने जुदे २ करता जाय, जो तीन राशियों में से एक २ बचे तो जय और लाभ हो, यथा का कहिये १ पा कहिये १ ये कहिये १ ऐसा तीन राशियों में से पृथक् २ एक बचे उसका फल जय और लाभ हो।।४६।।

पशुविषये प्रश्नः—

द्युमणिभान्नवभेषु वने पशुस्तदनु षड्सु च कर्णपथे स्थितम्।
अचलभेषु गतं गृहमागतं द्वयागतमेव मृतं त्रिषु चोच्यते।।४७।।

सूर्य के नक्षत्र से वर्तमान दिन में नक्षत्र ९ हो तो पशु को वन में जानो, छठे होने से मार्ग में, सातवें होने से घर आया जानो, दूसरे होने से पशु नहीं आवेगा और सूर्य के नक्षत्र से वर्तमान नक्षत्र तीसरे होने से पशु की मृत्यु हो गई ऐसा जानो।।४७।।

राज्यभंगादियोगः—

यदि भवति कदाचिच्चाऽश्विनी यद्यमायां
शनिरविकुजवारे स्वातिरायुष्ययोगे
गगनचरपशूनां जंगमस्थावराणां
नृपतिजनविनाशो राज्यभंगस्तथोक्तः।।४८।।

शनि रवि वा भौमवारी अमावस्या को अश्विना या स्वाती नक्षत्र एवं आयुष्मान् योगके होने से पक्षी, पशु; जंगम, स्थावर राजा और प्रजाका नाश जानो। इस अशुभ योग के पड़ने से राजभङ्ग योग होता है।।४८।।

सूर्य, चन्द्र, मंडलम्—

रविशशिपरिवेषे पूर्वयामे पीडा रविशशिपरिवेषे मध्याहे चवृष्टिः
रविशशिपरिवेषे धान्यनाशस्तृतीये रविशशिपरिवेषे राज्यभङ्गश्चतुर्थे

रवि का अथवा चन्द्र का मण्डल प्रथम प्रहर में होने से मनुष्य को पीड़ा, दूसरे प्रहर में होने से वर्षा तीसरे प्रहर में होने से धान्य का नाश, चौथे प्रहर में होने से राज्यभङ्ग होता है।।४९।।

अथ सामुद्रिकाध्याय:

जनने प्रबलो यस्य राजयोगो भवेद्यदि।
करे वा चरणेऽवश्यं राजचिह्नं प्रजायते।।५०।।
अनामामूलगा रेखा सैव पुण्याभिधा मता।
मध्यमाङ्गुलिमारभ्य मणिबन्धान्तमागाता।।५१।।

अथोर्ध्वशे रेखाफलम्—

सोर्ध्वरेखा विशेषेण राज्यलाभकारी भवेत्।
खण्डिता दुष्टफलदा क्षीणा क्षीणफलप्रदा।।५२।।

जिसकी जन्मकुण्डली में कोई प्रबल राजयोग होगा तब उस मनुष्य के हाथ पाँव आदि अंग में अवश्य कोई एक न एक चिन्ह होगा अनामिका उँगली की जड़में जो रेखा होती है, उसे ऊर्ध्व रेखा कहते हैं। यह ऊर्ध्व रेखा विशेष कर राज्यलाभ कराती है और यह रेखा यदि खण्डित हो तो तब दुःख देती है और यह रेखा क्षीण, पतली वा अपूर्व हो तब यह रेखा क्षीण फल को देती है।।५०-५२।।

।।अथ यवाकारचिह्नफलम्।।

अङ्गुष्ठमध्ये पुरुषस्य यस्य विराजते चारु यवो यशस्वी।
स्ववंशभूषा सहितो विभूषा योषाजनैरर्थगणैश्च मर्त्यः।।५३।।

जिस मनुष्य के अंगूठे के मध्य में यव का चिह्न होता है वह मनुष्य बड़ा यशस्वी, स्ववंश का भूषण और अनेक भूषण, स्त्री, भृत्यगण और अनेक प्रकार के द्रव्यों से संयुक्त होता है।।५३।।

अथ राजचिह्नम्—

वैसारणो वा तपवारणो वा चेद्वारणो दक्षिणपाणिमध्ये।
सरोवरंवाङ्कुश एव यस्य वीणा च राजा भुवि जायते सः।।५४।।

जिसके दक्षिण हस्त में मछली छत्र अथवा हाथी, तालाब, अंकुश वीणा इनमें से कोई चिह्न हो तो वह मनुष्य भूमिपति राजा होता है।

मुशलशैलकृपाजहलाङ्कितं करतलं किल यस्य स वित्तपः।
कुसुममालिकया फलमीदृशं नृपतिरेव नृपात्मभुवो यदा।।५५।।

जिसके हाथ में मुशल, पर्वत, खड्ग, हल और पुष्प माला इनमें से कोई चिह्न हो तो वह मनुष्य धनवान् होता है और ये योग यदि किसी राजकुमार के हों तो वह अवश्य राजा होता है।।५५।।

अथ लक्ष्मीप्राप्तिचिह्नम्—

करतलेऽपि च पादतले नृणां तुरगपङ्कजचापरथाङ्गवत्।
ध्वजरथासनदोलिकया समं भवति लक्ष्मी रमापरमालये।।५६।।

जिस मनुष्य के हाथ में या पाँव में घोड़ा, कमल, धनुष, चक्र, ध्वज, रथ, आसन और डोली, इनमें से कोई चिह्न हो तो उस पुरुष के घर में पूर्ण लक्ष्मी होती है।।५६।।

अथाखण्डलक्ष्मीचिह्नम्—

कुम्भाः स्तम्भो वा तुरङ्गो मृदंगः वाणावङ्घ्रौ वाद्रुभो यस्य पुंसः।
चञ्चद्दण्डोऽखण्डलक्ष्म्या परीतःकिंवा सोऽयं पण्डितः शौण्डिकोवा।।

घट, मृदंग, वृक्ष और दंड इनमें से कोई चिह्न जिस मनुष्यकी हथेली या पैर के तलवे में होता है वह पण्डित हो अथवा मद्य बेचने वाला हो। हाथके तलवे में हो तो भी अखण्ड लक्ष्मी से युक्त पुरुष होता है।

अथोत्तमराजचिह्नम्—

विशालभालाम्बुजपत्रनेत्रः सुवृत्तमोलिः क्षितिमण्डलेशः।
आजानुबाहुः पुरुषं तमाहुः क्षोणीभृतां मुख्यतरं महान्तः।।५८।।
नाभिर्गभीरा सरला च नासा वक्षस्थलं रत्नशिलातलाभम्।
आरक्तवर्णौ खलु यस्य पादौ मृदु भवेतां स नृपोत्तमःस्यात्।।५९।।

जिसका ललाट विशाल हो, कमलदल से नेत्र हों, सुन्दर गोल शिर हो, जानुपर्यन्त लम्बित भुजा हो, वह पुरुष भूमण्डल का पालन करनेवाला राजाओं में मुख्य राजा होता है। जिसकी नाभि गंभीर हो, सीधी नासा हो, रत्नशीलाके समान जिसका वक्षस्थल, पाँवोंके तलवे लाल, कोमल दोनों पाँव हों वह पुरुष नृपोत्तम होता है।।५८-५९।।

अथ करे वा पादतले वा तललक्षम्—

राजते करगो यस्य तिलोऽतुलधनप्रदः।
तथा पादतले पुंसा वाहनार्थसुखप्रदः।।६०।।

राजवंशप्रजातानां समस्तफलमीदृशम्।
अन्येषामल्पतां याति तथा व्यक्तं सुलक्षणम्।।६१।।

जिसकी हथेली में तिल होता है वह असंख्य धन का धनी होता है और जिसकी दाहिनी पगतली में तिल होता है वह पुरुष अनेक उत्तमोत्तम सवारियों का सुख भोगता है। उक्त समस्त लक्षणों से युक्त यदि राजकुलोत्पन्न हो तब ये समस्त फल ऐसे ही होते हैं जैसे कि कहा ज़ाता है और अन्य किसी पुरुष के उक्त लक्षणों में से कोई लक्षण हो तब कहे फल से कुछ न्यून फल होता है।

।।स्त्रीजातकाध्यायः।।

अथाग्रे स्त्रीणां लक्षणानां कालनिर्णयः—

शुभाशुभं पूर्वजनेर्विषाव त्सीमन्तिनी नामपि तत्फलं हि।
विवाहकालात्परतः प्रवीणैरसम्भवात्तत्पतिषु प्रकल्प्यम्।।१।।
अतीव सारं फलमङ्गनानामुदीरितं शौनक-नारदाद्यैः।
व्यक्तं यथालग्ननिशाकाराभ्यां मया तथैव प्रतिपाद्यमेतत्।।२।।

जितने उक्तानुक्त लक्षण हैं वे सभी पूर्व जन्म के किये कर्मों के फल के रूप होते हैं। स्त्री जनों को भी वैसा ही समझना। परन्तु विवाहकाल के पश्चात् उक्त फल यदि स्त्री में न दीखे तो उसके पति को वे सुखादि भोगफल प्राप्त होते हैं। इससे लग्न से और चन्द्रमा से जो जो फल स्त्रियों को होते हैं उन्हें मैं भी उसी तरह से प्रतिपादन करता हूँ।।१-२।।

अथ स्त्रीणां सौभाग्यादि भावसंज्ञा—

सौभाग्यं सप्तमस्थाने शरीरं लग्नचन्द्रयोः।
वैधव्यं निधनस्थाने पुत्रे पुत्रं विचिन्तयेत्।।३।।

स्त्री के सौभाग्य का सप्तम घर से लग्न तथा चन्द्रमा से स्त्री के शरीर का, लग्न से अष्टम घर से वैधव्य का और लग्न से पञ्चम से स्त्री के पुत्र होने का विचार करना चाहिए।।३।।

अथ सौभाग्यवती तथा दुष्टयोग—

सौम्याभ्यां प्रवरा शुभत्रययुते जाया भवेद्भूपतेः
सौम्यैकेन पतिप्रिया मदनभे दृष्टे युते जन्मनि।

पापैकेन पुनर्विलोलनयना पापद्वयेनाधमा
पापानां त्रितयेन सा परकुलं हत्वा पतिं गच्छति।।४।।

जिस स्त्री की कुण्डली में लग्न में सप्तम घर को दो शुभग्रह देखें या लग्न से सप्तम घर में बैठे हों तो वह स्त्रियों में उत्तम होती है। यदि तीन शुभग्रह सप्तम घर को देखते हों या बैठे हों तो वह स्त्री राजा की रानी होती है, और एक शुभग्रह सप्तम घरको देखता हो या बैठा हो तो वह स्त्री अपने पति की प्रिया होती है। इस तरह जिस स्त्री के सप्तम घर को एक पापग्रह देखता हो या बैठा हो तो चंचल नेत्रोंवाली, दो पापग्रह देखते हों तब अत्यन्त अधमा (पुंश्चली) और तीन पापग्रह जिसके सप्तम घर में देखते हों या बैठे हों तो वह स्त्री महादुष्ट अपने पति को मारकर पर-पुरुष के साथ रमण करनेवाली होती है।।४।।

अथान्यपुंश्चल्यादियोग: —

जनुःकाले यस्या मदन भवने दानवगुरुः
पति त्यक्त्वा नूनं कुपितहृदया भ्रमितनये।
अवश्यं वैधव्यं सपदि कमलाक्षी रविसुते
जरां पापैर्दृष्टे निजपति विरोधं व्रजति वा।।५।।

जिस स्त्री की कुण्डली में लग्न से सप्तम घर में शुक्र हो तो वह अपने पति को परित्याग करनेवाली और सदा क्रोध से युक्त होती है और जिसके सप्तम घर में मंगल बैठा हो तो वह स्त्री अवश्य ही विधवा होती है और जिसके सप्तम भवन में शनि बैठा हो तो वह स्त्री शीघ्र ही वृद्ध हो जाती है और जिसके सप्तम घर को पापग्रह देखते हों तो वह स्त्री अपने पति से विरोध करने वाली होती है।।५।।

अथ रूपगुणयुक्तपतिव्रतायोग —

यस्याः शशांको जनिलग्नमे वारामर्क्षगे सा प्रकृतिस्थिता स्यात्।
शुभेक्षितं रूपवती गुणज्ञा पतिप्रिया चारुविभूषणाढ्या।।६।।

जिस स्त्री के लग्न में अथवा लग्न से तीसरे घर में चन्द्रमा हो वह स्त्री स्थिर स्वभाववाली होती है यदि चन्द्रमा को शभग्रह देखते हों तब वह स्त्री रूपवती, बड़ी गुणज्ञा, पति की सेवा करने वाली और दिव्य शुभगुणों से सम्पन्न होती है।।६।।

अथ नराकारकुरूपायोग—

यदाङ्गचन्द्रावसमे भवेतां सा स्त्री नराकारसमा कुरुपा।
पापेक्षितौ पापयुतौ विशेषाद्‌गदातुरा रूपगुणैर्विहीना।।७।।

जिस स्त्री का लग्न और चन्द्रमा विषम राशि के हों तो वह स्त्री कुरूपा और पुरुष के समान आकारवाली होती है। यदि लग्न को तथा चन्द्रमा को पापग्रह देखते हों तो वह स्त्री विशेषकर रोगों से युक्त और रूप तथा शुभगुणों से रहित होती है।।७।।

अथ स्त्रीणां राजयोगः—

जनुःकाले यस्या मदनसदने दानवगुरौ
शुभाभ्यामा कान्ते गतवति तदा सा विधुमुखी।
गजेन्द्राणां मुक्ताफल विमलमालावृतकुचा
प्रिया पत्युर्नित्यं प्रभवति शचीवत् क्षितितले।।८।।
समाक्रान्ते लग्ने त्रिदशगुरुणा वाऽथ भृगुणा
बुधे कन्याराशौ मदनभवने भूमितनये।
मृगे कर्के चन्द्रे सति भवति लावण्यतिलका
तपोरेखा योषा प्रभवति विशेषात् क्षितिपतेः।।९।।
शशांके कर्कस्थे भवति हि युक्त्यां विधुसुते
तनौ जीवे मीने गवि भृगुसुते जन्मसमयम्।
समस्त्राली मान्या जगति नृपकन्या गुणवती
विशेषादेषा स्यान्नृपतिपतिका पुण्यलतिका।।१०।।

जिस स्त्री के जन्म समय में लग्न से सप्तम घर में दो शुभग्रहों के साथ शुक्र बैठा हो तब वह स्त्री चन्द्रमा के तुल्य मुखवाली और गजमुक्ता की मालाओं से आच्छादित स्तनवाली होती है और जिसके नेत्र में तिल का चिह्न होता है वह स्त्री अपने पति को शची (इन्द्राणी) के समान प्यारी होती है।।८।। और जिस स्त्री की कुण्डली में लग्न में वृहस्पति बैठा हो और कन्या राशिका बुध लग्नसे सप्तम घर में बैठा हो, मकरका मंगल बैठा हो और कर्कका होकर चन्द्रमा हो तो वह स्त्री लावण्य में शिरोमणि, अति तपस्विनी और राजरानी होती है।।९।। जिस स्त्री के जन्म समय में कर्कराशि का होकर चन्द्रमा, कन्या राशिका होकर

बुध, लग्नमें मीन राशि का होकर बृहस्पति और वृष राशिका होकर शुक्र बैठा हो तो इस योग के होने से वह स्त्री एक हजार सखियों में मान (सत्कार) पाने वाली, राजकुल में जन्म लेनेवाली, सद्‌गुणों से सम्पन्न, लता की तरह पुण्य कर्म सम्पादन करनेवाली और विशेषकर राजाकी रानी होती है।।८-१०।।

।।अथ स्त्रीणां सप्तमभावे प्रत्येकग्रहफलम्।।

तत्रादौ सप्तमस्थरविफलम्—

दिनपताविह कामनिकेतनं गतवति प्रवराऽप्यवरा भवेत्।
जनुषि वल्लभ भावविवर्जिता सुजनतारहिता वनिता भृशम्।।११।।

जिस स्त्री के लग्न से सप्तम घर में सूर्य वर्तमान हो वह स्त्री उत्तम कुल में जन्मादि होनेसे उत्तमा भी हो तो अधम बरताव वाली होती है और पति से परस्पर स्नेहरहित होकर सुजनता (सज्जनता) से रहित अर्थात् लज्जादि गुणों से रहित होती है।।११।।

अथ सप्तमगतचन्द्रफलम्—

वृषे राकानाथे भवति मदने जन्मसमये
भवेदेषा योषा विमलवसना चारुवदना।
विनम्रा मुक्तालीचलित कुचभारेणा नितरां
परालीलालक्ष्मीं रतिरिव रमेव क्षितितले।।१२।।

जिस स्त्री के सप्तम घर में वृषराशि का होकर चन्द्रमा बैठा हो वह स्त्री उज्जवल वस्त्रों को पहननेवाली, मनोहर मुखवाली, बड़ी नम्रता से रहनेवाली, मोतियों की मालासे आच्छादित स्तनों के भार से नम्र कटिवाली, अनेक उत्तम लीला करनेवाली अथवा साक्षात् रति के समान सुन्दरी होती है।।१२।।

अथ सप्तमभावगतभौमफलम्—

अङ्गारके मदनमन्दिरमिन्दु भावं
मन्दान्विते हरिभगे जननेऽङ्गनायाः।
वैधव्यमेव नियतं कपटप्रबन्धा-
द्वाराङ्गना भवति सैव वराङ्गनापि।।१३।।

जिसके जन्म समय में कर्कराशि का होकर मंगल सप्तम भवन में बैठा हो अथवा शनि के साथ मंगल सिंहराशि का होकर सप्तम घर में बैठा हो इन दोनों

योगों के होने से वह स्त्री अवश्य वैधव्य गुण युक्त होती है और यदि उत्तम कुलोत्पन्न हो तब भी अनेक कपट युक्त बरताव से अवश्य वेश्या हो जाती है।।१३।।

अथ सप्तमस्थबुधफलम्—

अनेकश्रीभर्ता भवति मखकर्ता च मदने
बुधे तुङ्गे यस्या जनुषि खलु तस्याः पतिरिह।
स्वयं वामा कामाकुलितहृदयामोदकलया
परीता मुक्तालीरजतकनकाली मणिगणः।।१४।।

जिसके सप्तम घर में बुध बैठा हो उस स्त्रीका पति अनेक प्रकारकी संपत्तियों का भर्ता (धारण करनेवाला), अनेक यज्ञों का करनेवाला होता है और वह स्त्री आप भी सर्वदा आनंदित रहनेवाली और मोतियों तथा सुवर्ण की माला और मणिनिर्मित आभूषणों से सम्पन्न होती है।।१४।।

अथ सप्तमस्थगुरुफलम्—

परिक्रान्ते यस्या मदनभवने देवगुरुणा
गुणज्ञा धर्मज्ञा निजपतिषदाब्जं भजति सा।
मनोज्ञा मालाभिः कनकघटितामिश्च शिरसः
समाक्रान्ताकान्ता रतिपतिपताकेव शशिभा।।१५।।

जिस स्त्री की जन्मकुण्डली में लग्न से सप्तम भवन में वृहस्पति स्थित हो तो वह स्त्रीगुणों को जाननेवाली, धर्म को जाननेवाली अपने पति के चरण कमल का सेवन करनेवाली, सुवर्णघटित मालाओं और मणिजड़ित मालाओं को कण्ठ में पहननेवाली और अपने पति की प्यारी, कामदेव की मूर्तिमती पताका की तरह दीखनेवाली, पुरुषों के मन में कामोद्दीपन करनेवाली होती है।।१५।।

अथ सप्तमस्थशुक्रफलम्—

कवौ यस्या जन्मन्यपि मदनगे मीनभवने
तदा कान्तो दान्तो रतिपतिकलाकौतुकपटुः।
धनुर्धर्ता भर्ता स्वयमपि च सङ्गीतरसिका
विलोली पद्माक्षी वसनलसिता भूषणवृता।।१६।।

जिस स्त्री की कुण्डली में लग्न, तथा सप्तम घर में शुक्र बैठा हो उस स्त्री का पति कामकला में अति प्रवीण, इन्द्रियों का दमन करनेवाला और धनुर्धारी

होता है और वह स्त्री आप भी संगीत विद्या की रसिका, अति चंचला, कमलनयना, दिव्य वस्त्र और दिव्य भूषणों को धारण करनेवाली होती है।।१६।।

अथ सप्तमस्थशनिफलम्—

मदनभावगते पतंगात्मजे पतिरतीव गदाकुलितो भवेत्।
मलिनवेषधरो विबलो महान् जनुषि तुङ्गगते प्रचरो धनी।।१७।।

जिस स्त्री की जन्मकुण्डली में लग्न से सप्तम घर में शनि हो उस स्त्री का पति अनेक प्रकार के रोगों से अति व्याकुल, मलिन वेष धारण करनेवाला और अतिबलहीन होता है और जो कहीं शनि अपने उच्चका होकर सप्तम घर में बैठा हो तब उसका पति धनवान् और ऋत्यन्त प्रतिष्ठित होता है।।१७।।

अथ सप्तमगतराहुफलम्—

सप्तमे सिंहिकापुत्रे कुलदोषविवर्द्धिनी।
नारी सुखपरित्यक्ता तुङ्गेस्वामिसुखान्विता।।१८।।

जिस स्त्री की जन्मकुण्डली में लग्न से सप्तम घर में राहु बैठा हो तो वह स्त्री अपने कुल को दोष लगानेवाली और सुखभोग से रहित होती और जो कहीं राहु उच्च का होकर सप्तम घर में बैठा हो तब वह स्त्री सदा अपने पति के सुख से सम्पन्न होती है।।१८।।

अथान्यदुष्कर्मयोगः—

मिथस्थौ शुकार्कौ यदि लवगतौ वीक्षणमितौ
भवेतां वा लग्ने गुरुशनिलवे शुक्रभवने।
अनङ्गैरालीलाकलितनररूपाभिरनिशं
स्त्रियाभिः जातिभिः खलुमदनशान्तिं व्रजति सा।।१९।।

जिस स्त्री की जन्मकुण्डली में शुक्र के नवांश में शनि और शनिके नवांश में शुक्र बैठा हो अथवा शुक्रको शनि और शनिको शुक्र देखता हो और वृष या तुला लग्न हो उसमें गुरु का या शनि का जन्म समय में नवांश वर्तमान हो तब वह स्त्री कामदेव की लीलावाली पुरुषाकार रूपधारण करनेवाली प्यारी स्त्रियोंसे निरंतर युक्त होकर वह आप कामशांति को प्राप्ति होती है। यानी उस स्त्री को कभी कामबाधा नहीं होती है।।१९।।

अथ मोहिनीरूपकारकयोगः—

क्षपानाथे यस्या-गतवति कुलीरांगमथवा
मदामारं सारं सुरगुरुबुधाभ्यामपि युतम्।
महान्तोऽपि भ्रान्ताः कति-कति मनोजाधिकतया
पुरस्तां पश्यन्यो दधति वरमानन्दलहरीम्।।२०।।

जिसके जन्म समय में कर्कराशि का होकर चन्द्रमा लग्न में स्थित हो अथवा जिसका सप्तम घर वृहस्पति और बुध सहित मंगल से युक्त हो अर्थात् मंगल बुध और वृहस्पति या तीनों ग्रंह सप्तम घर में बैठे हों उस स्त्री के रूपको देखकर, भ्रांत हुए पुरुष काम के आधिक्य होनेसे अपने मन में परम आनन्द की लहरों को प्राप्त होते है।।२०।।

अथ सुभगायोगः—

मृगागारे सारे गतवति विसारं सुरगुरौ
कवौ वा पातालं तपनतनयेनापि मिलिते।
जनुःकाले यस्याः करिमुकुटमुक्ताफलमणि-
गजानां मालाभिर्वलितमुत वक्षोजयुगलम्।।२१।।

जिस स्त्री के जन्मसमय में मकर राशि में मंगल बैठे हों, वृहस्पति मीन का हो और शनि संयक्त शुक्र लग्न से चौथे घर में बैठा हो तब उस स्त्री के वक्षोज (स्तन) युगल अनेक गजमुक्ता की माला से और अनेक प्रकारकी मणिमालाओं संवलित (आच्छादित) होते हैं।।२१।।

अथ स्त्रीणां वैधव्ययोग—

निशाकरात् सप्तमभावसंस्था महीजमन्दागुदिवाकराश्चेत्।
लग्नेऽरिमे जन्मनि नैधने वादिशन्ति वैधव्यफलं मदे वा।।२२।।

जिस स्त्री की जन्मकुण्डली में चन्द्रमा से सप्तम घर में मंगलशनि राहु और सूर्य इनमें से कोई ग्रह बैठा हो अथवा सप्तम घर में लग्नमें या छठें घर में या अष्टम घर में उक्त चारों ग्रहों में से कोई सा ग्रह बैठा हो तब वह ग्रह उसको अवश्य वैधव्ययोग को देता है यानी वह स्त्री अवश्य विधवा हो जाती है।।२२।।

अथ स्वैरिणीयोगः—

लग्नाधिपो वाऽथ मदालयेशो वर्गे गतः पापनमश्चराणाम्।
मदे तनौ वा खललेटवर्गस्तदा कुलं मुञ्चति चञ्चलाक्षी।।२३।।

जिस स्त्री का लग्नेश अथवा सप्तमेश पापग्रहोंके षडवर्गका होकर बैठा हो अथवा सप्तम घर में तथा लग्नमें पाप ग्रहों का जन्म समय में षड्वर्ग हो तब चंचल नेत्रवाली वह स्त्री अपने कुल को परित्याग करती है अर्थात् वेश्या हो जाती है।।२३।।

अथ व्यभिचारिणीयोगः—

पापान्तराले यदि लग्नचन्द्रौ स्यातां शुभालाकनवर्जितौ तौ।
अनङ्गलीला खलसंगमेन कुलद्वयं हन्ति तदा मृगाक्षी।।२४।।

जिस स्त्रीका जन्मलग्न और चन्द्रमा ये दोनों ही पापग्रहोंके बीच में हों उन दोनों को शुभग्रह न देखते हों तब वह स्त्री खल मनुष्यों के साथ पड़कर कामकला (विषय में अति चंचल होकर) अपने पितृ और श्वसुर दोनों के कुल को भ्रष्ट करती है यानी परपरुषगामिनी हो जाती है।।२४।।

अथ पुंश्चलीयोगः—

व्ययेऽष्टमे भूमिसुतस्य राशावगौ सपापे भवतीह रण्डा।
मदे कुलीरे सरवौ कुजेऽपि धनेन हीना रमतेऽन्यलोकैः।।२५।।

जिस स्त्री के जन्म लग्न से सप्तम घर में तथा बारहवें घर में दोनों घरों में मंगल की राशि विद्यमान हो अर्थात् सप्तम भवन में वृश्चिक और बारहवें घर में मेषराशि हो उसमें पापग्रह सहित राहु बैठा हो तब वह स्त्री राँड़ होती है और जो सप्तम घर में कर्कराशिके होकर सूर्य और मंगल बैठे हों तब वह स्त्री धन से हीन होने से अन्य लोगों से रमण करने वाली होती है।।२५।।

तनौ चतुर्थे निधने व्यये वा मदालये पापयुतः कुजश्चेत्।
अनंगलीला प्रकरोति जारैः पतिं तिरस्कृत्य विलोलनेत्रा।।२६।।

जिस स्त्री की कुण्डली में लग्न चतुर्थ अष्टम द्वादश या सप्तम घर में किसी घर में पापग्रह सहित मंगल बैठा हो तो वह स्त्री अपने पतिका तिरस्कार करके परपुरुषों के साथ रमण करने वाली होती है।।२६।।

परस्परांशोपगतौ भवेतां महीजशुक्रौ जननेऽङ्गनायाः।
स्वयं मृगाक्षीत्यभिसारिकेव प्रयाति कामाकुलितन्यगेह।।२७।।

जिस स्त्री की कुण्डली में शुक्र के नवांश में मंगल और मंगल के नवांश में शुक्र बैठा हो तो वह स्त्री आप ही कामाकुलिता होकर अभिसारिका की तरह अन्य पुरुष के घर में जानेवाली होती है। (अपने प्रिय के संकेत स्थान को शृङ्गार कर प्रतिज्ञात समय पर जानेवाली स्त्री को अभिसारिका कहते हैं।)।।२७।।

अथ पत्याज्ञया व्यभिचारिणीयोगः—

पापग्रहे सप्तमगे बलोने शुभेन दृष्टे पतिसौख्यहीना।।२३।।
स्यातां मदे मौमकवी स चन्द्रौ पत्याज्ञया सा व्यभिचारिणीस्यात्।।२८।।

जिस स्त्री की जन्मकुण्डली में बलहीन पापग्रह सप्तम घरमें स्थित हों और उसे कोई शुभग्रह देखतें न हों तब वह पति के सुख से रहित होती है और जिसके सप्तम घर में चन्द्रमा सहित मंगल और शुक्र बैठे हों तो वह स्त्री अपने पतिकी आज्ञासे व्याभिचारिणी (परपुरुषगामिनी) होती है।।२८।।

अथ सप्तमाष्टमेऽब्दे रण्डायोगः—

पापग्रहे सप्तमलग्नगेहे भर्ता दिवं गच्छति सप्तमाब्दे।
निशाकरे चाष्टवैरिभावे तदाष्टमाऽब्दे निधनं प्रयाति।।२९।।

जिस स्त्री की जन्मकुण्डली में सप्तम घर में तथा लग्न में पापग्रह हों उस स्त्री का भर्ता सप्तम वर्ष में स्वर्गगामी होता है और यदि चन्द्रमा भी अष्टम तथा छठें घर में बैठा हो, तब उसका पति अष्टम वर्ष में मृत्यु पाता है।।२९।।

अन्यच्च रण्डायोगः—

सप्तमेशोऽष्टमे यस्याः सप्तमे निधनाधिपः।
पापेक्षणयुतो बाला वैधव्यं लभते ध्रुवम्।।३०।।

जिस स्त्री के सप्तम घर का स्वामी ग्रह तो अष्टम में और अष्टमेश सप्तम घर में बैठा हो और उन्हें पापग्रह देखता हो तब वह बाल्य अवस्था ही में विधवा हो जाती है।।३०।।

सप्तमाष्टपती षष्ठ व्यये वा पापपीडितौ।
तदा वैधव्यमाप्नोति नारी नैवात्र संशयः।।३१।।

जिस स्त्री के सातवें आठवें घर के स्वामी दोनों ग्रह पापग्रह से पीड़ित (दुष्ट) होकर छठें घर में या बारहवें घर में बैठे हों तब वह स्त्री अवश्य विधवा हो जाती है।।३१।।

अथ मात्रा सह व्यभिचारिणीयोगः—

मन्दारराशौ ससिते शशाङ्के खलेक्षिते लग्नगते मृगाक्षी।
मात्रा सहैव व्यभिचारिणी स्यान्मदे खलांशे व्रणविद्धयोनिः।।३२।।

जिस स्त्री की कुण्डली में शनि मंगल की राशि में शुक्र सहित चन्द्रमा यदि लग्न में बैठा हो और उसे पापग्रह देखता हो तब वह स्त्री अपनी माता सहित व्यभिचारिणी (परपुरुषगामिनी) होती है और जिसके सप्तम घर में पापग्रह का नवांश होता है तब उस स्त्री की योनि पर घाव का चिन्ह होता है।।३२।।

।।अथ ग्रहराशिवशेन प्रत्येक त्रिंशांशफलानि।।

तत्रादौ कुजस्य राशेः त्रिशांशफलम्—

यदाङ्गचन्द्रौ कुजमे कुजस्ये त्रिंशांशके दुष्टतमैव कन्या।
मन्दस्य दासी हि गुरोस्तु साध्वी मायाविनी ज्ञस्यकवेकुवृता।।३३।।

जिस स्त्री की कुण्डली में लग्न में मंगल की राशि हो और चन्द्रमा भी मंगल की ही राशि का हो अथवा लग्न में मंगल का त्रिंशांस हो तब वह कन्या अति दुष्ट होती है और शनिका त्रिशांश हो तो दासी, वृहस्पति त्रिंशांश के होने से पतिव्रता, बुधके त्रिंशांश के होने से अनेक प्रकार से छल संयुक्ता और शुक्र के त्रिंशांश होने से खोटे बरताववाली होती है।।३३।।

अथ शुक्रराशौ—

शुक्रमे भौमविशांशे दुष्टा सौरेः पुनर्भवा।
गुरोर्गुणमयी विज्ञा बुधे कामातुरा कवेः।।३४।।

जिस स्त्री की जन्मकुण्डली में लग्न और चन्द्रमा दोनों शुक्र की राशिमें मंगलके त्रिंशांशके ही हों तो वह स्त्री अति दुष्ट होती है और लग्न चन्द्रमा दोनों शुक्र की राशि में शनिके त्रिशांशके हों तब वह स्त्री पुनर्भू अर्थात् कन्यावस्थामें प्रथम गर्भणी होकर पश्चात् विवाह होने वाली होती है और लग्न चन्द्रमा दोनों

शुक्र की राशि में वृहस्पतिके त्रिंशांश के हों तब सकल शुभ गुणयुक्ता होती है और यदि लग्न और चन्द्रमा दोनों शुक्रकी राशिमें बुधके त्रिंशांशके हों तब वह स्त्री बड़ी विज्ञा होती है और लग्न और चन्द्रमा दोनों शुक्रकी राशिमें शुक्र के ही त्रिशांशके हों तब वह स्त्री सदा कामातुरा होती है।।३४।।

अथ बुधराशौ—

बुधमे भूमिपुत्रस्य कपटी क्लीववच्छनेः।
गुरोः सतीविदा विज्ञा कवेः कामातुरा भवेत्।।३५।।

जो चन्द्रमा लग्न बुध की राशि में मंगल के त्रिशांश को हों तब वहं स्त्रई कपट से युक्त होती है और शनि के त्रिशांश को हों तब क्लीब (नपुंसक) के तुल्य होती है और वृहस्पति के त्रिशांश को हों तो वह स्त्री विशेष जाननेवाली होती है और कवि (शुक्र के त्रिंशांश के होने से स्त्री अति चतुर होती है।।३५।।

अथ चन्द्रराशौ—

कुलीरमे भूमिसुतस्य वेश्या शनैः पतुप्राणविधाथकर्त्री।
गुरोर्गुणव्रातवती बुधस्य शिल्पकियाज्ञा कुलटा भृगोः स्यात्।।३६।।

यदि लग्न और चन्द्रमा दोनों कर्कराशिमें मंगलके त्रिशांशमें बैठे हों तब वह स्त्री वेश्या हो जाती है और शनिके त्रिशांशमें हों तब वह स्त्री अपने पति के प्राणों का नाश करनेवाली होती है। यदि वृहस्पति के त्रिशांशमें हो तब वह स्त्री सौभाग्यादि अनेक गुणों से युक्त होती है। यदि बुध के त्रिशांशमें हो तब वह स्त्री अनेक कारीगरी जाननेवाली होती है और शुक्रके त्रिशांश में हो तब वह स्त्री घर-घर डोलनेवाली पुश्चली होती है।।३६।।

अथ सूर्यराशौ—

सिंहे नराकारधरा कुजस्य वारांगना भानुसुतस्य नारी।
गुरोरिलाधीशवधूर्बुधस्य दुष्टा तथा स्वां गजगामिनी स्यात्।।३७।।

जिसकी कुण्डली में लग्न और चन्द्रमा दोनों सिंहराशिमें मंगलके त्रिंशांशमें बैठे हों तो वह स्त्री पुरुषाकार रूपवाली होती है और शनि के त्रिशांशमें हों तब वह स्त्री राजरानी और बुधके त्रिंशांशमें हों तब दुष्टा और शुक्र के त्रिंशांश में लग्न चन्द्रमा के होने से स्त्री अपने पुत्र के साथ गमन करनेवाली होती है अर्थात् सर्वगामिनी होती है।।३७।।

अथ गुरुवाशौ—

गुरोर्विचित्रा गुरुमे कुजस्य मन्दस्य मन्दा गुणतत्त्वविज्ञा।
जीवस्य विज्ञा शशिनन्दनस्य शुक्रस्य रम्यापि भवेदरम्या।।३८।।

यदि चन्द्रमा और लग्न दोनों वृहस्पति राशि (धन मीन) में मंगल के त्रिशांश में बैठे हों तब विचित्र सद्गुणों से संपन्ना शनि के त्रिशांशमें हों तब अति मन्दा, बृहस्पति के त्रिंशांशमें हों तब विशेषकर गुणोंको जाननेवाली, बुधके त्रिंशांशमें हो तव सब बातों को जाननेवाली और यदि शुक्रके त्रिंशांशमें लग्न और चन्द्रमा हो तब वह स्त्री यदि रम्य (सुन्दर) भी हो तो अरम्य (कुरूपा) हो जाती है।।३८।।

अथ शनिराशौ—

मन्दालये भूमिसुतस्य दासी शनेरसाध्वी भवतीति साध्वी।
गुरोर्निशानाथसुतस्य दुष्टा शुक्रस्य बन्ध्या क्रमतः प्रदिष्टा।।३९।।

जिस स्त्री के जन्म समय में लग्न और चन्द्रमा दोनों शनिकी राशि १०।११ में मंगल के त्रिंशांश के होकर बैठे हों तब वह दासी अर्थात् चाकरी करनेवाली, शनिके त्रिंशांशमें हो तो परपुरुषगामिनी, वृहस्पति त्रिंशांश में हो तब पतिव्रता, बुध के त्रिंशाश में हो तो अत्यन्त दुष्टा और यदि शुक्र के त्रिंशांश में लग्न और चन्द्रमा दोनों हों तब वह स्त्री बन्ध्या होती है।।३९।।

अथ पुरुषवत्तथा ब्रह्मवादिनीयोगः—

मन्दे मध्यवले कवीन्दुशशिजैर्वीर्यच्युतै प्रायशः
शेषैर्वीर्य्यसमन्वितैः पुरुषवन्नारी यदोजे तनुः।
जीवाङ्गारवीन्दुजैर्बलयुतैश्चदङ्गारशौ समे
गीतातत्त्वविचारसारचतुरा वेदान्तवादिन्यपि।।४०।।

जिस स्त्री की कुण्डली में शनि तो मध्यवली होकर बैठा हो शुक्र, चन्द्रमा, बुध क्षीणवीर्य हों, बाकी ग्रह (सूर्य, बुध, मंगल) बलवान् हों और बृहस्पति, मंगल, सूर्य और बुध बलवान् होकर सम जन्मलग्न या सम जन्मराशिमें बैठे हों तब वह स्त्री गीताके तत्त्वका विचार जानने वाली, बड़ी चतुरा और वेदान्त विद्या में प्रवीण होती है।।४०।।

अथाष्टमस्थग्रहाणां फलम्—

यदाष्टमे देवगुरौ भृगौ वा विनष्टगर्भा मृतपुत्रिका च।
कुजेऽष्टमे सा कुलटा मृगाक्षी चन्द्रेऽष्टमे स्वामिसुखेन हीना।।४१।।
मन्देऽष्टमे रोगरतस्य भार्या दिनाधिपे सा पतितापतप्ता।
अनङ्गरङ्गा परकान्तसङ्गा मृतावगौ सा कुलधर्मभङ्गा।।४२।।

जिसकी कुण्डली में लग्न से अष्टम घर में बृहस्पति या शुक्र बैठा हो तब वह वह स्त्री विनष्टगर्भा होती है यानी उसके गर्भ पाँच या सात मास के होकर गिर पड़ते है अथवा मृतापत्या होती है। यदि मंगल अष्टम घर में स्थित होवे तब वह स्त्री पति के सुखसे रहित होती है और जो शनि अष्टम घर में हो तब वह रोगग्रस्त पतिकी भार्या होती है और सूर्य अष्टम होवे तब पतिताप से तप्त होती है और जिसके अष्टम घर में राहु होता है वह स्त्री कामदेव के रंग में मग्न परपुरुष का संग करनेवाली और कुलधर्म से भ्रष्ट होती है।।४१-४२।।

अथ स्त्रीणां पुत्रभावविचारः—

पञ्चमे शुभसंदृष्टः पञ्चमाधिपतावपि।
केन्द्रकोणे तदा नारी बहुपुत्रवती भवेत्।।४३।।
पञ्चपुत्रवती जीवे सवले ससिते विधौ।
सुता सुखवती पापे नारी सन्तानवर्जिता।।४४।।

जिस स्त्री के लग्नसे पञ्चमघर को तो शुभग्रह देखता हो और पंचमेश केन्द्र में योत्रिकोण १।४७।१०।५।९ में बैठा हो तब वह स्त्री बहुपुत्रवती होती है। जिसके पंचम घर में बैठा हो तब पुत्रोंके सुखवाली होती है और जिसके पंचम घर में बली हो कर पापग्रह बैठा हो तो वह स्त्री संतान रहित होती है।।४३-४४।।

अथ विषाख्यायोगः—

भद्रासार्पानलवरुणभे भानुमन्दारवारे
यस्या जन्म प्रभूवति तदा सा विषाख्या कुमारी।
पापे लग्ने शुभखगयुतः पापखेटावरिस्थौ
स्यातां तस्या जन्मसमये सा कुमारी विषाख्या।।४५।।

आदित्यसूनोर्दिवसे द्वितीया भुजङ्गमे भौमदिनेऽम्बुजर्क्षे।
चेत्सप्तमी वाथ रवौ विशाखा हरेस्तिथौ वापि चसा विषाख्या।।४६।।
धर्मगेहगते भौमे लग्नगे रविनन्दने।
पञ्चमे दिवसाधीशे सा विषाख्या कुमारिका।।४७।।

भद्रा, आश्लो, कृत्तिका, शतभिषा इनमें से कोई नक्षत्र और रवि शनि, मङ्गलवार में से कोई वार हो तो इस योग में जन्म लेनेवाली कन्या विषाख्या होती है, और लग्न में शुभग्रह के साथ पाप ग्रह हो और पापग्रह छठें घर में बैठा हो इस योग में जिस स्त्री का जन्म होता है, वह स्त्री भी विषाख्या कहलाती है। शनिवार द्वितीया तिथि आश्लेषा नक्षत्र का जिसका जन्म हो या मंगलवार सप्तमी शतभिषा नक्षत्र में जन्म हो अथवा रविवार द्वादशी विशाखा नक्षत्र का जन्म हो तो वह कन्या विषाख्या होती है। और जिसके जन्मकाल में नवम स्थान में मंगल लग्न में शनैश्चर और पञ्चम स्थान में सूर्य हो तो वह कन्या विषाख्या होती है।।४५-४७।।

अथ विषाख्यायोगफलम्—

विषाख्या शोकसन्तप्ता दुर्भगा मृतपुत्रिका।
वस्त्राभरणहीना च पुराणैरुदिता भवेत्।।४८।।

जिसकी कुण्डली में विषाख्या नाम योग होता है वह स्त्री शोकसे संतप्ता, दुर्भगा, मृतापत्या और वस्त्र तथा आभरणों से रहित होती है। ऐसा पुराण के ऋषियों ने कहा है।।४८।।

अथ विषाख्यायोग भङ्ग—

सप्तमे सप्तमाधीशः शुभो वा लग्नचन्द्रयोः।
विषयोगमलं हन्ति अहो हरिरिभं यथा।।४९।।
इत्थं विवाहकालेऽपि ज्ञातव्यं लग्नचन्द्रयोः।
तदधीनं यतः स्त्रीणां शुभाशुभफलं भवेत्।।५०।।

जिसकी कुण्डली में सप्तम घरका स्वामी सप्तम घरमें बैठा हो तब विषाख्या नामयोग के फल को वैसे ही नाश करता है जैसे हाथी को सिंह नाश करता है। इसी प्रकार विवाहकाल में लग्न का और चन्द्रमाका फल जानना चाहिये। क्योंकि स्त्रियों का शुभाशुभ विवाह के अधीन होता है।।४९-५०।।

अथ वैधव्यभङ्गोपायः—

वैधव्ययोगयुक्तायाः कन्यायाः शान्तिपूर्वकम्।
वेदोक्तविधिनोद्वाहं कारयेच्चिरजीविनी।।५१।।

जिस कन्या के विधवा योग हो उसका वेदोक्त विधि से शान्ति कराकर पश्चाद्विवाह करे।।५१।।

अथ कन्यायाः शुभाशुभाङ्गयुक्तलक्षणम्—

शुभलक्षणसंयुक्ता भवेदिह यदांगना।
तत्करग्रहणादेव वर्द्धते गृहिणां सुखम्।।५२।।
शुभाशुभं पुरा गीतं वेदव्यासेन धीमता।
प्रकाश्यते तदेवात्र नारीणामंगलक्षणम्।।५३।।

जो कन्या शुभ लक्षणों से युक्त होती है उस कन्या का पाणिग्रहण करनेवाले गृहस्थी पुरुषों को उस समय सुख की वृद्धि होती है। बुद्धिमान् श्रीवेद्व्यासजी ऋषि ने जो शुभाशुभ लक्षणं निरूपण किये हैं, उन्हीं स्त्रियोंके अङ्गलक्षणों को मैं प्रकट करता हूँ।।५२-५३।।

युवतिमांसलं किल कोमलं सममतीव जपाकुसुमप्रभम्।
दिशति मांसलमुष्णमिलापतेरतिहितं बहुधर्मविवर्जितम्।।५४।।

जिस स्त्री के पगतल कोमल बराबर (बीच के गड्ढे से रहित) दुपहरियाके पुष्पके समान लाल, गरिमाई सहित और कुछ मोटा होता है तब वह कन्या धर्मसे रहित और राजा की पत्नी होती है।।५४।।

कमलकम्बुरथध्वजचक्रवत्पृथुलमीनविमानवितानवत्।
भवति लक्ष्म पदे यदि योषितां क्षितिभृतां वनिता विभुतावृता।।५५।।

जिस स्त्री के पगतल कमल, शंख, रथ, ध्वजा, चक्र, मछली, विमान और चन्दवे के चिन्हों से युक्त बीच के गड्ढे से रहित होता है वह स्त्रीं विभुता (ऐश्वर्य) से सम्पन्न राजा की रानी होती है और जिस स्त्री का चरण सूप के आकार का रंग से रहित विशेषकर सूखा, कड़ा और रूखा होता है वह पाँव मंदभाग्यकी सूचना करने वाला होता है।।५५।।

अथाङ्गुष्ठनखलक्षणम्—

यस्याः समुन्नतांगुष्ठो वर्तुलोऽतुलसौख्यदः।
शूर्पाकारो नखो यस्याः सा भवेद् दुःखभागिनी।।५६।।

जिस स्त्री के पाँव का अंगूठा उन्नत और गोल होता है, वह अतुल सुख देनेवाला होता है जिसके नख सूप के आकार के हों वह स्त्री दुखों को भोगनेवाली होती है।।५६।।

अथ गणिकालक्षणम्—

संचलन्त्याः पदा धूलिधारा यदा राजमार्गेऽबलायां बलादुच्छलेत्।
पांसुला सा कुलानां त्रयं सत्वरं नाशयित्वा खलैर्मोदते सर्वदा।।५७।।

जिस स्त्री के चलने में मार्ग में धूलि उड़ती हो वह स्त्री जारिणी (परपुरुषगामिनी) होकर अपने माता, पिता और पति तीनों के कुलों को दूषित करनेवाली होकर सब समय दुष्ट एवं कामी पुरुषोंके साथ आनन्द से विषय करनेवाली होती है।।५७।।

अथ पादाङ्गुल्युपर्य्यङ्गुललक्षणम्—

यस्या अन्योन्यमारुढा पादांगुल्यो भवन्ति चेत्।
सा पतीन्बहुधा हत्वा वारवामा भवेदिह।।५८।।

जिसकी दो अंगुली मे एक अंगुली पर एक चढ़ी हुई हो वह स्त्री अनेक प्रकार से अपने पतिको मारकर वारांगना (वेश्या) होती है।।५८।।

अथ कनिष्ठाङ्गुलिलक्षणम्—

कनिष्ठा न स्पृशेद्भूमि चलन्त्या योषितस्तदा।
सा द्रुतं स्वपतिं हत्वा जारेण रमते पुनः।।५९।।

जिस स्त्री के पाँव की कनिष्ठा अंगुली चलने में भूमिको ने स्पर्श करती हो तो वह स्त्री शीघ्र ही पति को मारकर परपुरुष से रमण करनेवाली होती है।।५९।।

अथानामिका तथा मध्याङ्गुलिलक्षणम्—

अनामिका च मध्या च यदि भूमि न संस्पृशेत्।
आद्या पतिद्वयं हन्ति चापरा तु पतित्रयम्।।६०।।
अनामिका च मध्या च यदि हीना प्रजायते।
तदा सा पतिहीना स्यादित्याह पगवान्स्वयम्।।६१।।

जिस स्त्रीके चलने में बिचली और अनामिका (उँगाली के पासकी) दोनों अंगुली यदि भूमि को स्पर्श न करती हो उनमें भी अनामिका भूमिको स्पर्श न करे तो दो पतियों और मध्या अंगुली भूमिको स्पर्श न करती हो तब वह स्त्री तीन पतियोंको मारती है। और अनामिका मध्या दोनों अँगुली जिस स्त्रीकी छोटी हो तब वह स्त्री पतिहीना होती है यह बात भगवान् ने अपने मुख से कही है।।६०-६१।।

अथ पादनखलक्षणम्—

यदि पादनखाः स्निग्धा वतु लाश्च समुन्नता।
ताम्रवर्णा मृगाक्षीणां महाभोगप्रदायकाः।।६२।।

जिसके पाँव के नख लाल चिकने गोल और उन्नत हों तब उस स्त्री को अनेक भोगों के देनेवाले होते हैं।।६२।।

अथ पादपृष्ठलक्षणम्—

यदि भवेदमलं किल कोमलं कमलपृष्ठवदेव मृगीदृशाम्।
अरुणकुङ्कुमविद्रुमसन्निभं बहुगुणं पदपृष्ठमिति ध्रुवम्।।६३।।

जिस स्त्री का पादपृष्ठं कोमल उज्जवल मूँगा या केशरके समान रंग का लाल और कमल के पृष्ठ का-सा हो तब वह स्त्री अनेक सद्गुणों से युक्त होती है।।६३।।

अयान्याशुभलक्षणम्—

अंघ्रिमध्ये दरिद्रा स्यान्नम्रत्वेन सदाङ्गना।
शरालेनाध्वगा नारी दासी लोमाधिकेन सा।।६४।।

जिस स्त्री की उँगलियों के बीच में गहरापन् हो तब वह स्त्री दरिद्रा होती है। यदि वे ही उँगलियों का मध्यभाग शिराल (अधिक नसवाला) हो तब वह स्त्री रास्ता चलानेवाली और जो अधिक रोमों से संयुक्त हो तब वह स्त्री दासी होती है।।६४।।

अथ गुल्फयोर्लक्षणम्—

निर्मांसेन सदा नारी दुर्भगा खलु जायते।
गुल्फौ गूढौ शुभौ स्यातामशिरालौ च वर्तुलौ।।६५।।

जिस स्त्री की पिंडुली निर्मांस (पतली) हो वह स्त्री दुर्भगा होती है और नसों के आधिक्य से रहित गोल और माँस से छिपी हो तब वह शुभफल के देनेवाली होती है।।६५।।

अगूढो शिथिलौ यस्यास्तस्या दौर्भाग्यसूचका।
गुल्फलक्षणमाख्यातं पार्ष्णिलक्षणमुच्यते।।६६।।

जिस स्त्री के ठिंगुना मांस से निकले और शिथिल हों तब वे दुर्भाग्य के जतानेवाले होते है। यह ठिगुनों का लक्षण कहा है अब एड़ी का लक्षण कहते हैं।।६६।।

अथ पार्ष्णिलक्षणम्—

समानपार्ष्णिः सुभगा पृथुपार्ष्णि दुर्भमा।
कुलटा तुङ्गपार्ष्णिश्च दीर्घपार्ष्णिर्गदाकुला।।६७।।

जिस स्त्री की एड़ी समान होती है वह स्त्री सुभगा होती है और मोटी ऐड़ी होने से दुर्भगा, ऊँची एड़ी होने से परपुरुषगामिनी और लम्बी एड़ी होने से स्त्री रोगिणी होती है।।६७।।

अथ जङ्घालक्षणम्—

जङ्घे रम्भोपमै यस्या रोमहीने च वर्तुले।
मांसले च समे स्निग्धे राज्ञी सा भवति ध्रुवम्।।६८।।

जिस स्त्री की जंघायें केलेके समान चिकनी, रोमसे रहित, गोल, समान और मांसल होती है वह स्त्री अवश्य राजरानी होती है।।६८।।

अथ रोमलक्षणम्—

एकरोम प्रिया राज्ञो द्विरोमा सौख्य भागिनी।
त्रिरोमा विधवा ज्ञेया रोमकूपेषु कामिनी।।६९।।

एक रोमवालौ रोमराजी होने से रानी, दो होनेसे सुख भोगनेवाली और हर एकरोम कूपोंमें तीन-तीन रोम होनेसे विधवा होती है।।६९।।

अथ पुनर्जानुलक्षणम्—

भवति जानुयुगं यदि मांसलं तदतिवृत्तमतीव शुभप्रदम्।
भुवनभर्तुरतौ विपर्सतमादि भिरिदं विपरीतमुदीरितम्।।७०।।

जिस स्त्री की दोनों जङ्घायें मोटी और अति गोल हों तब वह राजाकी रानी होती है और इसमें विपरीत होनेसे फल होता है (पूर्व पीढ़ियों का और जाँघों का फल कहा है)।।७०।।

अथ नितम्ब तथा कटिलक्षण—

समुन्नतनितम्बाद्या यस्याः सिद्धांगुल कटिः।
सा राजपट्टमहिषी नानालिभिः समावृता।।७१।।
निर्मांसा विनता दीर्घा चिपिटा शकटाकृतिः।
लध्वी रोमाकुला नार्याः वैधव्यं दिशते कटिः।।७२।।

जिस स्त्री नितम्ब (कटुपश्चाग) ऊंचे हों और चौबीस अंगुल के प्रमाण की कमर हो तो वह स्त्री अनेक सखिजनों के साथ रहनेवाली राजरानी होती है और मांस से रहित आगे को या पीछे को कुछ झुकी लम्बी चिपटी गाड़ी के आकार लम्बी और रोमसंयुक्त जिस स्त्री की कमर हो वह स्त्री विधवा होती है।।७१-७२।।

सीमन्तिनीनां यदि चारुबिम्बो भवेन्नितम्बो बहुभोगदः स्यात्।
समुन्नतो मांसल एव यासां पृथुः सदा कामसुखाय तामाम्।।७३।।

जिस स्त्री के कटि के पश्चद्भाग विम्ब के समान हो तो वह स्त्री अनेक भोगों को भोगनेवाली होती है और जिसका कटि पश्चाद्भाग ऊँचा, मांसल और पुष्ट होता है वह सदा काम सुखों को भोगती है।।७३।।

अथ योनिलक्षणम्—

यदा गजस्कन्धसमानरूपो भगाऽथवा कच्छपपृष्ठवेषः।
इलापतेः कामविनोददायी वामोन्नतः सोऽपि सुताजनेता।।७४।।

जिस स्त्री की योनि (भग) हाथी के कन्धेके समान हो या कच्छप के पीठ की आकारवाली हो वह कामक्रीडा करनेवाली राजरानी होती है और वामभाग उन्नत (ऊँचा भग होने से स्त्री कन्या सन्तानें को उत्पन्न करनेवाली होती है।।७४।।

अश्वत्थदलरूपो वा भगो गूढमणि शुभः।
चुल्हिकोदररूपा यः कुरङ्गखुतसन्निमः।।७५।।

रोमाकुलो दुष्टयोनिर्विकृतास्योऽमहाधनः।
कामिनां न विनोदार्ही भगो भवति सर्वथा।।७६।।
कामिन्या कञ्चुकावर्तो भगो दौर्भाग्यवर्द्धकः।
न गर्भधारणेऽशक्तो वक्राकारोऽपि तादृशः।।७७।।
वंतसवंशदलप्रतिभासः खर्पररूपवदेव भगो वा।
लम्बगलो विकटोगजलोमा नैवशुभश्चिपिटोपि निरुक्तः।।७८।।

स्त्री की योनि पापलके पत्तेके समान आकारवाली गुप्त मणितुल्य या चुल्हिका (चूल्हे) के समान या हरिण के खुर के आकारका होने से शुभ होती है और रोमों से आकुल रहने से जिसकी योनि दीखती नहीं वह स्त्री धनहीन होती है और वह कामी पुरुषों के विनोद करने योग्यनहीं होती और जिस स्त्री का भग दोनों तरफसे उन्नत मध्य में नीचा हो तब दुर्भाग्य बढ़ानेवाला और गर्भ के धारण करने में असक्त होता है और वक्राकार भग का भी यही फल होता है। यदि बेंत या बाँस के दल के आकार का या खप्पर के आकार का भग को अथवा लम्बे गले वाला या विकट या हाथी के समान लोमवाला भग हो अथवा चिपटाकार भग होवे तब शुभ नहीं होता है।।७५-७८।।

मृदुतरं मृदरोमकुलाकुल यदि तदा जघन भगभाजनम्।
उत समुन्नतमायतनं तदा पतिकलाकलितं गदितं बुधैः।।७९।।
तदेव दक्षिणावर्त मांसलं शुभसूचकम्।
आमावर्तं च नारीणां खण्डितं खण्डिताश्रयम्।।८०।।
निर्मांस कुटिलाकार रूक्षं वैधव्यसूचकम्।
अतिस्थूलं महादीर्घ सद्यो दौर्भाग्यकारकम्।।८१।।

जिस स्त्री का भग अथवा कटिपश्चाद्भाग अति कोमल रोमवाला या सम्यक् प्रकार उन्नत (ऊँचा) या लंबा होवे तब वह पतिके कलासे आदरपूर्वक सेव्य कहा है यही सब बुधजनोंने निर्णय किया है। यदि वही भाग दक्षिणावर्त और मांसल हो तब शुभसूचक होता है। यदि वह वामावर्त और खंडित हो तब खंडिता (जारिणी) पन का आश्रय होता है। यदि वह माँस रहित और टेढ़े आकारवाला या रूखा हो तब वैधव्य की सूचना करता है और स्थूल या लंबा भग हो तब दौर्भाग्य (अभाग्य) का करनेवाला होता है।।७९-८१।।

वस्तिलक्षणम्—

मृदुला विपुला वस्तिः शोभना च समुन्नता।
अशुभा रेखायाक्रान्ता शिराला लोमशङ्कुला।।८२।।

जिस स्त्री के नरम बड़े और ऊँची नसें हो तो शुभ और जो अनेक रखावाली और नसें दीखती हों और रोमों से युक्त हों। तब वह नसें अशुभ सूचक होती हैं।।८२।।

अथ नाभिलक्षणम्—

गंभीरा दक्षिणावर्ता नाभिर्भोगविवर्द्धिनी।
व्यक्तग्रन्थिः समुत्ताना वामावर्ता न शोभना।।८३।।

जिस स्त्री की नाभि गहरी और दक्षिणावर्त हो वह भोगों को बढ़ानेवाली होती है। जिसकी ग्रन्थि (मध्यकी घुण्डी) दीखती और ऊँची हो और वामावर्तयुक्त नाभि हो तब यह नाभि अशुभ फल देने वाली होती है।।८३।।

पृथूदरी यदा नारी सूते पुत्रान् बहूनपि।
भेकोदरी नरेशानां बलिनं चायतोदरी।।८४।।
उन्नतेनोदरेणैव बन्ध्या नारी प्रजायते।
जठरेण कठोरेण सा भवेद्भिन्दुकांगना।।८५।।
कोमलैर्मांससयुक्तैः समानैः पार्श्वकैः शुभम्।।८६।।
वितिरेणं मृदुत्वचा सपुत्रो जठरेणातिकृशेन कामिनी सा।
बहुधातुलभोगलालिता सानुदिनं मोदकसत्फलाशिनीस्यात्।।८७।।
घटाकारं यस्या भवति च मृदङ्गेन सदृशं
यवाकारं दैवादुदरमहिपुत्रैर्विरहितम्।
अभद्रं नो भद्रं तदपि यदि कूष्माण्डसदृशं
निरुक्तं तत्वज्ञैः कठिनमुरुशालेन च समम्।।८८।।

जिसका उदर पुष्ट होता है वह स्त्री अनेक पुत्रोंको उत्पन्न करनेवाली होती है और जिसका पेट मेढकके आकारवाला होता है वह स्त्री राजा और बलवान् पुत्रोंको उत्पन्न करनेवाली होती है और उन्नत पेटवाली स्त्री बंध्या (बाँझ) होती

और जिस स्त्री का कठोर उदर हो वह स्त्री भिंदुक (अधम मनुष्योंमें उत्तम) पुरुष की पत्नी होती है वह स्त्री अवश्य दासी होती है और जिसकी नरम मांसयुक्त और समान कूखें होती हैं तब वह शुभगुणा होती है, और जिस स्त्रीका नसोंसे रहित कोमल चर्मवाला और पतला उदर होता है वह स्त्री अनेक भोगोंसे लालायित और प्रतिदिन अनेक प्रकार मोदकोंको खानेवाली और अनेक फलोंको भोगनेवाली होती है। और जिस स्त्री का उदर घड़ेके के आकार या मृदंगके आकार अथवा यवके आकारका हो तब वह स्त्री पुत्रसे रहित अमंगलरूपा होती है और यदि कूष्माण्ड (कुम्हड़े के फल) के सदृश आकारवाला हो तब वह अमंगलरूपा नहीं किन्तु मंगलरूपा होती है और तत्त्वज्ञोंने कहा है कि जिस स्त्रीके उरूशाल कठोर हों तब भी पूर्वोक्त फल होता है।।८४-८८।।

अथ त्रिवलीलक्षणम्—

कृशतरा त्रिवली सरसावली ललितनर्मविनोदविवर्धिनी।
भवति सा कपिला कुटिलाकुला शुभकरी विरला महदाकृतिः।८९।

जिस स्त्री के उदर में अति पतली सीधी त्रिवली हो, वह स्त्री मनोहर हास्य क्रीडा को बढ़ानेवाली होती है यदि वह त्रिवली कपिल (भूरे) रंग की कुछ टेढ़ी हो तब वह स्त्री व्याकुल रहनेवाली होती है और यदि छिछली और बड़ी त्रिवली हो तब वह शुभफल देनेवाली होती है।।८९।।

अथ वक्षस्थललक्षणम्—

लोमहीनहृदयं यदा भवेन्निम्नताविरहितं समायतम्।
भोगमेत्य सकलं वराङ्गना सा पुनः प्रियवियोगमालभेत्।।९०।।
उद्भिन्नरोमहृदया स्वपतिं निहन्ति
विस्ताररूपहृदया व्यभिचारिणी स्यात्।
अष्टादशाङ्गुलमितं हृदयं सुखाय
चेद्रोमशं च विषमं न सुखाय किञ्चित्।।९१।।
उन्नतं पीवरं शस्तं हृदयं वरयोषिताम्।
अपीवरमिदं नीचं पृथुदौर्भाग्यसूचकम्।।९२।।

जिसका हृदय (छाती) रोमराशि से और गढ़ेले से रहित बराबर तथा लम्बी हो वह स्त्री सब भोगों को भोगनेवाली होकर पश्चात् पतिके वियोगको पाती यानी

विधवा हो जाती है। और रोमयुक्त हृदयवाली स्त्री अपने पतिको मारनेवाली और विस्मृत हृदयवाली परपुरुषगामिनी होती है और अट्ठारह अंगुल प्रमाण का हृदय सुख देनेवाली होती है। परन्तु यदि अधिक रोमवाली या विषम (ऊँचा खाला) हृदय हो तब उस स्त्री का सब समय दुःख को देखनेवाला होता है। उन्नत (ऊँचा) पुष्ट हृदय हो तब वह उत्तम स्त्रियों को सब समय अत्यन्त दुःख देने वाला होता है और यदि पतला नीचा हृदय हो तब स्त्री का दौर्भाग्य सूचक हृदय होता है।।९०-९२।।

अथ स्तनलक्षणम्—

भवत एव समौ सुदृढाविमौ तदि घनौ सुदृशस्तु पयोधरौ।
निजपतेरनिशं परिवर्तुलौ कुसुमबाणविनोदविवर्धकौ।।९३।।
सुभ्रुवो विरलौ सूक्ष्मौ स्थूलाग्रवहिताविमौ।
पयोधरौ तदा नार्य्याः प्रभवेदक्षिणोन्नतौ।।९४।।
पुत्रदोऽप्यथ कन्यादो यदा वामोन्नतो भवेत्।
सान्तरालौ च विस्तारौ पीवरास्यौ न शोभनौ।।९५।।
मूले स्थूलो क्रमकृशावग्रो तीक्ष्णौ पयोधरौ।
सुखदौ पूर्वकाले तु पश्यादत्यन्तदुःखदौ।।९६।।

जिस स्त्री के स्तन सम मजबूत और परस्परे मिले हुए गोल हों तब उस स्त्री को अपने पति के द्वारा कामक्रीडा बढ़ानेवाले होते हैं। और बीच में अंतराल सहित सूक्ष्म और मोटो अग्रभागवाले हों तब स्त्री को अहित करनेवाले होते हैं और दक्षिणोन्नत स्तन होने से पुत्रसंतति देनेवाले और वामोन्नत स्तन होने से कन्यासंतति देनेवाले होते हैं और यदि स्तनों के बीच खाली हो अर्थात् दूर-दूर हों या अति पुष्ट हों अथवा स्थनों का अग्रभाग मोटा हो तब शुभ नहीं होते। और जड़ में स्थूल होकर तदनन्तर क्रम से कृश हो और अग्रभाग में तिक्ष्ण हो तो वे स्तन पूर्व अवस्था में सुख देनेवाले और वृद्धावस्था में दुःख देनेवाले होते हैं।।९३-९६।।

अथ स्कन्धलक्षणम्—

पुत्रिणी विनतस्कन्धा ह्रस्वस्कन्धा सुखप्रदा।
 पुष्टस्कन्धा तु कामान्धा रतिभोगसुखावहा।।९७।।

मदान्धा कुटिलस्कन्धा स्थूलस्कन्धा च तादृशी।
यदि लोमाकुलस्कन्धा वैधव्यं द्रुतमाहवेत्।।९८।।

झुके हुए स्कन्धों के होने से स्त्री पुत्रसन्तानवाली, ह्रस्वकंधो के होने से सुख भोगनेवाली, पुष्टकन्धों के होने से स्त्री सब समय कामसे अन्धी और रतिभोगरुप सुख को देनेवाली होती है। और जिस स्त्री के कन्धे टेढ़े हों या स्थूल हो तब वह स्त्री सब समय मद में अन्धी होती है। यदि स्त्री के कन्धों में रोम अदिक हों तब उस स्त्री को शीघ्र ही वैधव्य प्राप्त होता है।।९७-९८।।

अथ बाहुलक्षणम्—

स्रस्तांसा संहनांसा च धन्या भवति कामिनी।
तुंगांसा विधवा ज्ञेया विमांसा सा तथैव च।।९९।।

जिस स्त्री के बाहुमूल घने (फैले हुए) अथवा दृढ़ (मज़बूत) हों तब वह स्त्री धन्य कामिनी होती है और जिसके ऊँचे बाहुमूल हों अथवा मसि रहित हों तो वह स्त्री विधवा होती है।।९९।।

अथ हस्ताङ्गुलिलक्षणम्—

अङ्गुष्ठाङ्गुलिकं युग्मं यत्पद्मकलिकासमम्।
बहुभोगाय नारीणां निर्मितं विधिना परा।।१००।।

जिस स्त्री की अँगूठे के पास की दोनों अँगुली कमलकली के समान होवे तो वह बड़े भोगों की संपादन करनेवाली होती है। ऐसा ब्रह्माजी ने कहा है।।१००।।

अथ करतललक्षणम्—

करतलं भुजयोर्यदि कोमलं विमलपद्मनिभं च समुन्नतम्।
निजपतेःकुसुमायुधवर्धकं निदितं मुनिना विधिनोदितम्।।१०१।।
स्वच्छरेखाकुलं भद्रं न भद्रं हीनरेखया।
अभद्रं रेखया हीनं वैधव्यं चातिरेखया।।१०२।।

जिस स्त्री की करतली (हथेली) निर्मल और कमल के समान तथा ऊँची यानी ऊपर को उठी हो तो वह स्त्री पतिका कामोद्दीपन करनेवाली होती है। ऐसा सामुद्रिक जाननेवाले ऋषियों का मत है और जिस स्त्री की करतली स्वच्छ (साफ) रेखाओं से युक्त हो वह कल्याण करने वाली और हीन रेखावाली करतली

अमंगल करनेवाली होती है और बिलकुल रेखा से रहित होने से अमंगल देनेवाली और बहुरेखा युक्त हथेली होने से वैधव्यदायक होती है।।१०१-१०२।।

शिगलं कुरुते निःस्वं नारीकरतलं यदि।
समुन्नतं च विशिरं करपृष्ठं सुशोभनम्।।१०३।।
रोमाकुलं गभीरं च निर्मांसं पतिजीवहृत्।
सुभ्रुवः सरपृष्ठस्य लक्षणं गदितं बुधैः।।१०४।।

जिस स्त्री के हाथों का पिछला भाग नसों से अधिक युक्त हो तब वह दरिद्र करता है और जिस स्त्री के हाथों का पिछला भाग उँचा और नसों के आधिक्य से रहित हो वह लाभदायक होता है और जिस स्त्री के हाथ का पिछला भाग रोमों से युक्त गंभीर और मांस से रहित हो वह उस स्त्री के पति के प्राणों का नाश करनेवाला होता है; बुद्धिमान पंड़ितों ने इस प्रकार करपृष्ठका लक्षण कहा है।।१०३-१०४।।

अथ शुभाशुभ स्वप्नफल—

सर्वाणि शुक्लान्यतिशोभनानि कार्पासवक्रास्थिविवर्जितानि।
सर्वाणि कृष्णानि च निन्दितानि गोवाजिहस्तिस्वजनंविना हि।।

रूई, तक, अस्थि (हड्डी) छोड़कर जितने शुक्ल (उजले) पदार्थ हैं सबका स्वप्न में दर्शन शुभ फलदायक है और गाय, घोड़ा, हाथी और ब्राह्मण तथा अपने बन्धु वर्ग को छोड़कर जितने काले पदार्थ हैं उनके स्वप्न में दर्शन से अशुभ फल होता है।

।।अथ वर्षप्रवेश प्रकरण।।

वर्षप्रवेश बनाने की विधि

गताः समाः पाक्ष्युताः प्रकृतिघ्नसमागणात्
खवेदाप्तघटीयुक्ता जन्मवारादिसंयुताः।
वर्षप्रवेशे वारादि सप्ततष्टोऽत्र निर्दिशेत्।।१।।

गतवर्ष संख्या में अपना चतुर्थांश जोड़े, उसमें फिर गतवर्ष संख्या को २१ से गुणा करके ४० से भाग देने से लब्धि घटी आदि को जोड़ कर जो हो उसमें जन्मकालिक वारादि इष्ट घटी जोड़े, उसको सात से तष्टित करने से शेष वारादिक वर्ष प्रवेश काल होता है।।१।।

उदाहरण — इष्ट वर्ष ३१ इसमें इसी का चतुर्थांश दिनादि ७।४५ जोड़ने से ३८।४५; इसमें गताब्द ३१ को २१ से गुणा किया तो ६५१; इसमें ४० का भाग देकर लब्धि घटी, पल १६।१६ जोड़ने से ३९।१।१६ दिनादि में जन्मकालिक दिनादि इष्ट घटी १।४४।३५ जोड़ने से वर्षप्रवेष कालिक दिनादि इष्ट ४०।४५।५१ दिन में ७ का भाग देकर दिनादि वर्षेष्ट ५।४५।५१ हुआ अर्थात् गुरुवार के ४५ घड़ी ५१ पल भर ३२ वाँ वर्षप्रवेश हुआ। उस समय में पूर्वोक्त तिथि से स्पष्ट ग्रह और भावों का साधन करना।

इस प्रकार से वर्ष प्रवेश वारादि बनाने में वास्तव वर्ष प्रवेश काल नहीं आता है इसलिये वास्तव (सूक्ष्म) वर्ष प्रवेश काल ज्ञानार्थ प्रकार यह है।

जन्मार्कस्य तदासन्नपंक्त्यर्केण सहान्तरम्।
कालीकृत्यार्कगत्याप्तदिनाद्यन युतोनितम्।।२।।
तत्पंक्तस्थं वारपूर्वं जन्मार्के चाधिकोनके।
तद्वाराद्ये वर्षवेशो विज्ञेयो गणकोत्तमैः।।३।।
एवं मासदिनार्काभ्यां ज्ञेयौ मासद्युवेशकौ।
राशिवृद्ध्या च मासार्को लववृद्ध्याद्युभास्करः।।४।।

जन्मकालिक सूर्यके समान राश्यादिसूर्य जब होता है, तब वर्षप्रवेश होता है। इसलिए वर्ष पूर्तिके आसन्नसमयमें जन्मकालिक सूर्यके राश्यादि तुल्य या उसके आसन्नका सूर्य पञ्चाङ्ग में जिस पंक्ति में हो, उस पंक्तिके राश्यादिरवि और जन्मकालिक राश्यादिरवि के अन्तर करके कलात्मक बनावें, उसमें स्पष्टसूर्यको गति कलाके भाग देने से जो दिनादि (दिन, घटी, पल) लब्धि हो उसको पंक्ति के दिनादि में जोड़ने या घटाने से (पंक्तिस्थसूर्य से जन्म का सूर्य अधिक हो तो जोड़ने, अल्प हो तो घटाने से, जो दिनादि हो, वही वर्षप्रवेशकालिक स्पष्ट दिनादि समझना चाहिए जन्मकालिक और वर्षकालिक सूर्य राश्यादि तुल्य होते हैं। तथा मास के रवि में, एक, एक अंश जोड़ने से, दिन के रवि होते हैं। उन मास और दिन के) रवि पर से उक्त विधि से, मास प्रवेशकाल और दिन प्रवेशकाल (वारादि) का ज्ञान करना चाहिए।।२-४।।

प्रवेशकालिक तिथि ज्ञान—

"शिवघ्नोऽब्दः स्वखाद्रीन्दुलवाढ्यः खाग्निशेषितः।
जन्मतिथ्यन्वितस्तत्र तिथावब्दप्रवेशनम्।।५।।

गत वर्ष को ११ से गुणा करके उसमें १७० का भाग देकर लब्धि को उसी में जोड़ फिर शुक्लपक्षादि से गणना करके जन्मकालिक तिथि उसमें जोड़कर ३० का भाग देने से शेष वर्षप्रवेशकालिक तिथि होती है। तिथ्यानयन में मध्यमान होने के कारण कभी कभी एक तिथि का अन्तर भी होता है। जिस समयमें स्पष्ट सूर्य जन्मकालिक स्पष्ट सूर्य के बराबर हो वह स्पष्ट वर्षप्रवेश काल समझना।।५।।

उदाहरण —गत वर्ष ३१ को ११ से गुणाकर, गुणनफल ३४१ इससे १०७ का भाग देकर लब्धि २ को उसी ३४१ में जोड़कर ३४३ इसमें जन्म तिथि २५ (कृष्णपक्ष दशमी) जोड़कर ३६८ इसमें ३० का भाग देकर शेष ८ शुक्लपक्ष की अष्टमी हुई। अर्थात् सुक्लपक्ष की अष्टमी में वर्ष प्रवेश होगा। तिथि में कभी १ दिन का अन्तर भी हो जाता है। इसलिये उपरोक्त विधि से जो दिन आवे उस दिन में निश्चय जन्मकालिक सूर्यांश तुल्य सूर्य के अंश होते हैं। इसलिए वर्ष प्रवेश में आगत दिन को प्रमाणित समझना।

अब वर्ष प्रवेश कालिक ग्रह, तन्वादि द्वादश भाव पूर्वोक्त प्रकार से साधन करे।

वर्षप्रवेश में ग्रहों का दृष्टिस्थान—

तृतीयैकादशे दृष्टिः शुभा स्यान्नवपञ्चमे।
चतुर्थदशमें नेष्टा सप्तमैकगृहे तथा।।६।।

परस्पर ३, ११ और ५, ९ में शुभ दृष्ट होती है। ४, १० तथा १, ७ में अशुभ दृष्टि होती है। बाकी स्थानों को ग्रह नहीं देखता है।।६।।

वर्षप्रवेश में मित्र शत्रु—

मित्रं त्रिकोणात्रिभवस्थितश्चेद्व्यर्यष्टरिष्फेषु समो ग्रहः स्यात्।
केन्द्रेषु शत्रु कथितो मुनीन्द्रैवर्वादिवेशे फल निर्णयाय।।७।।

अपने स्थान से ९, ५, ३, ११ वें स्थान में स्थित ग्रह मित्र और २, ६, १२ वें स्थान स्थित सम तथा केन्द्र १, ४ ७, १० में स्थित ग्रह शत्रु कहलाते हैं।।७।।

मुंथहानयन—

गतवर्षगणः सका हृतो द्वादशभिस्तथा।
शेषराशौ बुधैर्ज्ञेया मुन्थहा जन्मलग्नतः।।८।।

गतवर्ष में एक जोड़कर १२ से भाग देने से जो शेष बचे जन्म लग्न से उतनी संख्यक राशि में मुंथहा होती है।।८।।

उदाहरण —गत वर्ष ३१ में एक जोड़कर ३२ इसमें १२ का भाग देने से शेष ८ जन्म लग्न वृश्चिक से अष्टम मिथुन में मुन्थहा हुई।

अथवर्षेशाधिकारी—

जन्मलग्नपतिरबदलग्नपो मुन्थहाधिप इतस्त्रिराशियः।
सूर्यराशिपतिरह्निचन्द्रमाधीश्वरो निशि वमृश्य पञ्चकम्।।९।।
बली य एषां तनुमीक्षमाणः स वर्षयो लग्नमनीक्षमाणः।
नैवाब्दपो दृष्ट्यतिरेकतः स्याद्बलस्य साम्ये विदुरेवमाद्या।।१०।।

१ जन्म लग्नेश, २ वर्ष लग्नेश, ३ मुंथहेश, ४ त्रिराशीश तथा दिन में वर्ष प्रवेश हो तो चन्द्रराशीश ५, पाँचों का बल विचार करके जो सबसे बली हो और लग्न को देखता हो वह वर्षेश होता है। यदि लग्न को न देखता हो वह वर्षेश नहीं होता है। दो ग्रहों का बल यदि बराबर हो तो लग्न पर जनकी दृष्टि विशेष हो रही वर्षेश होता है।।९-१०।।

त्रिराशीश—

त्रिराशिपाः सूर्यसितार्किशुक्रा दिने निशीज्येन्दुबुधक्षमाजाः।
मेषाच्चतुर्णां हरिभाद्विलोमं नित्यं परेष्वार्किकूजेज्यचन्द्राः।।११।।

दिन में वर्षप्रवेश हो तो मेशादिका चार राशियों में क्रम से सूर्य, शुक्र, शनि, शुक्र और रात्रि में गुरु, चन्द्र, बुध, मंगल त्रिराशिपति होते हैं। सिंहादि चार राशियों में इसका उल्टा (अर्थात् दिन वाले रात्रि में रात्रिवाले दिन में) समझना। तथा धन, मकर, कुम्भ, मीन इन चार राशियों में दिन तथा सर्वदा क्रम से शनि, मंगल, गुरु, चन्द्रमा त्रिराशीश होते हैं।।११।।

इष्टोच्चबलानयन—

स्वनीचोनः खगः षड् भाधिकश्चोच्चक्रतस्त्यजेत्।
तदंशनवमो भागो ग्रहस्योच्चबलं स्मृतम्।।१२।।

अपने नीच राशि अंश को ग्रह के राश्यादि में घटावे, शेष यदि ६ राशि से अधिक हो तो फिर उसको १२ से घटाकर अंश बनावें, उसमें ९ का भाग दने से लब्धि उच्चबल होता है।।१२।।

उदाहरण— राश्यादि स्पष्ट सूर्य १०।१५।२४।१४ में सूर्य के नीच राशि अंश ६।१० को घटाने से शेष ४।५।२४।१४ यह ६ राशि से अल्प है इसलिये इसी के अंश १२५।१४ में ९ का भाग देने से लब्धि १३।५६ उच्च बल हुआ। इसी प्रकार सब ग्रह का उच्च बल बनाना।

पञ्चवर्गीबलम्—

त्रिंशत्स्वभे विंशतिरात्मतुङ्ग हद्दऽक्षचन्द्रा दशकं दृकाणे।
नवांशके पञ्चलवाः प्रदिष्टा विंशोपका वेदलवैः प्रकल्प्या।।
स्वस्वाधिकारोक्तबल सुहृद्धे पार्दानमर्धं समभेऽरिभैंघ्रिः।
एवं समानीय बलं तदैक्ये वेदोद्धृते हीनबलः शरोनः।।१४।।
पञ्चाल्पो हीनवीर्यः स्यादधिको मध्य उच्यते।
दशाधिको बली प्रोक्तः पञ्चवर्गीबलादिके।।१५।।

स्वराशि में ३०, उच्च में २०, स्वहद्दा में १४, स्वद्रेष्काण में १०, स्वनवांश में ४ ग्रहों काबिल होता है। पाँचों बल के योग का चतुर्थांश विंशोपक कहलाता है। अपने-अपने अधिकार (गृहादि) में जो बल कहा गया है उसका चतुर्थांशोन मित्र की राशि में, सम की राशि में आधा, शत्रु की राशि में चतुर्थांश बल होता है। इस प्रकार गृहादि पञ्चवर्गीबल के योग को ४ राशि से भाग देने से ५ से अल्प हो तो ग्रह हीनबल होता है। ५ से अधिक १० के भीतर हो तो मध्यबली, १० से अधिक हो तो बली होता है।।१४-१५।।

वर्षपत्र लिखने की रीति—

आदित्यादिग्रहाः सर्वे नक्षत्राणि च राशयः।
दीर्घमायुः प्रकुर्वन्तु यदीया वर्षपत्रिका।।१६।।

शुभसाके १८५२, विक्रमसंवत्सरे १९८७ सताब्दे १९३८ चैत्रशुक्ल सप्तम्यां दण्डादि २९।५० मृगशिरानक्षत्रे दं. ३२.२८ सौभाग्ययोगे दं.५१।८ गरकरणे दं. ०।४८ गुरुवासरे श्रीसूर्योदयादिष्टधट्यादिषु ४५।५१ धनुलग्नोदये शुभावलोकिते शुभसमये बाबू श्री जगन्नाथशर्ममहोदयस्य विजयप्रदवर्षप्रवेशः। गताब्दाः ३१ दिनमानम् ३०।१६ रात्रिमानम् २९।४४ भयातम् १३।३२ भभोगः ५८।४७ सुभम्।।१६।।

चैत्रशुक्ल ७ गुरुवार सूर्योदय से इष्ट घटी पल ४५।५१ में स्पष्ट ग्रह बनाना है तो पञ्चांग में समीप की पंक्ति ८ अष्टमी शुक्रवार में ग्रह बना है। इसलिये पंक्ति के दिनादि (ऋणचालन) ०।५।९।१९ हुआ। सिसे रवि की गता ५९।२३ को गोमूत्रिका विधि से गुणा करके ५८।४१ इसमें ६० का भाग देने से अंशादि ०।५।८।४१ इसको गतिदिनादि (ऋणचालन) होने के कारण पंक्ति के सूर्य ११।१३।१०।५९ से घटाने से ११।१२।२२।१८ यह इष्टकालिक सूर्य हुआ। इसी प्रकार चालन से मंगल आदि ग्रहों की गति को गुणा कर ६० का भाग देकर लब्ध अंशादि फल को मंगल आदि ग्रहों में घटाने से इष्टकालिक मंगलादि स्पष्ट हो जायगा। चक्र देखो।

जन्मलग्नम्

श. ९ | ७ | च. १० | रा.गु. ८ | ६ | ११ मं. | ५ | १२ र.बु. | २ के. | ४ | १ शु. | ३

वर्षलग्नम्

१० | ८ | ११ शु. | ९ श. | ७ | बृ.र १२रा. | ६ के. | १ | ३ चं. गु. | ५ | २ | मं ४

तात्कलिक (इष्टकालिक) स्पष्टग्रहादि बनाने का उदाहरण—

पं. चैत्रशुक्ल ८ शुक्रे मि. मा. ४५।१०

	सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु
ग्रहादिस्थति	११	X	३	११	२	१०	८	११
	१३	X	५	२६	१८	३	२७	२४
	२०	X	५१	४	१९	०	३१	११
	५९	X	३	३	१८	१९	३४	५८
गति	५९	X	१०	१३	४	७०	३	३
	२३	X	१७	२९	६	५५	४३	११

इस प्रकार वर्षेष्टकालिक स्पष्ट ग्रह चक्र—

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	
११	२	३	११	२	१०	८	
१२	९	५	२४	१८	१	२७	२४
२२	५२	४	३१	१५	५०	२७	१५
१८	११	५३	३८	१५	१२	४४	१

तात्कालिक चन्द्र साधन का उदाहरण इसी ग्रन्थ में देखिए।

'मित्रं त्रिकोणत्रिभवस्थिरस्चोत्' इत्यादि श्लोकानुसार मित्रंसम-शत्रु चक्र का उदाहरण—

इसी पुस्तक के पृष्ठ २७२ में वर्ष कुण्डल में देखिए, सूर्य से मित्रस्थान (५।९।३।११) में केवल मङ्गल है, इसलिये केवल मंगल सूर्य का मित्र हुआ। तथा समस्थान (२।६।८।१२) में केवल शुक्र है इसलिये शुक्र सूर्य का सम हुआ। तथा सूर्य से शत्रु स्थान (१।४।७।१०)

में चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति हैं इसलिये वे चारों इनके शत्रु हुए। इसी प्रकार हर एक ग्रह से मित्रादि का विचार करना। नीचे चक्र देखिए—

मित्र-सम-शत्रु चक्र—

ग्रह	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
						चं.बृ.	
मित्र	मं.	शु.	बु.सू.	मं.	शु.	श.	शु.
			शु.गु.			सू.मं.	
सम	शु.	मं.	श.चं.	शु.	मं.	बु.	मं.
	चबु.	बु.बृ.		सू.मं.	सू.बु.		सू.च.
शत्रु	बृ.श.	श.सू.	०	बृ.श.	श.चं.	०	बु.बृ.

अथ पञ्चवर्गीबल विचार—

इसी प्रकार लिखित श्लोकानुसार सूर्य बृहस्पति के गृह में हैं, बृहस्पति सूर्य का शत्रु है इसलिये गृहबल (३०) का चतुर्थांश (७।३) यह गृहबल हुआ। तथा हद्दा चक्रानुसार सूर्य गुरु के हद्दा में है, गुरु सूर्य का शत्रु है इसलिये हद्दा बल (१५) के चतुर्थांश ३।४५ सूर्य का हद्दा का बलं हुआ। सूर्य मीन् के दूसरे द्रेष्काण में है, दूसरा द्रेष्काण चन्द्रमा का है, चन्द्रमा सूर्य का शत्रु है, इसलिये द्रेष्काण बल (१०) का चतुर्थांश २।३० द्रेष्काण बल हुआ। तथा सूर्य शुक्र के नवमांश में है, शुक्र सूर्य का सम ह इसलिये नवाश बल (५) का आधा २।३० नवाश् बल हुआ। तथा उच्च बल के लिए स्पष्ट सूर्य ११।१२।२२।१८ में सूर्य के नीच राश्यंश ६।१० घटाकर शेष ५।२।२२।१८ के अंश १५२।२८।१८ का नवमांश १६।५६ यह सूर्य का उच्च बल हआ। सब बल का योग ३३।११, इसका चतुर्थांश ८।१८ वर्ष विंशोपक बल हु। इसी प्रकार चन्द्रादि ग्रहों के पञ्चवर्गी बल विचार करना चाहिये। चक्र देखिए—

वर्षेश बृहस्पति का फल—

जीवेब्दपे बलयुते परिवारसौख्यं धर्मो गुणग्रहिलता धनकीर्तिपुत्राः।
विश्वास्यताजगति सन्मतिविक्रमाप्ति र्लाभो निथेर्नृपतिगौरवमप्यरिघ्नम्।।

स्पष्टार्थ। इस प्रकार और सब फल नीलकण्ठी आदि से कहना। इति दिक्।।

पञ्चवर्गी बल चक्र—

ग्रह	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
गृह	७।३०	७।३०	१५।०	७।३०	७।३०	२२।३०	७।३०
हद्दा	३।४५	११।१५	१५।०	११।१५	७।३०	१५।०	१५।०
द्रेष्काण	२।३०	२।३०	५।०	१०।०	१०।०	७।३०	२।३०
नवांश	२।३०	११।१५	५।०	१।१५	५।०	५।०	१।१५
उच्च	१६।५६	१५।१५	२।२८	१।३३	१।१	१३।५२	२।३०
योग	३३।३१	३८।२५	४२।१	३०।५३	१४।१	६३।५२	११।४५
विंशो.	८।१८	९।३६	१०।३२	७।४३	१।२।२	५।१।१	९।४१

जन्मलग्नेश = मंगल। वर्षलग्नेश = बृहस्पति।

मुन्थेश = बुध। त्रिराशीश = शनि। चन्द्रराशीश = बुध।

इन पञ्चाधिकारियों में सब से बली बृहस्पति को देखते हैं। इसलिये बृहस्पति वर्षेश हुए।

अथ मुद्दादशा—

जन्मर्क्षसंख्यासहिता गताब्दा नेत्रोनिता नन्दहृतावशेषात्।
आचंकुराजीशबुकेशुपूर्वा मुद्दादशाः स्युः किल वर्षवेशे।।

जन्म नक्षत्र को गतवर्ष में जोड़कर २ घटावे, उसमें ९ का भाग देने से १ आदिं शेष में क्रम से सूर्य, चन्द्र, कुज, राहु, गुरु, शनि, बुध, केतु, शुक्र इनकी मुद्दादशा होती है।

मुद्दादशा चक्र—

ग्रह	सू.	चं.	मं.	रा.	वृ.	श.	बु.	के.	शु.
मास	०	१	०	१	१	१	१	०	२
दिन	१८	०	२१	२४	१८	२७	२१	२१	०

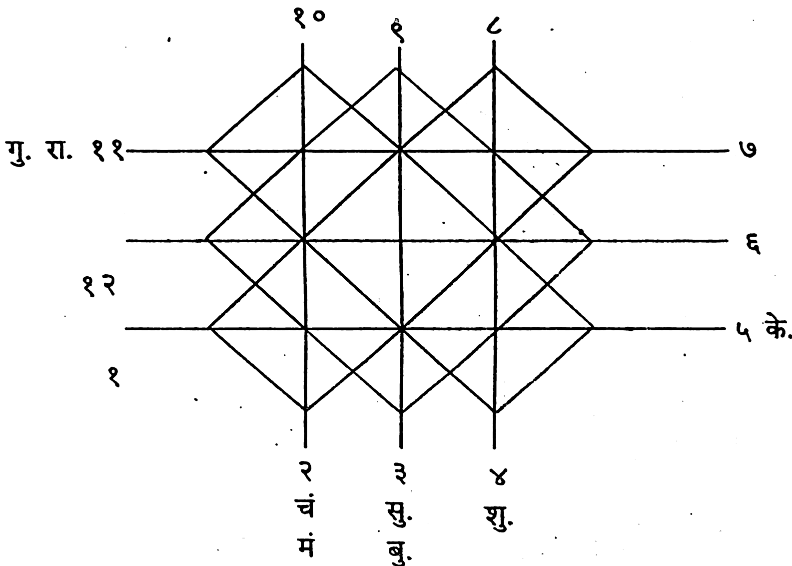
अथ त्रिपताकि चक्र विचार—

न्यसेभ्दचक्रं किल तत्र सैकां याताब्दसंख्यां विभजेन्नभोगैः।
शेषोन्मिते जन्मगचंद्रराशेस्तुल्ये च राशौ विलिखेच्छशांकम्।।
परे चतुर्भाजितशेषतुल्ये स्थाने स्वराशेः शचराश्च लेख्याः।
शुभैश्च विद्धे हिमगौ शुभं स्यात् पापैश्च विद्धैर्हि शरीर पीड़ा।।

मध्यरेखाग्र में वर्षलग्न राशि लिखकर क्रमसे त्रिपताकिचक्र में १२ राशियों को लिखे। गतवर्ष में १ जोड़कर ९ का भाग देने से जो शेष बचे जन्मराशि से उतने संख्यक स्थान में चन्द्रमा को लिखे और ४ से भाग देकर शेष तुल्य राशि में जन्मकुण्डलीस्थ ग्रहस्थान से शेष ग्रहों को लिखे। चन्द्रमा शुभग्रह से विद्ध हो तो शुभ फल, पाप ग्रह से विद्ध हो तो शरीर में क्लेश होता है।

उदाहरण— गत वर्ष ३१ में १ जोड़कर ३२ में ९ का भाग देने से शेष ५ बचा, इसललिये जन्मकालिक चन्द्रराशि मकर से पञ्चम वृषराशि में चन्द्रमा हुआ और गत सैक गत वर्ष ४ का भाग देने से शेष अर्थात् ४ बचा, इसलिये जन्मकाललिक स्वस्वाश्रित राशि से चौथे-चौथे राशि में शेष सूर्यादिक ग्रह हुए। स्पष्टार्थ नीचे चक्र देखिए—

त्रिरपताकि चक्र—



३ रेखा खड़ी और ३ रेखा तिरछी लिखकर पुनः कोण से परस्पर दो दो रेखाओं में रेखा लगाने से त्रिपताकी चक्र बनता है। उसमें सामने बीच वाली रेखा में वर्ष लिखकर उसक्रम से १२ राशियों को लिखे, फिल गतवर्ष संख्या में एक जोड़कर (अर्थात् वर्तमान वर्ष संख्या मे) ९ के भाग देने से जो शेष बचे

जन्मकालिक चन्द्राश्रित राशि से उतनी संख्या में जो राशि हो उस राशि में जन्द्रमाको लिखे। तथा उसी सैक गतवर्ष संख्या में ४ के भाग देकर जो शेष बचे 'जन्मकालिक ग्रहाश्रित राशि से' उनी संख्या में जो राशि हो उसमें अन्य ग्रहों को लिखे, राहु और केतुको उल्टा गिनकर रखना चाहिये। इस प्रकार चक्रमें ग्रहों के न्यास करने से जहाँ चन्द्रमा हो वहाँ से निकली हुई ३ रेखाओं में किसी रेखाके दूसरे भाग में ग्रह हो तो जन्द्रमा को विद्ध समझना चाहिये। यदि शुभग्रह से चन्द्रमा को वेध हो तो वर्ष में शरीरादि सुख श्रेष्ठ और पापग्रह से वेध हो तो अशुभ फल समझना चाहये।

इस प्रकार त्रिपताकिचक्र में चन्द्रमा किसी ग्रह से विद्ध नहीं है, इसलिये शुभाशुभ फल देने में सामान्य हुआ।



अथ नवग्रहमन्त्राः

सूर्यस्य वैदिकमन्त्रः—

ॐ आकृष्णेन रजसा वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यञ्च।
हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्।।
तान्त्रिक मन्त्रः—ॐ घृणि सूर्याय नमः।।

चन्द्रस्य वैदिक मन्त्रः—

ॐ इमं देवाऽअवपत्न गुँ सुवध्वं महते क्षत्राय महते ज्येष्ठयाय महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय। इमममुष्य पुवममुष्यै व्विश ऽएव वोऽमो राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना गुँ राजा।।
तान्त्रिकमन्त्रः—ॐ सों सोमाय नमः।।

कुजस्य वैदिकमन्त्रः—

ॐ अग्निर्भूर्धा दिवः पृथिज्या ऽप्रयमु। अपागुँ रेवा गुँ जिन्वति।।
तान्त्रिक मन्त्रः—ॐ अं अङ्गारकाय नमः।।

बुधस्य वैदिकमन्त्रः—

ॐ उद्बुध्यस्वाग्वे प्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्ते सगुँ सृजेथामयञ्च। अस्मिन्त्सधत्स्थेऽपघ्युत्तरस्मिन् विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत।
तान्त्रिकमन्त्रः—ॐ बुं बुधाय नमः।।

पुरुष के जन्मलग्न में ग्रहों का भावफल चक्र

	सूर्य	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	श.रा.के.
१ तनु	शरीर पीडा	सुख	रक्तविकार	सुख	कान्ति मान	सुख	दु:ख
२ धन	क्रोध धनहा	अतिलाभ	दु:ख	अतिलाभ	धनलाभ	लाभ	धन का लाभ
३ सहज	नीरोगता	निर्दय	क्रोधी दु:खी	धनवृद्धि		कृश कामो	स्त्रियों का प्रिय
४ माता	अति कष्ट	सुखभोग	कष्ट	सुखयोग	सुखी	भोगी	अतिपीड़ा
५ सुत	दु:ख	अधिक पुत्र	सन्तान हानि	अल्पपुत्र	पुत्रवान्	पुत्रयुक्त	सन्तान हानि
६ शत्रु	शत्रुका नाश	रोगी	शत्रुनाश	बहुरोग	विकलता	बुद्धिहीन	शत्रुमान्य
७ स्त्री	स्त्री	सुन्दरी स्त्री	स्त्री नाश	सुन्दरी स्त्री	सुखी	चतुर	रोगी निर्धन
८ मृत्यु	रोगी	धर्मात्मा	दुष्टबुद्धि	अनिष्ट	पीड़ा	रोगी	क्लेशित
९ धर्म	अधर्मी	यशी	अधर्मी	धर्मरत	भाग्योदय	धर्मात्मा	दुष्टबुद्धि
१० कर्म	सुखी	धनलाभ	उपकारी	कीर्तिलाभ	सत्कर्म	धनवान्	सम्पत्ति - वान्
११ आय	राजमित्र	धनलाभ	लाभ	ज्ञानी	धनवृद्धि	गुणी	कीर्तिमान्
१२ व्यय	दुस्वभाव	नेत्रपीड़ा	पापी	निर्धन	दुर्बल	दु:खी कामी	आलसी

स्त्री के जन्मलग्न से ग्रहों का भावफल चक्र

	सूर्य	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	रा. के.
१ तनु	विधवा	अल्पायु	विधवा	पतिव्रता	पतिव्रता	पतिव्रता	दरिद्रा	पुत्रनाश
२ धन	दुःखी	पुत्रवती	दुःखिता	सौभा - ग्यवती	सौभाग्य	सौभाग्य - वती	दुःख	दरिद्रा
३ सहज	पुत्रवती	धनाढ्या	पुत्रिणी	धनवती	पुत्रवती	पुत्रवती	लक्ष्मी -वती	धनवती
४ सुहृद	दरिद्रा	दुर्भगा	अल्प- सन्तति	सुखी	सुखी	सुखी	स्वल्प - दुखी	पुत्रनाश
५ सुत	सन्तान नाश	कन्या- धिका	पुत्र - मरण	उत्तम फलप्रा	उत्तम सुख	उत्तम- सुखी	रोगिणी	मरण
६ रिपु	धनवती	विधवा	धन - युक्ता	क्लेश प्राप्ति	धनवती	दरिद्रा	धनवती	धनाढ्या
७ पति	रोगिणी	प्रवासिनी	स्वामि- नाश	क्षय	भयबंधन	भर्तु : प्रिया	वैधव्य	धनहानि
८ मृत्यु	विधवा	अतिकष्ट	धनवती	स्वजन वियोग	स्वजन वियोग	मरणम्	बहुत सन्तान	मरणान्त वि.
९ धर्म	धर्म निष्ठा	पुत्रवती	कर्म- कारिणी	उत्तम- भोग	धर्मवृद्धि	धर्मवृद्धि	बन्ध्या	बन्ध्या
१० कर्म	पापिनी	व्यभिचार	मृत्यु	धनवती	पति धन- वान हो	पति धनी हो	पापिनी	विधवा
११ आय	पुत्रवती	लक्ष्मीवती	पुत्रवंती	सुखी	आयुष्मती	पुत्रवती	धनवती	सौभाग्य- वती
१२ व्यय	अति- व्यय	दिबान्धा	बन्ध्या	सुपुत्र- वती	सुशीला	पतिव्रता	अति- व्यथा	व्यभि - चारिणी

वर्ष प्रवेश कालिक ग्रहों का भावफल

	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सूर्य	क्लेश चिन्ता	शोक	धन लाभ	भय हानि	रोग भय	सुख	स्त्रीकष्ट	कष्ट भय	धर्मक्ष	सुखअर्थ	सुख लाभ	उद्वेग पीड़ा
चन्द्र	कफ ज्वर	नेत्र पीड़ा धनलाभ	धन हर्ष	सुख	सुख सुमति	पीड़ा व्यय	ज्वर भय	कष्ट	पुण्य धन	सुख	यश धन	व्यय नेत्ररोग
भौम	वातात व्रण	मध्यम नेत्ररोग	धन	रोग भय	पुत्रार्ति	सुख	स्त्रीकष्ट	रोग	धन पुण्य	कर्मोदय	धन लाभ	व्यय नेत्रपीड़ा
बुध	सौख्य धन लाभ	धन लाभ	रोग नाश	सुख	सुत लाभ	भय स्त्री कष्ट	स्त्रीसुख	कष्ट	लाभ सुख	सुख धन	जय धन	विवाद व्यय
गुरु	सुख प्रा. अर्थ ला.	यश धन	धर्म धन	सुत लाभ	सुत सुख	कष्ट	स्त्री सुख	ज्वर	धर्म सुख	जय शुभ	जय लाभ	व्यय व्यथा
शुक्र	सुमान धन लाभ	धन लाभ	सहज सुख	कृषि लाभ	पुत्र सुख	विवाद कष्ट	स्त्रीसुख	कष्ट	धर्म धन	वस्त्र लाभ	धन लाभ	नेत्र रोग
शनि	रिपु नाश वात रोग	विरोध	धन भोग	गुप्त चिन्ता	सुत कष्ट	धन लाभ	स्त्रीकष्ट	कष्ट	भाग्य धन	धन हानि	धन लाभ	व्यय कष्ट
राहु केतु	शिर रोग कलह	भय पीड़ा	धन लाभ	कष्ट	बुद्धिनाश	शत्रुनाश	रोगभय	कष्टभय	धर्म नाश	लाभ सुख	अति सुख	कष्ट
मुंथा	धन यश	धन यश	सुख	रोग भय	पुत्र सुख	रोग भय	स्त्रीकष्ट	धन नाश	लाभ सुख	कार्य सिद्धि	सौभाग्य सुख	व्यय रोग

शात्यर्थं ग्रहों के दानपदार्थ और जपसंख्या ४०५५

सूर्य	चन्द्र	कुज	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु	मुंथहा
माणिक्य	वंशपात्र	प्रवाल	सूंग	घड़ा	चित्राम्बर	माष	गोमेद	बैडूर्य	वंशपात्र
गेहूँ	तण्डुल	गेहूँ	हरित वस्त्र	चीनी	श्वेत अश्व	तिल	रत्न	तिल कम्बल	तण्डुल
धेनु	कर्पूर	मसूर	कांस्य	हल्दी	धेनु	तैल	अश्व	कस्तूरी शस्त्र	रक्तवस्त्र
कुसुम	मौतिक	ताम्र वस्त्र	मृगमद	पीतधान्य	हीरा	कुलथी कृष्णगौ	नीलवस्त्र	कृष्णवस्त्र	मोदक
गुड़	श्वेतवस्त्र	गुड़	घृतदासी	पीतवस्त्र	रौप्य	महिषी लोह	कम्बल अभ्रक	तैल छाग	लाक्षाभरण
ताम्रपात्र रक्तपुष्प	वृष रौप्य	सुवर्ण	पञ्चरत्न	पुष्पराग	सुवर्ण	श्याम वस्त्र	तिल	कृष्ण पुष्प	सघृत कांस्यपात्र
रक्तवस्त्र सुवर्ण	घृत कुम्भ	कनेर	हस्तिदन्त	लवण कांचन	सुगन्ध घृत	इन्द्रनील	तैल लोह	लोह पात्र	सुवर्ण
जप ७०००	जप ११०००	जप ७०००	जप ८०००	जप १९०००	जप १६०००	जप २३०००	जप १८०००	जप १००००	जप

जीवस्य वैदिकमन्त्रः—

ॐ बृहस्पतिऽअति यदर्योऽअर्हाद् द्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु। यहीदयच्छवस ऋत प्रजाततदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम्।।

तान्त्रिकमन्त्रः—ॐ बृं बृहस्पतये नमः।।

शुक्रस्य वैदिकमन्त्रः—

अन्नाता परिस्नुतोरसं ब्रह्मणाव्यपिबत् क्षत्रं पयः सोमं प्रजापतिः। ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपान गुँ सुक्रमन्धस ऽइन्द्रस्येन्दियमदं पयोमृतं मधु।।

तान्त्रिकमन्त्रः—ॐ शुं शुक्राय नमः।।

शनेर्वैदिकमन्त्रः—

ॐ शन्नो देवीरभिष्टय ऽआपो भवहतु पीतये शँयोरभिस्रवन्तु नः।।

तान्त्रिकमन्त्रः—ॐ शं शनैश्चराय नमः।।

राहोर्वैदिकमन्त्रः—

ॐ कयानश्चत्र ऽआभुवर्दूत सदावृधः सखा। कया साचिष्ठयावृता।।

तान्त्रिकमन्त्रः—ॐ राँ राहवे नमः।।

केतोर्वैदिकमन्त्रः—

ॐ केतुं कृण्वन्न केतवे पेशो मर्याऽपेशसे। स्मुषद्भिरचायथाः।।

तान्त्रिकमन्त्रः—ॐ कें केतवे नमः।।

इति नवग्रहमन्त्राः।।



अथ महामृत्युञ्जयमन्त्रः—

ॐ ह्रौं ॐ जुँसः भुर्भुवःत्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मु क्षीय माऽमृतात् भूर्भुवःस्वरों जुँ सः ह्रौं ॐ।।

लघुमृत्युञ्जयमूलमन्त्रः—(ॐ जुँ सः)

जपार्थे संङ्कल्पः

ॐ अद्यामुकमासेऽमुकपक्षेऽमुकतिथौ 'अमुक' गोत्रस्य 'अमुक' शर्मणो जन्मकालिकजन्मलग्नापधिक 'अमुक' स्थानस्थित 'अमुक' ग्रहसंसूचितसकलारिष्टझटितिप्रशमनपूर्वकदीर्घायुष्यबलपुष्टनैरुज्य-प्राप्तिकामेऽद्यारम्भ स्थकालं माध्यन्दिनीयशाखान्तर्गत 'अमुक' इतिमन्त्रस्य यथासंख्याकजपरूपपुरश्चरणमहं करिष्ये।

यहाँ 'अमुक' के स्थान में जो नाम आदि हो उसका उच्चारण करना चाहिये।

।।अथ अद्भुत प्रकरण।।

(१) घर पर गृध्र आदि पक्षी बैठने का फल—

गृध्रः कङ्कः कपोतश्च उलूकः श्येन एव च।
चिल्लश्च चर्मचिल्लश्च भासः पाण्डर एव च।।१।।
गृहे यम्य पतन्त्येते गृहं तस्य विपद्यते।
पक्षान्मासात्तथा वर्षान्मृत्युःस्याद् गृहमेधिनः।।२।।

गीध, कंक, कबूतर, उल्लू, बाज, चिल्ल, भास, पाण्डर पक्षी, अचानक (अदभुतरुप से) किसी के घर पर बैठें तो उस मनुष्यको घर में अनिष्टफल होता है।।१-२।।

यदि पूर्वगृहे चैव गृध्रश्चोपविशेत्तदा।
धनस्य नाशमाप्नोति याम्ये चैव धनागमः।।३।।
पश्चिमे भवने चैव किञ्चित् क्लेशमवाप्नुयात्।
उत्तरे च महापीडा कोणभागेऽल्पकं फलम्।।४।।
यदा च पूर्वाभिमुखो गृहोपरि विशेत्स्वतः।
तदा पीडाकरो नैव दक्षिणाभिमुखो महत्।।५।।
पश्चिमाभिमुखश्चैव नृणां भयमुपादिशेत्।
उत्तराभिमुखे चैव षरां चिन्तामवाप्नुयात्।।६।।

अष्टभागं गृहं कृत्वा तत्फलं संविचारयेत्।
पूर्वभागे मनोद्विग्नं दक्षिणे धनमाप्नुयात्।।७।।
पश्चिमे धनचिन्ता स्यादुत्तरे पशुहानिकृत्।
आग्नेय्यामग्निभयदा नैर्ऋते भूमिलाभदः।।८।।
वायव्ये शस्यनाशः स्यादैशान्यां महती व्यथा।
मध्येभागे यदा वासस्तदा भयमुपागतम्।।९।।
अकारणाद्यदा वासस्तदैतत्फलमाप्नुयात्।
कारणादल्पदोषः स्यान्मुख्यशालां विशेषतः।।१०।।

यदि पूर्वभाग के घर पर गृध्र बैठे जाय तब धन का नाश होता है, और दक्षिण भाग के घर पर बैठने से धन का आगम होता है। पश्चिम भाग के घर पर बैठने से किञ्चित क्लेश, और उत्तर भाग के घर पर बैठने से महापीड़ा होती है। तथा कोण भाग के घर पर बैठे तो अल्प फल होता है। यदि स्वतः (स्वयं आकर) गृह पर पूर्वाभिमुख करके बैठे तो अनिष्ट फल नहीं देता है, किन्तु दक्षिणाभिमुख बैठने से और उत्तराभिमुख होने से अत्यन्त चिन्ता देनेवाला होता है। पुनः घर को अष्टभाग (आठ भाग) करके उसका फल विचारना चाहिये। उसमें पूर्वभाग बैठने से मन में उद्विग्न, दक्षिण भाग बैठने पर धनका आगम और पश्चिम भाग में बैठे तो धन चिन्ता, उत्तर में पशु नाशकारक होता है। तथा अग्निकोण में बैठने से अग्निभय, नैर्ऋत्यमें भूमिलाभ, वायु कोण में बैठने से धान नाश और ईशान कोण से बैठने पर महान् दुःख देनेवाला होता है, किन्तु ये फल कारण बिना बैठने से ही समझना चाहिये। और किसी कारण वश आकर बैठ जायें तो अल्प दोष कहा गया है और प्रधान घर के लिये विशेषकर है। कारण यह है कि घर के समीप में मरे हुए पशु आदिका मांस हो या घर के समीप में गृध्र आदि का निवास हो इस कारण के वश यदि घर पर आकर के बैठे तो अनिष्ट फल नहीं समझना चाहिये।।३-१०।।

गृध्र आदि पक्षी को शान्ति पक्षी की शान्ति इस प्रकार है-

शान्ति करने से पूर्वदिन में (शनिवार को) एक वार निरामिष भोजन करके, अगले दिन (रविवार को) पीला वस्त्र पहन करके शान्ति करे। जैसे पहले चिकनी सफेद मिट्टी से घर को लीपकर पञ्चगव्य से सींवाकर पुनः गङ्गा जल से सींवाकर पूजा प्रारम्भ करे। प्रथम पञ्चदेवता विष्णु की पूजाकर गणेश लक्ष्मी पृथिवी, वास्तु पुरुष दशदिक्पाल, नवग्रह की पूजा करे फिर १००८ एक हजार आठ शनि के मन्त्र (शंनो देवी० इत्यादि) तथा सूर्य के मंत्र (आकृष्णेन

रजसा० इत्यादि) के संकल्प द्वरा होम करे अथवा दशहजार वैदिक सूर्य के मंत्र (आकृष्णेन रजसा० इत्यादि) के आक (मदार) की लकड़ी में घृत लगाकर आम की लकड़ी की अग्नि में होम करके पुनः होम संख्या के दशांश तर्पण और तर्पण के और तर्पण के दशांश मार्जन करे और यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन करावे। होम करने में अशक्त हो तो होम की संख्या से द्विगणित उक्त मन्त्र के जाप करना या करवाना चाहिये अथवा १ लाख पार्थिव शिव लिङ्गका पूजन वा-शतचण्डो पाठ करा करके ब्राह्मण भोजन करावें अथवा महामृत्युञ्जय मन्त्र का जा करे या करावे तो अनिष्ट फल का नाश हो कर शुभलाभ होता है।

यथा—

एवं तु क्रियमाणो वै नानिष्टफलभाग्भवेत्।
विभवो नास्ति यस्यापि तत्स्थानं संत्यजेत्स्वतः।।
तद्गृहं च परित्यज्य सर्वान् कामानवाप्नुपात्।।इति।।

अथ त्रीतरशान्तिमाह, गर्गः—

सुतत्रये सुता चेत् स्यात्तत्रये वा सुतो यदि।
मातापित्रोः कुलस्यापि तदाऽनिष्टं महद् भवेत्।।
ज्येष्ठनाशो धने हानिर्दुःखं वा सुमहद् भवेत्।
तत्र शान्तिं प्रकुर्वीत वित्तशाठ्यविवर्जितः।।
जातस्यैकादशाहे वा द्वादशाहे शुभे दिने।
आचार्यमृत्विजो वृत्त्वा ग्रहयज्ञपुरः सरम्।।
ब्रह्मविष्णुमहेशेन्द्रप्रतिमाः स्वणतः कृताः।
पूजयेद्धान्यराशिस्थकलशोपरि शक्तितः।।
पञ्चमे कलशे रुद्रं पूजयेद्रुद्रसंख्यया।
रुद्रसूक्तानि चत्वारि शान्तिसूक्तानि सर्वशः।।
आचार्यो जुहुयात्तत्र समिदाज्यं तिलांश्चरुम्।
अष्टोत्तरसहस्त्रं वा शतं वा त्रिशतं तु वा।।
देवताभ्यश्चतुर्वक्त्रादिनभ्यो ग्रहपुरःसरम।
ब्रह्मादिमन्त्रैरिन्द्रस्य यत इन्द्रभयामहे।।
ततः स्विष्टकृतं हुत्वा बलि पूर्णाहुतिं ततः।
अभिषकं कुटुम्बस्य शान्तिपाठं तु कारयेत्।।

ब्राह्मणान् भोजयेच्छक्त्य दीनानाथांश्च तर्पयेत्।
कृत्वैवं विधिना शान्तिं सर्वारिष्टाद्विमुच्यते।।
कांस्यपात्रं शार्कराज्यपलैः षोडशमानतः।
ब्राह्मणेभ्यः प्रदातव्यं शुभ भवति नान्यथा।।

३ कन्या के बाद पुत्र का या ३ पुत्र के बाद कन्या का जन्म हो तो त्रीतर कहलाता है। अर्थ स्पष्ट है।

अथ यमलजननशान्तिः काशीखण्डे—

त्रिविधा यमलात्पत्तिर्जायते योषितामिह।
सुतौ च सुतकन्ये वा कन्ये वाऽपि तथा पुनः।।
एकलिङ्गौ विनाशाय द्विलिङ्गौ मध्यमो स्मृतौ।
पित्रोविघ्नकरौ ज्ञेयौ यत्र शान्दीर्विधीयते।।
हेमहूर्तो विधाव्ये दस्त्रयोश्च द्विजोत्तम।
पलेन वा तदर्द्धेन तदर्द्धार्धेन वा पुनः।।
ब्रह्मवृक्षस्य पट्टे च स्थापयेद्रक्तवाससी।
स्वस्तिके तण्डुलानां च न्यस्ते पीठे द्विजोत्तमम्।।
पूजयेद्रक्तपुष्पैश्च चन्दनेनाविलेपयेत्।
दशाङ्गेनैव धूपेन धूपयेत प्रयतः पुमान्।।
दीपैर्नीराजनञ्चैव नैवेद्यं परिकल्पयेत्।
यस्मैत्वसुकृते जातवेद इति मन्त्रेणाक्षतैरर्चयेत्।।
अनेनैव तु मन्त्रेण होमं कुयोदतन्द्रितः।
अष्टोत्तरसहस्त्रं च पायसेन ससर्पिषा।।
शान्तिपाठं जपेद्विद्वान् सूर्यसूक्तं जेपत्ततः।
विष्णुसूक्तं तथा गाथां वैश्वदेवीं जपेद्बुधः।।
अश्वदानं ततो दद्यादाचार्याय कुटुम्बिने।
तयोर्मूर्ती प्रदातव्ये यजमानेन धीमता।।

तत्र दानमन्त्रः—

अश्वरूपौ महाबाहु अश्विनौ दिव्यचक्षुषौ।
अनेन वाजिदानेन प्रीयेतां मे यशस्विनौ।।

मूर्तिदानमन्त्रः—

आचार्यः प्रथमे वेधा विष्णुस्तु सविता भगः।
दस्रमूर्त्तिप्रदानेन प्रीयेतागश्विनौ भगः।।
ततोऽभिषेचनं कार्यं दम्पत्योर्विधिवद् बुधैः।
ब्राह्मणान् भोजयेत्पश्चाद् दक्षिणाभिश्च तोषयेत्।।
सालङ्कारैश्च वस्त्रैश्च प्रार्थयेद्वचनैः शुभैः।
एवं कृते विधानेन यमलोत्पत्तिशान्तिकम्।।इति।।

अथ षोडशाब्दगर्भधारणशान्तिः राजमार्त्तण्डे—

षोडशाब्दे गर्भधरावाष्टममासप्रसूतिका।
उभयोर्मरणं वाच्यं सत्याचार्यः प्रभाषते।।
अब्दे पञ्चदशे गर्भे प्रसवः षोडशेऽपि वा।
दम्पत्योर्हि विनाशः स्यादेकस्मिन्नेकनाशनम्।।
षोडशाब्दगता नारी भवेद्गर्भसमन्विता।
अग्रतो म्रियते माता पश्चात् पुत्रो विनश्यति।।

तत्प्रतीकारश्च—

दद्यात् गर्भवतीं छागीं वस्त्रालङ्कारभूषिताम्।
पुंसवनविधानेन संक्रमे शिवसन्निधौ।।
गौरीं सुसभ्यक् सम्पूज्य काञ्चनीं कांस्य भाजने।
दासीं गर्भवतीं दद्याद् दैवज्ञाय च गोयुताम्।।

अथ पञ्चाङ्गोपयोगी विषय

वर्तमान संवत्सर के भुक्तभोग्य समय और प्रभवादि नामज्ञान

शक्राक्षेन्दुवियुक् शको नगगुणः शून्यम्बराङ्गोद्धृत-
माद्यं लब्धमिताब्द वेददहनाढ्यं साब्दभूपेन्दुतः।।

दिग्‌भागाप्तकलायुतं प्रभवतोऽब्दाः षष्टितष्टाः स्मृताः।
शेषांशा रविभिर्हता दिनमुखं मेषार्कतः प्राग्भवेत्।।

जिस शाके में प्रभवादिसंवत्सर का नाम और भुक्तभोग्य समय जानना हो उस शाके संख्या में १५१४ घटाकर शेष को गतवर्ष माने उसको ७ से गुणा करे, गुणनफल में ६०० के भाग देकर लब्धि को राश्यादि समझे, उसमें गतवर्ष और ३४ जोड़कर पृथक् रक्खे। पुनः ११६ में गतवर्ष संख्या जोड़कर (योग में) १० के भाग देकर लब्धि कलादि फलको-पूर्व लब्धराश्यादि में जोड़कर उसमें ६० के भाग देने से शेष राशि प्रभव आदि गत वर्ष समझे, तथा शेषअंशादि को १२ से गुना करने से गुणनफल दिनादि होता है। दिन में ३० के भाग देकर मासादि बना लेना तो वह वर्षमान (३६० दिन) में घटाने से वर्तमान संवत्सर के मासादि मान समझना चाहिये। सूक्ष्ममान जनने के लिये वर्षमान दिनादि ३६१।२।३।४५ ग्रहण करना और उसी से अतिचार और महातिचार का भी विचार करना चाहिये।

उदाहरण- शाके १८८२ में १५१४ घटाने से शेष ३६८ यह गतवर्ष हुआ इसको ७ गुणा करने से २५७६ इसमें ६०० के भाग देने से लब्धि ४ शेष १७६ को ३० से गुणाकर ५२८० इसमें ६०० के भाग से लब्धि अंश ८, शेष ४८७० को ६० से गुणाकर २८८० इसमें पुनः ६ से भाग देकर ४८ कला एवं लब्धि राश्यादि ४।८।४८।० इसमें गतवर्ष ३६८ और ३४ जोड़ने ४०६।८।४८।० इसको पृथक् छोड़ दिया। और गतवर्ष ३६८ में ११३ जोड़कर ४८४ में १० के भाग देने से लब्धि कलादि ४८।२४ को पृथक् रक्खे हुए योगफल ४०६।८।४८।० के कलादि में जोड़ने से ४०६।९।३६।२४ राशिस्थान में ६० के भाग से शेष ४६ गत संवत्सर ४६ वाँ परिधावी और वर्तमान प्रमादी नाम संवत्सर हुआ। शेष अंशादि ९।३६।२४ को १२ से गुणा करने से दिनादि ११५।१६।४८ इसको मासादि बनाने से ३।२४।१६।४८ यह प्रमादी संवस्तर का मेषार्कसक्रान्ति से गत मासादि इसको वर्षमान में घटाने शेष भोग्य मासादि हुआ ८।४।४६।१२ ।।

वर्षेश मंत्री-आदि के ज्ञान—

चैत्रादि - मेषादि - कुलीरतीलि - मृगाननार्द्राधनुरादिवाराः।
राजचमू-चस्य-रसाधिपाश्च स्युर्नीरसेशाम्बुधि-धान्यनाथाः।।

चैत्रशुक्ल प्रतिप्त् उदयकाल में (वर्षारम्भ) में जो वार हो वही राजा, मेषार्क संक्रान्ति में जो वार हो वह मन्त्री, कर्कार्क संक्रान्ति में जो वार हो वह पूर्व धान्येश, तुलार्कसंक्रान्ति में जो वार हो वह रसेश, सिंहार्क संक्रान्ति में जो वार हो वह नीरसेश, आर्द्रा प्रवेशार्क में जो वार हो वह मेघपति, और धनुसंक्रान्ति में जो वार हो वह पश्चिम धान्येश होता है।

वर्ष में मेघ के नाम का ज्ञान—

त्रिभिः शकाब्दाः सहिताश्चतुर्भिः शेषं भवेदम्बुपतिः क्रमेण।
आवर्त - संवर्तक - पुष्कराश्च द्रोणश्चतुर्थो मुनिभिः प्रदिष्टः।।

जिस शाके में मेघ का नाम जानना हो उसमें ३ जोड़कर ४ के भाग देने से १ शेष में आवर्तक, २ में संवर्तक, ३ में पुष्कर और ४ शेष में द्रोण नामक मेघ समझना।

उदाहरण- शाके १८८२ में ३ जोड़ने से १८८५ इसमें ४ के भाग देने से १ शेष बचा इसलिये आवर्तक नाम का मेघ हुआ।

मेघों के फल—

आवर्ते छिन्नवृष्टिः स्यात् संवर्ते जलपूरिता।
पुष्करे मन्दवृष्टिः स्याद्द्रोणो वर्षति सर्वदा।।

जिस वर्ष आवर्तनाम का मेघ हो उस वर्ष में खण्डवृष्टि संवर्तनामक मेघ हो तो पृथ्वी जल से पूरित होती है, पुष्करनामक मेघ हो तो अल्पवृष्टि होती है और द्रोणनामक मेघ हो तो सब नक्षत्रों में वर्षा होती है। शाके १८८२ में आवर्तनामक मेघ होने के कारण खण्डवृष्टि समझनी चाहिये।

वर्षा-धान्यादि विंशोपक (विश्वा) जानने का प्रकार—

शाकस्त्रिनिघ्नो नगमानितश्च शेषं त्रिनिघ्नं शरसयुतश्च।
लब्धं च शाकं परिकल्प्यतस्मात् पूर्वोक्तवत्स्युः खलु विश्व काख्याः।
वर्षा-च धान्यं तृण-शीत - तेजा वायुश्च वृद्धिक्षयविग्रहाश्च।।

वर्ष में वर्षा आदि के विंशोपक जानना हो तो इस वर्ष की शकसंख्या को ३ से गुणा करके ७ के भाग देकर, लब्धि को अलग रक्खे, शेष को ३ से गुणा कर ५ जोड़ देने से वर्षा-विंशोपक होता है। तथा अलग रक्खे हुये लब्धि को पुनः शक, कल्पना करके पूर्ववत् क्रिया करने से क्रम से धान्य, तृण, शीत, तेज, वायु, प्रजावृद्धि, प्रजाक्षय और विग्रह विंशोपक होते हैं।

शकस्त्रिनिघ्नो नगभाजितश्च शेषं द्विनिघ्नं शरसंयुतश्च।
लब्धं च शाकं परिकल्प्य तस्मात् पूर्वोक्तवत् स्युःकिल विश्वकाख्याः।।
वर्षा च धान्यं तृण-शीततेजो वायुश्च वृद्धि- क्षयविग्रहाश्च।

जिस शाके में वर्षा आदि के विंशोपक जानना हो उस शाक संख्या को ३ से गुणा करके गुणनफल में ७ के भाग देकर लब्धि को पृथक् रखना, शेषको २ से गुणा करके ५ जोड़ने से वर्षा का विंशोपक (विश्वा) समझना। पुनः पृथक रक्खे हुए लब्धि को शाक कल्पना करके पूर्वोक्त क्रिया करने से क्रम से धान्य, तृण, शीत, उष्ण, वायु, प्रजावृद्धि, प्रजाक्षय, और विग्रह के विंशोपक (प्रतिबीस) संख्या होती है।

उदाहरण- शाक १८८२ को ३ से गुणा करने से ५६४६ इसमें ७ के भाग देने से लब्धि ८०६, शेष ४ को २ से गुणा कर ५ जोड़ने से १३ यह वर्षा विंशोपक हुआ। पुनः लब्धि ८०६ को ३ से गुणा करने से २४१८ इसमें ७ के भाग देने से द्वितीय लब्धि ३४५, शेष ३ को २ से गुणाकर ५ जोड़ने से ११ यह धान्यका विंशोपक हुआ। पुनः द्वितीय लब्धि ३४५ को ३ से गुणा करने से १०३५ इसमें ७ के भाग से लब्धि ४४, शेष ६ को २ से गुणा करके ५ जोड़ने से १७ यह तृणविंशोपक हुआ। पुनः तृतीय लब्धि १४७ इत्यादि पर से पूर्ववत् क्रिया करने से शीत ५, वायु १३, प्रजावृद्धि १५, प्रजाक्षय १५, विग्रह ११ हुए।

शाक वर्ष में मेषादिराशियों के आय व्यय—

स्वस्वामिवर्षाधिपवत्सरैक्यं त्रिघ्नं शराढ्यं तिथिभक्तशेषम्।
आयोऽथ लब्धिस्त्रिगुणा शराढ्या तिथ्युद्धता शेषमितो व्ययः स्यात्।।

अपनी जन्मराशि के स्वामी और वर्षेश की दशावर्ष संख्या को जोड़कर उसको ३ से गुणा करके ५ जोड़कर १५ के भाग देने से जो शेष बचे वह आय। और लब्धि को ३ से गुणा करके ५ जोड़कर १५ के भाग से जो शेष बचे उतना उस शाकवर्षमें व्यय समझना चाहिए।

ग्रहों के वर्षमान विंशोत्तरी सू. ६, चं. १०, मं. ९, बुध. १७ बृहस्पति १६, शुक्र २०, शनि १९ वर्ष। अष्टोत्तरी सू. ६, चं. १५, मं. ८, बु. १७, श. १०, बृ. १९, रा. १२, शु. २१ वर्ष।

उदाहरण- शाके २८८२ में वर्षश चन्द्र है, चन्द्र की विंशोत्तरी वर्ष संख्या १० और मेषराशि का स्वामी मंगल है उसकी वर्ष संख्या ७ दोनों के योग १७ को ३ से गुणा कर ५ जोड़ने से ५६ इसमें १५ के भाग देने से लब्धि ३ और शेष ११ यह आय हुआ, तथा लब्धि ३ को ३ से गुणा करने से ९ इसमें ५ जोड़कर १५ से तष्टित करने से १४ यह व्यय हुआ। इसी प्रकार अन्य राशियों के स्वामी के आय व्यय समझना चाहिये।

तथा अष्टोत्तरी मत से वर्षेश चन्द्र की वर्ष संख्या १५ में, मेष के स्वामी मंगल की अष्टोत्तरी वर्ष संख्या ८ जोड़ने से २३ इसको ३ गुणा करके ५ जोड़ने से ७४ इसको १५ से भाग देने से लब्धि ४, शेष १४ यह आय हुआ। तथा लब्धि ४ को ३ से गुणा करके

५ जोड़ने से १७ इसमें १५ के भाग देने से शेष २ यह व्यय हुआ। इसी प्रकार वृष आदि राशियों के आय व्यय अपने-अपने स्वामी ग्रह और वर्षेश की संख्या समझना चाहिये।

अथ क्षुधा विश्वा जानने का प्रकार—

शाकं चतुर्गुणं कृत्वा सप्तभिर्भागमाहरेत्।
शेषं द्विघ्नं त्रिभिर्युक्तं प्रोक्तं विश्वाख्यमादिभिः।।
क्षुधा तृषा तथा निद्रा चालस्यं चोद्यमस्तथा।
शान्तिः क्रोधस्तथा दम्भो लोभो मैथुनमेव च ।।
ततस्तु रसनिष्पतिः फलनिष्पत्तिरेव च।
उत्साहः सर्वलोकानां ज्ञादव्यं निश्चितं बुधैः।।

शाक संख्या को ४ से गुणा करके गुणनफल में ७ के भाग देकर लब्धि को पृथक रखना शेष को २ से गुणाकर ३ जोड़ने में क्षुधाका विंशोपक समझना। पुनः पृथक् रक्खे हुए लब्धिको शाके मानकर पूर्वोक्त क्रिया करने से क्रम से तृषा आदि (निद्रा, आलस्य, उद्यम, शान्ति, कोध, दम्भ, लाभ, मैथुन, रमानिष्पत्ति, फलनिष्पत्ति, उत्साह) के विंशोपक होते हैं

उदाहरण--शाके १८८२ को ४ से गुणा करने मे ७५२८ इसमें ७ के भाग देने से लब्धि १०७५ शेष ३ को २ से गुणा करके ३ जोड़ने से ९ यह क्षुवा का विंश पक हुआ। पुनः लब्धि १०७५ को ४ से गुणा करने से ४३०० इसमें ७ के भाग देकर लब्धि ६१४ शेष २ को २ से गुणा कर ३ जोड़ने से ७ तृषा का विंशोपक हुआ। एवं द्वितीयादि लब्धि से क्रिया करने से निद्रा १५, आलस्य ३, उद्यम ७, शान्ति ५, क्रोध ५, दम्भ ५, लोभ ३, मैथुन १५ रसनिष्पत्ति ९ फलनिष्पत्ति १३, उत्साह ११ ये त्रयोदश विंशोपक हुए।

उद्भिज्जदि विंशोपक—

शकः पञ्चमिः सप्तभिर्गोभिरीशैश्चतुर्थं हयश्चाष्ट-भक्तावशिष्टम्।
द्विनिघ्न त्रिभिर्युक्तमुद्भिज्जरायुजाण्डजस्वेदजानां हि विंशोपकाःस्युः

शाक संख्या को चार स्थान में रखकर क्रम से ५,७,९,११ से गुणा करके पृथक् पृथक् ८ के भाग देने से शेषोंको २ से गुणा करके ३ जोड़ने से क्रमशः उद्भिज, जरायुज, अण्डज और स्वेदज के विंशोपक होते हैं।

उदाहरण-शाके १८८२ को ५ गुणा करने से ९४१० इसमें ८ के भाग देने से शेष २ को २ से गुणा कर ३ जोड़ने से ७ यह उद्भिज्ज का विंशोपक हुआ। एव जरायुज १७, अण्डज ७, स्वेदज १७ हुए।

रोहिणीवास और उसका फल—

मेषार्कदिनभादृक्षद्वयमब्धौ द्वयं तटे।
एकं गिरौ द्वयं सन्धौ चतुर्दिक्षु तथा न्यसेत्।।
साभिजिच्च क्रमेणैवं फलं यत्र तु रोहिणी।
अतिवृष्टिः समुद्रे स्यात् तटे ज्ञेयमवर्षणम्।।
गिरौ सन्धौ खण्डवृष्टिरित्याहुः पूर्वसूरयः।

मेषार्क संक्रान्ति जिस दिन हो उस दिन जो चान्द्र (दैनिक) नक्षत्र हो उस नक्षत्र से क्रमशः-२ समुद्र में, २ तट में, १ पर्वत में और २ सन्धि में एवं पुनः पुनः अभिजित् सहित नक्षत्रों को रक्खे, जिस स्थान में रोहिणी पड़े उसका फल समझना चाहिये। यथा रोहिणी यदि समुद्र में पड़े तो अतिवृष्टि, तट में पड़े तो अवृष्टि, पर्वत और सन्धि में पड़े तो खण्ड वृष्टि समझना चाहिये।

उदाहरण- शाके १८८२ में मेषार्क संक्रान्ति के दिन स्वाती नक्षत्रहै अतःस्वाती से क्रम से-नक्षत्रों के न्यास करने से रोहिणी तट में पड़ी इसलिये १८८२ में वृष्टि अल्प होगी ऐसा कहना। नीचे नक्षत्रों का न्यास देखिए।

समुद्र	तट	पर्वत	सन्धि
स्वाती	विशाखा	अनुराधा	ज्येष्ठा
मूल	पू. षा.	उ. षा.	अभिजित्
श्रवण	घनिष्टा	शतभिषा	पू. भा.
उ. षा.	रेवती	अश्विनी	भरणी
कृत्तिका	रोहिणी		

इति पञ्चाङ्ग विषय।

विशेष—

बालकों के उपकारार्थ सोदाहरण विंशोत्तरी दशाज्ञान प्रकार—

जन्म नक्षत्र से जन्मकालिक दशा जानने का चक्र—

	कृ.	रो.	मृ.	आ.	पुन.	पुष्य	आश्ले.	म.	पू.फा
नक्षत्र	उ.फा.	ह.	चि.	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू.षा.
	उ.षा.	श्र.	ध.	श.	पू.भा.	उ.भा.	रे.	अश्वि.	भ.
दशापति	सूर्य	चन्द्र	मंगल	राहु.	गुरु	शनि	बुध	केतु	शुक्र
वर्ष	६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२०

नक्षत्रों से दशापति और उनके वर्षों के ज्ञानार्थ पद्य—

कृत्तिकातः समारभ्य त्रिरावृत्य दशाधिपाः।
सूर्येन्दु-कुज-राह्विज्य-शनि-ज्ञ-शिखि-भार्गवाः।।
दशासमाः क्रमादेषां षड् दशाऽश्वा गजेन्दवः।
नृपाला नवचन्द्राश्च नगचन्द्रा नगा नखाः।।

कृत्तिका से आरम्भ कर तीन आवृत्ति करके नवां ग्रह के क्रम से-सूर्य. चन्द्र. मङ्गल. राहु, बृहस्पति, शानि, बुध, केतु, शुक्र ये दशाधिपति होते है। तथा क्रम से इन ग्रहों के ६, १०, ७, १८, १६, १९, १७, ७, २०, वर्ष दशामान हैं जो उपरोक्त चक्र में स्पष्ट है।

जन्मकालिक वर्तमान दशा के भुक्त और भोग्य वर्षानयन प्रकार—

दशामानं भयातंघ्नं भभोगेन हृतं फलम्।
मुक्तं वर्षादिकं ज्ञेयं भोग्यवशात् तथा।।

जिस ग्रह की दशा में जन्म हो उस ग्रह की दशावषसंख्या को भयात से गुणाकर गुणनफल में भभोग के भाग देने से लब्धि वर्षादि दशा का भुक्तमान होता है, उसको दशा वर्ष की संख्या में घटाने से (जन्मकाल से आगे) भोग्य होता है।

अथवा- भयात को भभोग में घटाने से भभोग्य होता है। उससे दशावर्ष संख्या को गुणाकर गुणनफल में भभोग से भाग देने से लब्ध वर्षादि वर्तमान दशा का भोग्य (जन्मकाल से आगे का मान) होता है।

इसकी युक्ति (उपपत्ति) यदि सम्पूर्ण भभोगघटी में ग्रह की दशा संख्या होती है तो भयात घटी में क्या? इस प्रकार त्रैराशिकसे भुक्तवर्षादि $= \frac{\text{दशासंख्या} \times \text{भयातघ}}{\text{भभोगघ}}$

इसी प्रकार भभोग घटी के अनुपात से भोग्यवर्षादि $= \frac{\text{दशावरर्ष सं.} \times \text{भभोग्यध}}{\text{भभोगध}}$

उदाहरण- शाके १८४८ संवत् १९८३ माघशुक्ल एकादशी शनिवार में किसी का जन्म है। उस समय मृगशिरा नक्षत्र के भयात = ४८।१५।।भभोग ५९।३०।५ भभोग्य १।१५ स्पष्ट सूर्य = ९।२९।२०।१३ है। तो उपरोक्त पद्यानुसार मृगशिरा नक्षत्र में मङ्गल दशाधिप हुआ। इसलिये मङ्गल की दशावर्ष संख्या ७ को भयात ५८।१५ के एकजातीय २।९५ से गुना कर २४४६५ इसमें भभोग ५९।३० के एकजातीय ३५७० से भाग देने से लब्धि वर्षादि, ६।१०।७।३।३२ दशा का भुक्त हुआ, इसको दशावर्ष संख्या ७ में घटाने से दशा का भोग्य वर्षादि = ०।१।२२।५६।२७।

अथवा — भभोग्य १।१५ के एक जातीय ७५ से दशावर्षसंख्या ७ को गुना करने से ५२५ इसमें भभोग ५९।३० के एकज़ातीय (पल) ३५७० से भाग** देने से लब्धि वर्षादि ०।२२।५६।२८ दशा में भाग पूर्वतुल्य ही आया।

अन्तर्दशा बनाने का सरल प्रकार—

दशाब्दाः स्वस्वमानेन हताः खार्कोद्धृताः फलम्।
अन्तर्दशा भवेदेवं प्रत्यन्तर-दशादयः।।

(जिस ग्रह की महादशा में प्रत्येक ग्रहों की अन्तर्दशा जानना हो) उस ग्रह की दशावर्ष संख्या को अलग-अलग प्रत्येक ग्रहों की दशा संख्या से गुनाकर गुणनफल में १२० के भाग देने से लब्धि वर्षादि तत्तद्ग्रह की अन्तर्दशा का मान होता है। इस प्रकार अन्तर्दशापर से प्रत्यन्तर्दशा तथा प्रत्यन्तर पर से विदशा, विदशापर से उपदशाका आनयन होता है।

ग्रह	म.	रा.	गु.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.
वर्ष		१८	१६	१९	१७	७	२०	६	१०
मा	१								
दि.	२२								
घ.	५६								
ष.	५८								
शाके.									
१८४८	१८४८	१८६६	१८८२	१९०१	१९१८	१९३५	१९५५	१९६१	१९७१
सूर्य									
९	११	११	११	११	११	११	११	११	११
२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२
२०	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६
१३	४१	४१	४१	४१	४१	४१	४१	४१	४१

इसकी उपपत्ति (युक्ति) यह है कि-प्रत्येक ग्रह की दशा में ९ नव ग्रहों की अन्तर्दशा होती है, वह भी अपने-अपने वर्ष के अनुसार होनी चाहिए, इसलिए सब ग्रह के दशावर्षयोग

* 'लग्नपत्रप्रदीप' के प्रथम प्रकाश में भयात आदि बनाना देखिये।

** 'भाग देने में वर्ष शेष को १२ से गुना कर मास, मास शेष को ३० से गुना कर दिन. दिन शेष को ६० से गुनाकर घटी बनाकर भाग देने से मासादि लब्धि होती है।

(१२०) में इष्ट दशामान तो अलग-अलग ग्रहों की वर्षसंख्या में क्या, इस अनुपात से

इष्टदशा में अन्र्दशा मान = $\frac{\text{इष्ट दशा} \times \text{ग्रहदशा}}{१२०}$ सिद्ध होता है।

उदाहरण—रवि की दशा में रव्यादि सब ग्रहों की अन्तर्दशा साधन करना है तो रवि की दशा वर्ष संख्या ६ को रवि की वर्ष संख्या ६ से गुनाकर गुणनफल ३६ में १२० के भाग देने से वर्ष = ०। वर्ष शेष ३६ को १२ से गुनाकर गुणनफल ३६×१२ = (४३२ में १२ के भाग देने से लब्ध मास = ३। मास शेष ७२ को ३० से गुनाकर २१६० इसमें १२० के भाग देने से लब्धि दिन १८। इस प्रकार रवि की दशा में रवि की अन्तर्दशा वर्षादि ०।३।१८।०।०।।

इसी प्रकार रवि की दशा को चन्द्रादि ग्रह की दशासंख्या से गुना कर १२० के भाग दकर वर्षादि अन्तर्दशा होती है। जो बालकों के उपकारार्थ आगे चक्र से स्पष्ट है।

अथवा—सब ग्रह की दशा के योग १२० वर्ष में दशा का मान तो १ वर्ष से क्या?

इस अनुमान से एक वर्षसम्बन्धी अन्तर्दशा ध्रुवक = $\frac{\text{दशासंख्या} \times १}{१२९}$ वर्षादि हुआ। इसका

एक वर्ष सम्बन्धी दिन ३६० से गुना करने से दिनादि अन्तर्दशा ध्रुवक = $\frac{\text{दशासंख्या} \times ३६०}{१२}$

= $\frac{\text{दशासंख्या} \times ३}{१}$, इससे सिद्ध हुआ कि दशा वर्षसंख्या को ३ से गुना करने से १ वर्ष सम्बन्धी अन्तर्दशा मान दिनादि होता है, उसको ग्रहों की अपनी-अपनी दशावर्षसंख्या में गुना करने से अन्तर्दशा का प्रमाण होगा।

अन्तः अभ्यासार्थ श्लोक—

त्रिघ्नं दशासमामानं दिनाद्यं ध्रुवकं स्मृतम्।
निघ्नं स्वस्वदशाब्दैस्तद् भवेदन्तर्दशामितिः।।

उदादशा— जैसे सूर्य की दशा वर्ष संख्या ६ को ३ से गुना करने से ध्रुवकदिन - १८। इसको सूर्य की दशा संख्या से गुना करने से सूर्य की अन्तर्दशा दिनादि १०८ इसमें ३० के भाग देकर मासादि ३।१८। मास के स्थान में १२ से अधिक हो तो १२ के भाग देकर वर्षादि बना लेना। यहाँ सूर्य की दशा में सूर्य की अन्तर्दशा के मास १२ से कम हैं अतः सूर्य की दशा में सूर्यकी अन्तर्दशा के मास १२ से कम है अतः सूर्य की दशा में सूर्य की अन्तर्दशा वर्षादि $\frac{\text{व.पा.दि.घ.प.}}{०।३।१८।०।०}$ यह पूर्व विधि से बनाये हुए के तुल्य ही हुआ।

इस प्रकार सूर्य की ध्रुवा १८ को चन्द्र की दशावर्षसंख्या १० से गुना कर दिनादि चन्द्रको अन्तर्दशा १०८ इसमें ३० के भाग देकर मासादि ०।६।०।०।० अतः सूर्य की

दशा में चन्द्र की अन्तर्दशा वर्षादि ०।६।०।०।० एवं ध्रुवक की मंगलादिक की दशासंख्या से गुनाकर अन्तर्दशा मान सिद्ध होते हैं। जो नीचे चक्र में स्पष्ट हैं।

सूर्य की दशा में सूर्यादि नवग्रहों की अन्तर्दशा—

ध्रुव	ग्रह	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.
०	व.	०	०	०	०	०	०	०	०	१
०	मा.	३	६	४	१०	९	११	१०	४	०
१८	दि.	१८	०	६	२४	१८	१२	६	६	०

उक्त रीति के अनुसार चन्द्रमा की दशा १० को ३ से गुना कर दिनात्मक ध्रुव = ३०। इसमें ३० से भाग देने से १ मास इसको अपनी-अपनी दशा की संख्या से गुना करने से—

चन्द्र की दशा में चन्द्र आदि ग्रहों की अन्तर्दशा—

ध्रुव	ग्रह	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.
०	व.	०	०	१	१	१	१	०	१	०
१	मा.	१०	७	६	४	७	५	७	८	६

एवं मङ्गल की दशा में मङ्गलादि ग्रहों की अन्दर्दशा—

ध्रुव	ग्रह	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.
०	व.	०	१	०	१	०	०	१	०	०
०	मा.	४	०	११	१	११	४	२	४	७
२१	दि.	२७	१८	६	९	२७	२७	०	६	०

राहु की दशा में राहु आदि की वर्षादि अन्तर्दशा।

ध्रुव	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	
०	२	२	२	२	१	३	०	१	१	व.
१	८	४	१०	६	०	०	१०	६	०	मा.
२४	२७	२४	६	१८	१८	०	२४	०	१८	दि.

बृहस्पति की दशा में अन्तर्दशा।

ध्रुव	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	
०	२	२	२	०	२	०	१	०	२	व.
१	१	६	३	११	८	९	४	११	४	मा.
१८	१८	१२	६	६	०	१८	०	६	२४	दि.

शनि की दशा में अन्तर्दशा।

धु.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	
०	३	३	१	३	१	१	१	२	२	व.
१	०	८	१	२	११	७	१	१०	६	मा.
२७	३	०	९	०	१२	०	९	६	१२	दि.

बुध की दशा में अन्तर्दशा।

धु.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	
०	२	०	२	०	१	०	२	२	२	व.
०	४	११	१७	१०	५	११	६	३	८	मा.
२१	२७	२७	०	६	०	२७	१८	६	९	दि.

केतु की दशा में अन्तर्दशा।

धु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	
०	०	१	०	०	०	१	०	१	०	व.
०	४	२	४	७	४	०	१०	१	११	मा.
२१	२७	०	६	०	२७	१२	६	९	२७	दि.

शुक्र की दशा में अन्तर्दशा।

१०धु.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	श .	बृ.	बु.	श.	
०	३	१	१	१	३	३	२	२	१	व.
२	४	०	८	२	०	२	८	१०	२	मा.

इति दशान्तर्दशा।

मिथिलादेशमध्यस्थ-चौगमाग्रामवासिनः।
ज्यौतिषाचार्यस्य श्रीसीतारामशर्मणः।।
तनथेनेन्दुनागाष्ट-शशितुल्ये शकाब्दके।
रूपनारायणेनायं ग्रन्थो भाषार्थसंयुतः।।
बृहज्जौतिषसाराख्यः कार्तिके बहुले दले।
त्रयोदश्यां गुरोवरि निर्मितः पूर्णतां गतः।।

।।इति बृहज्ज्यौतिवसारः समाप्तः।।